अंक ७१-८४] [आषाढ़-१९६९ श्रावण १९७०

ऋग्वेद संहिता

(वैदिकजीवनव्याख्यायुता)

प्रथम मण्डल सूक्त १२० से सूक्त १४० तक
प्रथम अष्टक, अध्याय ८ वर्ग २२ से
द्वितीय अष्टक, अध्याय २ वर्ग ७ तक

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद
टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर
व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलतान निवासी पं० शङ्करदत्तशास्त्री
की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने
सम्पादन किया।

लाहौर
पन्जाब एकानोमीकल यन्त्रालय में मिष्टर लाला
जालमन के अधिकार से छपा।

अंक ७१-७२] [आषाढ दूसरा, श्रावण १९६९

ऋग्वेद संहिता

(वैदिकजीवनव्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलतान निवासी पं० शङ्करदत्तशास्त्री की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने सम्पादन किया।

लाहौर
पञ्जाब एकानोमीकल यन्त्रालय में प्रिंटर लाला लालमन के अधिकार से छपा।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २)
पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)
१० अंकों का मल्य ११)

ऋ०मं०१ सू०१२० ।

अश्विनौदेवते, औशिजोदैर्घतमसः कक्षीवानृषिः । विनियोगः-

१—९ । आदितो नवर्चो घर्माभिष्टवे विनियुक्ताः (आ० ४।६।३) शिष्टाणां लैङ्गिकः ।

सूक्त का भावार्थ ।

हे अश्विनो ! आप को कौनसा यज्ञ रचता है ? कौन (ऐसा भाग्यशाली है जो) आप को प्रसन्न करने में तत्पर है, (मुझ जैसा) अज्ञ कैसे आप की सेवा करे ? । १ । अज्ञानी इन्हीं विद्वान (अश्विनों) से (स्तुति और पूजा करने की विधि को) पूछे, इनसे दूसरा (अर्थात् मनुष्य) अज्ञ है, सचमुच मरणधर्मा (मनुष्य) के लिये यही कोट (की न्याईं आश्रय दाता) हैं । २ । ऐसे विद्वानों को हम बुलाते हैं, वे आप हम को स्तुति का भजन बतावें * आप का भक्त हवि देता हुआ आप को अत्यन्त नमस्कार करता है । ३ । हे तेजस्वी (अश्विनो !) मैं बालक की न्याईं देवताओं से अद्भुत वषट्कार से † किये हुए (होम का तत्व) पूछता हूं, (हे देवो !) आप दोनों (हम से) अधिक बल वाले से हमारी रक्षा करें, प्रचण्ड (शत्रु) से हमें बचावें ।४। हे अश्विनो ! जो वाणी भृगु जैसे (महात्मा)

---

* अर्थात् स्तुति के भजन बनाने की शक्ति हम को देवें, जैसे मंत्रद्रष्टा ऋषियों को दी थी ।

† दर्श पौर्णमास आदि इष्टियों में मंत्र पढ़ कर अन्त में 'वौश्वट्' ऐसा बोल कर अग्नि में आहुति डाली जाती है । इसका नाम वषट्कार है ॥

घोषा के पुत्र * से सजती है और जिस वाणी से पज्रवंशी (कक्षीवान) आप को पूजता है, वह वाणी सफल हो, जैसे उद्योगी विद्वान (सफलमनोरथ होता है) ।५। हे अश्विनो! आप मुझ पंछी † के स्तोत्र को सुनो, सचमुच मैं ही आप के लिये कूका हूं, हे सौन्दर्य के स्वामी ! आप (अन्धों को) आंखें देने वाले हो ।६। आप ही महत्त्व के देने वाले हो, आप ही महत्त्व के छीनने वाले हो, हे धन वालो, ऐसे आप हमारे सुरक्षक बनो और पाप चींतने वाले चोर से हम को बचाओ ।७। हमें किसी वैरी के ताईं मत सौंपो, स्तनों द्वारा पालने वाली हमारी गौएँ बछड़ों से वियुक्त होकर घर से बाहर किसी अयोग्य स्थानमें न जावें ।८। आपके भक्त अपने मित्र-वर्ग के पोषण के लिये आप को दोहन करें, आप हमें बलयुक्त धन (की प्राप्ति) के लिये योग्य करें, आप हमें गौओं से युक्त अन्न (की प्राप्ति) के लिये योग्य बनावें ।९। मैंने बहुत अन्न के स्वामी अश्विनों के रथ को जो बिना घोड़ों के चलता है पालिया है, मैं उस (रथ) से बहुत कामनाएँ प्राप्त करूंगा ।१०। हे धन से पूर्ण (रथ) ! तू मुझे विस्तारयुक्त कर, इस सुख के भंडार रथ को (अश्विनदेव) मनुष्यों की ओर सोम पीने के स्थान में ले जाते हैं ।११। अब मैं (दुष्ट) स्वप्न से खिन्न हूं और उस धनी से जो भोग नहीं करता, ये दोनों शीघ्र नष्ट होंगे ॥ १२॥

---

* घोषा कक्षीवान की पुत्री और ऋ० १०।३९,४० की द्रष्टा ऋषि है, घोषा का पुत्र सुहस्त्य ऋ० १०,४१ का द्रष्टा है ।

† पज्रोद्भव अपने आप को पंछी कहते हैं, जिस की कूक यह स्तोत्र है ।

अश्विनौदेवते निचृद्गायत्रीछन्दः ।८।७।८

काराधद्धोत्राऽश्विनावां कोवां जोषउभयोः । कथाविधात्यप्रचेताः ॥ १ ॥

का	कः	कौन
राधत्	रोचते (लेटयडागमः)	भाता है
होत्रा	यज्ञः (निघं० ३।१७)	यज्ञ
अश्विना	ह अश्विनौ !	हे अश्विदेवो
वाम्	युवाभ्याम्	तुम दोनों के लिये
कः	कः	कौन
वाम्	युवयोः	तुम्हारे
जोषे	प्रीणने	प्रसन्न करने में

उभयोः	उभयोः	दोनों के
कथा	कथम् (प्रकारवचने था प्रत्ययः किमःकादेशश्च)	कैसे
विधाति	परिचरेत् (निघं०३।५,लेट्यडागमः)	सेवा करे
अप्रऽचेताः	अज्ञः	न जानने वाला

संस्कृतार्थः।

हे अश्विनौ ! को यज्ञः युवाभ्यां रोचते ? उभयो-र्युवयोः प्रीणने कः (तत्परः?,) अज्ञः (युवाम्)कथं परिचरेत् ? ॥ १ ॥

भावार्थः।

हे अश्विनौ ! कौनसा यज्ञ आपको भाता है ? आप को प्रसन्न करनेमें कौन (तत्पर है?)न जानने वाला कैसे (आप की) सेवा करे ? ॥१॥

अश्विनौदेवते त्रिराट्ककुप्छन्दः ।८।११।७

विद्वांसाविद्दुरःपृच्छे दविद्वानि-

त्थाऽपरो अचेताः । नूचिन्नुमर्तै अक्रौ ॥ २ ॥

विद्वांसौ	विद्वांसौ	दोनों विद्वानों को
इत्	एव	ही
दुरः	द्वाराणि,स्तुति-परिचरणयो-रुपायान् इत्यर्थः	द्वारों को अर्थात् स्तुति और पूजा के उपायों को
पृच्छेत्	पृच्छेत्	पूछे
अविद्वान्	अजानन्	न जानता हुआ
इत्था	आभ्याम्	इन दोनों से
अपरः	अन्यः	दूसरा
अचेताः	अज्ञः	अज्ञ
नु	नु+	—

चित्	नु+चित्, किं न	क्या नहीं
नु	खलु	सचमुच
मर्ते	मरणधर्मणे (क्विप्)	मरण धर्मी के लिये
अक्रौ	प्राकारौ (निघं०४।३)	कोट

संस्कृतार्थः ।

अजानन् (मनुष्यः एतौ) विद्वांसौ एव स्तुति-पूजनयोरुपायान् पृच्छेत्, आभ्याम् अन्यः अज्ञः (अस्ति,) किम् (एतौ) मरणधर्मणे प्राकारौ न ? ॥२॥

भावार्थः ।

न जानता हुआ (मनुष्य इन) विद्वानों से ही स्तुति और पूजा के उपायों को पूछे इनसे दूसरा अज्ञानी (है,) क्या (ये) मरणधर्मी के लिये कोट नहीं (हैं ?) ॥ २ ॥

अश्विनौदेवते काविराट्छन्दः । ९।१२।९

ताविद्वांसाहवामहेवां तानोवि-

द्वांसामन्मवोचेतमद्य । प्राचंद्दय-

मानोयुवाकुः ॥ ३ ॥

ता	तौ	उन दोनों को
विद्वांसा	विद्वांसौ (विभक्तेरात्वम्)	विद्वानों को
हवामहे	आह्वयामः	हम बुलाते हैं
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
ता	तौ	वे दोनों
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
विद्वांसा	विद्वांसौ	विद्वान
मन्म	स्तुतिगीतम् (भा० को०)	स्तुति के भजन को
वोचेतम्	कथयतम्	बताओ

अद्य	अद्य	आज
प्र	प्र +	—
आर्चत्	प्र+आर्चत्, सुतरां नमस्करोति (लडर्थेलङ्)	अत्यन्त नमस्कार करता है
दयमानः	(हविः) ददानः	(हवि) देता हुआ
युवाकुः	युवां कामयमानः (कमेर्डुः, प्रत्यय;अविभक्तावपि व्यत्ययेन युवादेशः आत्वंच)	आपकी कामना करता हुआ

संस्कृतार्थः।

विद्वांसौ तौ युवाम्(वयम्)आह्वयामः,तौ विद्वांसौ (युवाम्) अस्मभ्यं स्तुतिगीतं कथयतम्, अद्य युवयोरभिलापुकः (हविः) प्रयच्छन्(सन्) सुतरां नमस्करोति ॥३॥

भावार्थः।

उन आप विद्वानों को हम बुलाते हैं, वे विद्वान आप हमारेलिये स्तुति के गीत को बनावें, आज आपका अभिलाषी (हवि) देता हुआ खूब नमस्कार करता है ॥ ३ ॥

अश्विनौदेवते नष्टरूपाछन्दः।९।१०।१३।

विपृच्छामिपाक्यान्नदेवान्
वषट्कृतस्याऽद्भुतस्यदस्रा। पातंच
सह्यसोयुवंचरभ्यसोनः ॥ ४ ॥

वि	वि+	–
पृच्छामि	वि+पृच्छामि	पूछता हूं
पाक्या	बालः (सुपामितिविमक्तेर्डा)	बालक
न	इव	की न्याईं
देवान्	देवान्	देवताओं को
वषटऽकृतस्य	वषट्कृतस्य	वषट्कार किये हुए के
अद्भुतस्य	अद्भुतस्य	अद्भुत के

दस्रा	हे उग्रौ !	हे उग्रो
पातम्	रक्षतम्	बचाओ
च	(पूरणः)	—
सह्यसः	बलवत्तरात्	अधिक बलवानसे
युवम्	युवाम्	तुम दोनों
च	च	और
रभ्यसः	प्रचण्डात्	प्रचंडःसे
नः	अस्मान्	हम को

संस्कृतार्थः ।

हे उग्रौ ! (अश्विनौ !) अहं देवान् बाल इव अद्भुतस्य वषट्कृतस्य (होमस्य विषये) पृच्छामि, युवाम् अस्मान् बलवत्तरात् प्रचण्डाच्च (मनुष्यात्) रक्षतम् ॥ २ ॥

भावार्थः ।

हे उग्र (अश्विनौ !) मैं देवताओं से बालक

की न्याईं अद्भुत वषट्कार किये हुए (होम के विषय में) पूंछता हूं, आप हम को अधिक बलवाले से और प्रचंड (मनुष्य) से बचावें॥ ४ ॥

यज्ञ में जो वषट्कार उच्चारण करके हवि दी जाती है, उसका रहस्य बालक बन कर देवताओं से पूछने से ही समझ में आ सकता है युक्तियों से नहीं।

अश्विनौदेवते तनुशिराछन्दः ।११।११६

प्रयाघोषेभृगवाणेनशोभे यया वाचायजतिपज्रियोवाम् । प्रैषयुर्न विद्वान् ॥५॥

प्र	प्र-(गच्छतु)	आगे बढे
या	या	जो
घोषे	घोषायाः पुत्रे (सा० भा०)	घोषा के पुत्र में
भृगवाणे	भृगुरिवाऽऽचरणं कुर्वाणे (क्विंपिसति न्याययेन लटःशानच्)	भृगुकी न्याईं आचरण करनेवालेमें

न	इव	मानो
शोभे	शोभते ('लोपस्त' इति तलोपः)	शोभता है
यया	यया	जिस से
वाचा	वाचा	वाणी से
यजति	यजति	यजन करता है
पज्रियः	पज्रवंशीयः	पज्रवंशी
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
प्र	(पूरणः)	–
इषऽयुः	उद्युक्तः	उद्योगी
न	इव	की न्याईं
विद्वान्	विद्वान्	विद्वान्

संस्कृतार्थः ।

या (वाणी) भृगुरिवाऽऽचरणं कुर्वाणे घोषायाः

पुत्रे शोभते इव, यया (च) वाचा पज्रवंशीयो युवां यजति, (सा वाणी) उद्युक्तो विद्वान् इव प्र-(भवतु) ॥ ५ ॥

भावार्थः ।

जो (वाणी) भृगु की न्याईं आचरण करने वाले घोषा के पुत्र में मानो शोभित होती है (और) जिस वाणी से पज्रवंशी आपका यजन करता है (वह वाणी) उद्योगी विद्वान की न्याईं प्रभाव युक्त हो॥५ ॥

पज्रवंशी कक्षीवान कहते हैं कि जैसे उद्योगी विद्वान अपने कर्मों में कृतकृत्य होता है इसी प्रकार मेरी वाणी सिद्ध-मनोरथ हो ।

अश्विनौदेवते, अक्षरसङ्ख्ययोष्णिकूछन्दः।१०।१०।८

श्रुतंगायत्रंतकवानस्या ऽहंचि-

द्धिरिभाश्विनावाम् । आक्षीशुभ-

स्पतीदन् ॥ ६ ॥

श्रुतम्	श्रुणुतम् (विकरणस्य लुक्)	सुनो

गायत्रम्	स्तोत्रम् (सा० भा०)	स्तोत्र को
तकवानस्य	पक्षिणः (भा० को०)	पंछी के
अहम्	अहम्	मैं
चित्	एव	ही
हि	खलु	सचमुच
रिरिभ	कूजितवानस्मि (रेभृशब्दे)	कूका हूं
अश्विना	हे अश्विनौ !	हे अश्विदेवो
वाम्	युवाभ्याम्	तुम दोनों के लिये
आ	खलु	सचमुच
अक्षी०	चक्षुषी	नेत्रों को
शुभः	सौन्दर्यस्य (क्विप)	सौन्दर्य के

प्रती०	हे स्वामिनौ !	हे स्वामियो
दन्	दातारौ	देने वाले

संस्कृतार्थः ।

हे सौन्दर्य्यस्य स्वामिनौ ! अश्विनौ ! (युवाम्) पक्षिणः (मम) स्तोत्रं शृणुतम्, अहमेव युवाभ्यां कूजितवानस्मिखलु,(युवामन्धेभ्यः) चक्षुषी दातारौ खलु (स्थः) ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे सौंदर्य के स्वामी अश्विनो ! आप (मुझ)पक्षी के स्तोत्र को सुनो,सचमुच मैं ही आपके लिये कूका हूं, आप सचमुच (अंधों को) आंखें देने वाले हो ॥ ६ ॥

अश्विनौदेवते विष्टारबृहतीछन्दः ।८।१०।१०।८

युवंह्यास्तंमहोरन् युवंवायन्निरततंसतम् । तानोवसूसुगोपास्यातं पातंनोवृकादघायोः ॥ ७ ॥

युवम्	युवाम्	तुम दोनों
हि	खलु	सचमुच
आस्तम्	आस्तम् (असभुवि)	हुए हो
मह:	महत्त्वस्य	महत्त्व के
दन्	रातारौ (रादाने'दन्' इतिय-दस्य प्रक्रिया, सुपामि-ति विभक्तेःसु;)	देने वाले
युवम्	युवाम्	तुम दोनों
वा	वा	अथवा
यत्	यौ (सुपामिति विभक्ते-र्लुक्)	जो
निःऽअततं सतम्	निराकर्तारौ आस्तम् (तसि कम्पने धा०को०)	हटाने वाले हुए हो

ता	तौ (विभक्तेरात्वम्)	वे दोनों
नः	अस्माकम्	हमारे
वसू०	हे धनवन्तौ! (आ० को०)	हे धनवालो
सुऽगोपा	सुरक्षकौ (विभक्तेरात्वम्)	अत्यन्त रक्षक
स्यातम्	भवतम्	हों
पातम्	रक्षतम्	रक्षा करो
नः	अस्मान्	हम को
वृकात्	चौरात् (निघं ३।२४]	चोर से
अघऽयोः	पापमिच्छतः (क्यचि सत्युःप्रत्ययः)	पापकी कामना वाले से

संस्कृतार्थः ।

हे धनवन्तौ ! अश्विनौ ! (यौ) युवां महत्त्वस्य दातारौ खलु आस्तम्, यौ वा युवां निराकर्तारौ आस्तम्, तौ (युवाम्) अस्माकं सुरक्षकौ भवतम्, पापमिच्छतः चौरात् (च) अस्मान् रक्षतम् ॥ ७ ॥

भापार्थः।

हे धनवाले (अश्विनो!) (जो) आप सचमुच महत्त्व के देने वाले हो, अथवा जो आप हरने वाले हो, वे आप हमारे अत्यन्त रक्षक बनो (और) हमें पापी चोर से बचाओ ॥ ७ ॥

अश्विनौदेवते कृतिश्छन्दः । १२।१२।८

माकस्मैधातमभ्यमित्रिणे नो माकुत्रानोगृहेभ्योधेनवोगुः । स्तनाभुजोअशिश्वीः ॥ ८ ॥

मा	मा	मत
कस्मै	कस्मै	किसी के लिये
धातम्	अभि+धातम्, अवस्थापयतम्	सौंपो
अभि	अभि+	—

अमित्रिणे	शत्रवे	शत्रु के ताईं
नः	अस्मान्	हम को
मा	मा	मत
अकुत्र	अयोग्यस्थानम्	अयोग्य स्थान को
नः	अस्माकम्	हमारी
गृहेभ्यः	गृहेभ्यः	घरों से
धेनवः	गावः	गौएँ
गुः	गच्छन्तु (लोडर्थे लुङ् अडभावः	जावें
स्तनऽभुजः	स्तनैर्भुञ्जन्ति पालयन्तीति ता (भुजपालने क्विप्)	स्तनों से पालने वालीं
अशिश्वीः	शिशुभिर्वियुक्ताः (सत्यः) (मत्वर्थीय ईकार)	बछड़ों से बिछड़ी (हुईं)

संस्कृतार्थः।

(हे अश्विनौ ! युवाम्) अस्मान् कस्मैचिद् शत्रवे माऽवस्थापतम्, स्तनैः पालयित्र्योऽस्मदीयाः गावो वत्सैर्वियुक्ताः (सत्यः) गृहेभ्यः (अन्यत्र) अयोग्यस्थानं मा गच्छन्तु ॥ ८ ॥

भाषार्थः।

हे (अश्विनो !) आप हमें किसी शत्रु के ताईं मत सौंपो,स्तनों से पालने वाली हमारी गौएं वछड़ों से विछड़ कर घरोंसे (दूसरी जगह) अयोग्य स्थान में न जावें॥ ८॥

अश्विनौदेवते विराट्छन्दः । ११।११।११

दुहीयन्मित्रधितयेयुवाकुराये

चनोमिमीतंवाजवत्यै । इषेचनो

मिमीतंधेनुमत्यै ॥ ९ ॥

दुहीयन्	दुह्युः (दुहेर्लिङि ह्रस्वरन्, छान्दसो रेफस्यपकारः)	दोहन करें

मि॒त्र॒ऽधि॑तये	मित्राणां पोषणार्थम् (डुधाञ् धारणपोषणयोः)	मित्रों के पालने के लिये
यु॒वा॒कु	युवां कामयमाना· (सुपामिति विभक्तेर्लुक्)	तुम्हारी कामना करने वाले
रा॒ये	धनाय	धन के लिये
च॒	च	और
नः॒	अस्मान्	हम को
मि॒मी॒तम्	योग्यान् कुरुतम्	योग्य करो·
वाज॑ऽवत्यै	बलयुक्ताय	बल से युक्त के लिये
इ॒षे	अन्नाय	अन्न के लिये
च॒	च	और
नः॒	अस्मान्	हम को

मिमीतम्	योग्यान् कुरुतम्	तैय्यार करो
धेनुऽमत्यै	गोभिर्युक्ताय	गौओं से युक्त के लिये

संस्कृतार्थः।

(हे अश्विनौ !) युवांकामयमानाः (स्तोतारः) मित्राणां पोषणार्थम् (युवाम्) दुह्युः, (युवाम्) अस्मान् बलयुक्ताय धनाय योग्यान्कुरुतम्, अस्मान् गोभिर्युक्तायाऽन्नाय (च) योग्यान्कुरुतम् ॥ ९ ॥

भाषार्थः।

(हे अश्विनो !) आपकी कामना करने वाले (स्तोता) मित्रों के पालने के लिये (आपको) दोहन करें, आप हमें बल से युक्त धनके लिये योग्य कर, (और) हमें गौओं से युक्त अन्न के लिये योग्य करें ॥ ९ ॥

अश्विनौदेवते गायत्रीछन्दः ।८।८।८

अश्विनोरसनंरथ मनश्वंवाजि-

नीवतोः । तेनाहंभूरिचाकन ।१०।

अश्विनोः	अश्विनोः	अश्विनों के
असनम्	प्राप्तवानस्मि	मैंने पा लिया है
रथम्	रथम्	रथ को
अनश्वम्	अश्वैर्विनैव गन्तुं समर्थम्	घोड़ों के बिना ही चलने वाल को
वाजिनीऽवतोः	बहुलान्नयोः	बहुत अन्नवालों के
तेन	तेन	उसके द्वारा
अहम्	अहम्	मैं
भूरि	प्रभूतम्	बहुत को
चाकन	कामये (कनी कान्तो लिटिरूपम्)	कामना करता हूं

संस्कृतार्थः।

(अहम्) बहुलान्नयोरश्विनोः अश्वैर्विनैव गन्तुं

समर्थं) रथं प्राप्तवानस्मि, तेनाऽहं प्रभूतम्(धनम्) कामये ॥ १० ॥

भावार्थः ।

मैंने बहुत अन्न वाले अश्विनों के घोड़ों से विना ही चलने वाले रथ को पा लिया है, उसके द्वारा मैं बहुत (धन) की कामना करता हूं ॥ १० ॥

जो अश्विनों का प्रकाशमय रूप है वही रथ है, उस को मैंने पा लिया है अर्थात उसका सहारा पकड़ लिया है ।

अश्विनौदेवते गायत्रीछन्दः ।८।८।८

अयंसमह्मातनूह्यातेजनाँअनु ।

सोमपेयंसुखोरथः ॥ ११ ॥

अयम्	अयम्	यह
समह	हे धनसहित ! (घस्य हत्वं छान्दसम्)	हे धन से युक्त
मा	माम्	मुझ को

तनु	विस्तारय	विस्तार युक्त कर
उह्याते	प्राप्यते (वह प्रापणे कर्मणि लेट्याडागमः दीर्घश्छान्दसः)	प्राप्त कराया जाता है
जनान्	जनान्	मनुष्यों को
अनु	प्रति	की ओर
सोमऽपेयम्	सोमपानयोग्यं स्थानम्	सोम पीने योग्य स्थान को
सुऽखः	सुखरूपः	सुखरूप
रथः	रथः	रथ

संस्कृतार्थः ।

हे धन सहित! (रथ!) अयम् (त्वम्)मां विस्तारय, (अयम्) सुखरूपो रथः (अश्विभ्याम्) जनान् प्रति सोमपानयोग्यं स्थानं नीयते ॥ ११ ॥

भावार्थः ।

हे धन से युक्त (रथ!) यह (तू)मुझे विस्तार

युक्त कर (इस) सुखरूप रथ को (अश्विन) मनुष्यों की ओर सोम पीने के योग्य स्थान में ले जाते हैं ॥ ११ ॥

अश्विनौदेवते गायत्रीछन्दः ।८।८।८।

अधस्वप्नस्यनिर्विदे ऽभुञ्जत-
श्चरेवतः । उभातावस्त्रिंनश्यतः ।
१२ ॥

अध	अथ	अव
स्वप्नस्य	स्वप्नात् (पञ्चम्यर्थे षष्ठी)	स्वप्न से
निः	निः+	—
विदे	निः+विदे, निर्वि ण्गोऽस्मि	खिन्न हूं
अभुञ्जतः	अभुञ्जतः	भोग न करने वाले से
च	च	और

रेवतः	धनवतः	धनवान से
उभा	उभौ	दोनों
ता	तौ	वे
बस्रिम्	क्षिप्रम् (सा०भा०	शीघ्र
नश्यतः	नश्यतः	नष्ट होंगे

भाषार्थः।

(अहम्) इदानीं स्वप्नाद्, अभुञ्जतो धनिनश्च निर्विण्णोऽस्मि तावुभौ क्षिप्रं नश्यतः॥१२॥

संस्कृतार्थः।

मैं अब स्वप्न से और भोग न करने वाले धनी से खिन्न हूं वे दोनों शीघ्र नष्ट होंगे ॥ १२ ॥

इति विंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ॥

ऋ०मं०१सू०१२१।

इन्द्रोदेवता कक्षीवानृषिः।

विनियोगो लैङ्गिकः।

सूक्त का भावार्थ।

हम अंगिरावंशियों की स्तुति को हमारे रक्षक इन्द्र कब सुनेंगे ? जब हम घर के सब मनुष्य उन का ध्यान करेंगे तब वह अवश्य हमारी पूजा को स्वीकार करने के लिये लंबे कदमों से पधारेंगे।१। वही यशस्वीवीर ऊपरके आकाश को थांमे हुए हैं,वही पृथिवी को सींच कर अन्न पशु और धन को हमारे लिये उत्पन्न करते हैं, वे मनुष्य पशु वृक्ष आदि प्रजा को और सूर्य्य की पत्नी हमारी माता पृथिवी को उत्पन्न करके कृपादृष्टि से देख रहे हैं।२। प्रात समय के राजा आलस्य रहित इन्द्र अंगिरावंश के प्राचीन पुरुषोंके बुलाने पर प्रतिदिन पहुंचतेथे,ये सौ अश्व हीरे जो आकाश में जगमगाते हैं उसी ने बनाए हैं और उसी ने पशु और मनुष्यों के लिये आकाश को थामा हुआ है। ३। हे इन्द्र ! जब आप भक्तों के अर्पण किये हुए सोम से मद युक्त होकर तीन नोक वाले अपने वज्रसे मनुष्यों के साथ द्रोह करने वाले अन्धकार रूपी गुफाके द्वारों को तोडकर खोलतेहो तब सृष्टिक्रम के चलानेके लिये रांभती हुई दिनरूपी गौएँ एक एक करके बाहर निकलती हैं। ४। हे इन्द्र ! अब सब के माता पिता आकाश और पृथिवी ने आपको सृष्टि का असीम बल भेंट किया और मनुष्या ने अग्निहोत्र द्वारा अमृत के दोहन करने वाली गौ का पवित्र दूध आप के प्रति अर्पण किया।५। तब उषा का प्रकाश बढने २ सूर्य्य का उदय हुआ, अब हम देवताओं की इस विजय पर हर्षित हों, इस सूर्य्य की किरणरूपी

हवियों को ही स्रुचे से सींचते हुए चन्द्रमा * भक्तों के पास प्राप्त होते हैं ।६। हे इन्द्र ! यह आप ही के पुरुषार्थ का फल है कि देवताओं के यज्ञ के निमित्त पशु बांधने का यूप बनाने के लिये चमकीली धार वाली कुल्हाड़ी चल रही है, गाडीवान रात्रि से पहिले घर पहुंचने के लिये बैलों को हांक रहे हैं,गोपाल गौओं को चरारहे हैं और कर्मठ लोग शीघ्रता से अपना काम कर रहे हैं जिससे अन्धकार के फैलने से पहले कार्य समाप्त होजाए, इन सब कर्मों की सम्भावना इसीलिये है कि आप प्रतिदिन दिन को उत्पन्न करते हो।७। हे इन्द्र ! जब चार महीने लंबी रात्रि रूप कूए ने प्रकाश को गडप्प कर लिया† तब आप उससे युद्ध करते हुए महान आकाश से प्रकाश के आठ महीने रूप आठ घोड़ों को लाए, और आप का अनुमोदन करने के लिये मनुष्यों ने सुनहरी रंग का सोम निचोडा ओर उस को दूध से प्रबल करके आपके ताईं अर्पण किया।८। हे इन्द्र ! कर्मकुशल त्वष्टा के दिये हुए विद्युतरूपी लोहे के वज्र को जब आपने अपने भक्त कुत्स की रक्षा के लिये आकाश से छोड़ा, तब अनावृष्टिरूप असुर चारों ओर से शस्त्रों से घिर गया, ओर प्रजा के हितकारी कुत्स के लिये वृष्टि हुई ।९। हे वज्रधारी इन्द्र ! जलों के चोर उस वृत्र की ओर सूर्य के छिपने से पहिले विद्युत रूपी वज्र को फैंको, और अनावृष्टि रूप शुष्ण के जमे हुए बल को उखाड़ कर आकाश से निकालो ।१०। हे इन्द्र ! अत्यन्त बल वाले आकाश और पृथिवी भी जो विना पहियों के चलते हैं आपके इस कर्म पर प्रफुल्लित

---

* चन्द्रमा की किरणें सूर्य्य की ही किरणे हैं जो चन्द्रमा पर गिर कर फिर हमारे पास पहुंचती हैं ।

† यह वृत्तांत उस समय का है कि जब आर्य्यजाति उत्तरमेरु के समीपस्थ देशों में रहती थी।

होते है कि आपने उस सूअर वृत्र को जो नदियों में रहता था वज्र से मार कर सुला दिया‡ ।११। हे मनुष्यों के हितकारी इन्द्र ! आप अत्यन्त वेग वाले वायु के घोड़ों से जुड़े हुए रथ पर सवार हों, और जो कवि के पुत्र उशना ऋषि ने स्तुति के बल से आप के लिये वज्र घडा है उस को वृत्र पर चलाने के लिये तीक्ष्ण करो ।१२। हे इन्द्र! जब आपने अपने भक्तएतश के लिये युद्धमें लंबा दिन करने के निमित्त सूर्य्य के घोड़ों को थाम दिया था तब सूर्य्य का घोडा पहिये को न चला सका, फिर आप ने एतश के यज्ञहीन शत्रुओं का नदियों के पार गढे में जा पटका ।१३।हे वज्री ! इन्द्र ! आप इस दरिद्रता से हम लोगों को छुडावें यह जो पाप का रूप हमारे समीप बना रहता है, आप हमें रथ घोड़े और धन से युक्त बल को दें जिससे हम अन्नवान यशस्वी और सच्ची वाणी वाले बनें ।१४। हे बल प्रताप और धन के मूल ! इन्द्र ! आप की वह दयाबुद्धि जो हम पर थी क्षीण न हो, अन्न हमारे चारों ओर हो, हे स्वामी ! हम को गौओं में सांझा दो जिस से हम स्तुति के योग्य बन कर आप के साथ मोद करने वाले बनें ।१५।

---

‡ अर्थात्,शरदृऋतु में धूलीरूप वृत्र को सुला कर नदियों का जल स्वच्छ किया ।

इन्द्रोदेवता निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ॥१०।११।११।११।

कदित्थानॄँःपात्रंदेवयतां श्रवद्
गिरोअङ्गिरसांतुरण्यन्। प्रयदानड्
विशआहर्म्यस्योरुक्रंसतेअध्वरेय-
जत्रः ॥ १ ॥

कत्	कदा	कब
इत्था	खलु (आ० को०)	सचमुच
नॄन्	नरान्	नरों को
पात्रम्	पाता (पारक्षणे, ताच्छीलिकस्तृन्, व्यत्ययेन सोरमादेशः)	रक्षा करने वाला
देवऽयताम्	देवकामानाम्	देवभक्तों की
श्रवत्	श्रोष्यति (लेटयडागमः)	सुनेगा

गिरः	स्तुतीः	स्तुतियों को
अङ्गिरसाम्	अङ्गिरसाम्	अंगिराओं की
तुरण्यन्	त्वरांकुर्वन् (तुरण त्वरायाम्)	शीघ्रता करताहुआ
प्र	प्र +	--
यत्	यदा	जब
आनट्	प्र + आनट् व्याप्नोति (निघं० २।१८)	व्याप्त होता है
विशः	प्रजाः	प्रजाओं को
आ	सर्वतः	सब ओर से
हर्म्यस्य	गृहिणः (हर्म्यशब्दादर्शआदि- त्वादच्)	गृहस्थ की
उरु	विपुलम्	चौड़े

क्रंसत	क्रमते (लेट्याडागमेसिप्)	कदम उठाता है
अध्वरे	यज्ञे	यज्ञ में
यजत्रः	यष्टव्यः	पूजनीय

संस्कृतार्थः ।

नराणां रक्षकः (इन्द्रः) त्वरयन् (सन्) कदाखलु देवकामानाम् अङ्गिरसां स्तुतीः श्रोष्यति? यष्टव्यः (सः) यदा गृहिणः प्रजाः सर्वतो व्याप्नोति (तदा) यज्ञे विपुलतया क्रामति ॥ १ ॥

भावार्थः ।

नरों के रक्षक (इन्द्र) शीघ्रता करते हुए सचमुच कब देवभक्त अंगिराओं की स्तुतियों को सुनेंगे? (वह) पूज्य जब गृहस्थ की प्रजाओं को सब ओर-से व्याप्त हो जाएंगे (तब) यज्ञ में चौड़े कदम उठाएँगे ॥ १ ॥

मंत्र के पूर्वार्द्ध में प्रश्न है कि इन्द्र हम अंगिरावंशियों की स्तुति को कब सुनेंगे, उत्तरार्द्ध में उत्तर है कि जब वह पूज्य घर के सारे मनुष्यों के मन में व्याप्त हो जाएँगे, तब चौड़े कदम से शीघ्र यज्ञ में आएँगे और हमारी स्तुतियों को सुनेंगे ॥

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

स्तम्भीद्धद्यांसधरुणंप्रुषाय
दृभुर्वाजायद्रविणंनरोगोः । अनु
स्वजांमहिषश्चक्षतव्रां मेनामश्वस्य
परिमातरंगोः ॥ २ ॥

स्तम्भीत्	स्तब्धवान्	थांभा है
ह	(पूरणः)	—
द्याम्	द्युलोकम्	द्युलोक को
सः	सः	उस ने
धरुणाम्	धारयितारम् (पृथिवीलोकम्)	पृथिवीलोक को
प्रुषायत्	सिक्तवान् (प्रुषसेचने लङ्यडागमः, श्ना प्रत्ययस्य शायजादेशश्छान्दसः)	सींचा

ऋभुः	मेधावी (निघं० ३।१५)	बुद्धिमान
वाजाय	अन्नाय	अन्न के लिये
द्रविणम्	धनाय (सुपामिति विभक्तेःसुः)	धन के लिये
नरः	वीरः	वीर
गोः	गवे (चतुर्थ्यर्थे षष्ठी)	गौ के लिये
अनु	अनु+	–
स्वऽजाम्	स्वत उत्पन्नाम्	अपने आप से उत्पन्न हुई को
महिषः	महान् (निघं० ३।३)	महान्
चक्षत	अनु+चक्षत,अनुकम्पया दृष्टवान् (चष्टिः पश्यतिकर्म्मा निघं० ३।११)	कृपा से देखा
ग्राम्	प्रजाम्	प्रजा को

मेनाम्	पत्नीम्	पत्नी को
अश्वस्य	अश्वस्य	घोड़े की
परि	परितः	सब ओर से
मातरम्	मातरम्	माता को
गोः	पृथिवीम् (द्वितीयार्थे षष्ठी)	पृथिवी को

संस्कृतार्थः।

मेधावी स वीरः द्युलोकं स्तब्धवान् अन्नार्थं गवामर्थं धनार्थम् (च) पृथिवीलोकं सिक्तवान्, महान् (सः) स्वतःउत्पन्नां प्रजाम् अश्वस्य पत्नीरूपां मातरं पृथिवीम् (च) अनुकम्पया दृष्टवान् ॥ २ ॥

भावार्थः।

बुद्धिमान उस वीर ने द्युलोक को थांभा (और) अन्न के लिये, गौओं (और) धन के लिये पृथिवी लोक को सींचा, (उस) महान ने अपने आप से उत्पन्न हुई प्रजा को (और) अश्व की स्त्रीरूप पृथिवी माता को कृपादृष्टि से देखा ॥ २ ॥

'अश्व' सूर्य है और उसकी स्त्री पृथिवी है जो हम सब की माता है ॥

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

नक्षद्धवमरुणीः पूर्व्यंराट्तुरोविशामङ्गिरसामनुद्यून् । तक्षद्वज्रंनियुतं तस्तम्भद्द्यां चतुष्पदेनर्य्यायद्विपादे ॥ २॥

नक्षत्	प्राप्तवान् (नक्षगतौ)	पहुंचताथा
हवम्	आह्वानम्	पुकार को
अरुणीः	उषसाम् (पूर्वसवर्णदीर्घः)	उषाओं का
पूर्व्यम्	पुरातनम्	प्राचीन को
राट्	राजा (राजतेःक्विप्)	राजा
तुरः	अनलसः	आलस्य से रहित

विशाम्	प्रजानाम्	प्रजाओं के
अङ्गिरसाम्	अङ्गिरसाम्	अंगिराओं के
अनु	अनु+	–
द्यून्	अनु+द्यून्, अनुदिनम्	प्रतिदिन
तक्षत्	निर्मितवान् (अडभावः)	बनाया
वज्रम्	हीरकान् (सुपामितिविभक्तेःसुः)	हीरों को
निऽयुतम्	शतार्बुदम् (ओ०को०)	सौ अरब को
तस्तम्भत्	स्तम्भितवान्	थांभा
द्याम्	द्युलोकम्	द्युलोक को
चतुःपदे	चतुष्पदे	चुपाए के लिये
नर्याय	मानुषाय	मानुष के लिये

द्विऽपादे	द्विपदे	दुपाए के लिये

संस्कृतार्थः।

उषसां राजा अनलसः (इन्द्रः) प्रतिदिनम् अङ्गिरोवंशीयानां प्रजानां पुरातनमाह्वानम् (प्रति) प्राप्तवान्, (सः) शतार्बुदं हीरकान् निर्मितवान् चतुष्पदे मानुषाय द्विपदे(च) द्युलोकं स्तम्भितवान् ॥३॥

भाषार्थः।

उषाओं के राजा आलस्यहीन (इन्द्र) प्रतिदिन अंगिरावंशी प्रजाओं के पूर्वकाल में बुलाने पर पहुंचते थे, (उसने) सौ अरब हीरे बनाए (और) चुपायों (और) मानुष दुपाओं के लिये द्युलोक को थांभा ॥ ३ ॥

सौ अरब हीरे अर्थात् तारागण।

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः।१११११११११

अस्यमदेस्वर्यंदाऋतायाऽपी-

वृतमुस्रियाणामनीकम्।यद्धप्रसर्गेचि-

कुकुम्मिवर्त् दपद्गुहोमानुषस्यदुरो-
वः ॥ ४ ॥

अस्य	अस्य	इस के
मदे	मदे	मद में
स्वर्यम्	रेभमाणम् (स्वृ शब्दे, यत् प्रत्ययः संज्ञापूर्वकस्य विधेरनित्यत्वाद् वृद्ध्यभावः	रांभते हुए को
दाः	दत्तवानसि (अडभावः)	तूने दिया है
ऋताय	ऋताय	ऋत के लिये
अपिऽवृतम्	निगूढम्	छिपे हुए को
उस्रियाणाम्	गवाम् (निघं० २।११)	गौओं के
अनीकम्	समूहम्	झुंड को

यत्	यदा	जब
ह	खलु	सचमुच
प्रऽसर्गे	आघाते	प्रहार में
त्रिऽककुप्	त्रिशिखरोपेतः	तीन नोक वाला
निऽवर्तत्	नितरांवर्तते (लेट्यडागमः)	प्रवृत्त होता है
अप	अप+	–
द्रुहः	द्रोहकर्त्रीणि	द्रोह करनेवालोंको
मानुषस्य	मनोः सम्बन्धिनः	मनु संबंधी के
दुरः	द्वाराणि	द्वारों को
वः०	अप + वः, अपावृणोति, उद्घाटयतीत्यर्थः (लङर्थे लुङ्यडभावः च्लेर्लुक्, गुणे हल्ङ्यादिलोपः)	खोल देता है

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र ! त्वम्) अस्य (सोमस्य) मदे ऋताय रेभमाणं निगूढं गवां समूहं दत्तवानसि, यदा खलु त्रिशिखरोपेतः (वज्रः) आघाते प्रवर्त्तते (तदा सः) मनोः सम्बन्धिन्याः (प्रजायाः) द्रोहकर्त्रीणि द्वाराणि उद्घाटयति ॥ ४ ॥

भावार्थः ।

(हे इन्द्र !) आपने इस (सोम) के मद में ऋत के लिये गौओं के झुंड को दिया है, जब तीन नोक वाला (वज्र) सचमुच वध करने में प्रवृत्त होता है (तब वह) मनु की (प्रजाओं) के साथ द्रोह करने वाले द्वारों को खोल देता है ॥ ४ ॥

रांभती हुई गौएँ दिन हैं जिन को पणि छिपा कर रखता है, इन गौओं को इन्द्र ऋत अर्थात् सृष्टिक्रम के चलाने के लिये अपने तीन नोक वाले वज्र से पणि की गुफाओं के द्वारों को तोड कर निकालते हैं और शीतऋतु की लम्बी रात्रि के पश्चात् फिर दिन रूपी गौएँ एक एक करके बाहर निकलती हैं ॥

इन्द्रो देवता त्रिष्टुप्छन्दः ।१११।१११।१११

तुभ्यंपयोयत्पितरावनीतांराधः सुरेतस्तुरणेभुरण्यू । शुचियत्तेरेक्ण-

आयजन्त सबर्दुघाया:पयउस्रियाया: ॥ ५ ॥

तुभ्यम्	तुभ्यम्	तेरे लिये
पय:	बलम् (भा० वा०)	बल को
यत्	यदा	जब
पितरौ	पितरौ	माता (और) पिता
अनीताम्	आनीतवन्तौ (लङिदावोलुङ्)	लाए
राध:	उपहारम् (भा० को०)	भेट को
सुरेत:	सुवीर्ययुक्तम्	सुन्दर वीर्य से युक्त को
तुरणे	त्वरोपेताय (तुरण त्वरायां क्विप्)	शीघ्रकारी के लिये
भुरण्यू०	धारयित्र्यौ (भुरण धारणे,औणादिक उप्रत्यय:)	धारण करने वाले

शुचि	शुद्धम्	पवित्र को
यत्	यदा	जब
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
रेक्णः	धनम् (निघं०२।१०)	धन को
आ	आ+	—
अयजन्त	आ+अयजन्त, अर्पितवन्तः	अर्पण किया
स्वःऽदुघायाः	अमृतस्य दोग्ध्याः (सा०मा०)	अमृत के दोहने वाली के
पयः	पयः	दूध को
उस्रियायाः	गोः	गौ के

संस्कृतार्थः।

(हे इन्द्र!) क्षिप्रकारिणे तुभ्यं यदा धारयित्र्यौ (द्यावापृथिव्यौ) सुवीर्योपेतं बलरूपम् उपहारम्

आनीतवन्तौ,यदा(च मनुष्याः)अमृतस्य दोग्ध्र्याःगोः पवित्रं पयोरूपंधनं तुभ्यम् अर्पितवन्तः ॥ ५ ॥

भावार्थः।

(हे इन्द्र !) शीघ्रकारी आप के लिये जब धारण करने वाले माता (और) पिता (द्यौ और पृथिवी) सुन्दर वीर्य्य से युक्त बलरूप भेट को लाए (और) जब (मनुष्यों ने) अमृत के दोहने वाली गौ के पवित्र दुग्धरूप धन को आप के ताईं अर्पण किया ॥ ५ ॥

इस का संबंध अगले मंत्र के साथ है।

मंत्र के उत्तरार्द्ध में अग्निहोत्र की ओर सूचना है, सृष्टि की आसुरी शक्तियाँ जगत में अन्धकार को फैलाना चाहती हैं, और देवता मनुष्य के हितकारक प्रकाश को उत्पन्न करना चाहते हैं, देवताओं के इस प्रयत्न में मनुष्य भी अग्निहोत्र द्वारा सहायता कर सकता है ॥

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अधप्रजज्ञेतरणिर्ममत्तु प्ररोच्यस्याउषसोनसूरः।इन्दुर्येभिराष्टस्वेदुहव्यैः स्रुवेणसिञ्चञ्जरणाभिधाम ॥ ६ ॥

अध	तदानीम्	तत्र
प्र	प्र+	–
जज्ञे	प्र+जज्ञे,प्रादुर्बभूव	प्रकट हुआ
तरणिः	शीघ्रगामी (निघं० २।१५)	शीघ्रगामी
ममत्तु	मादयतु (मदीहर्षेऽन्तर्भावितण्यर्थादस्माद् विकरणस्य श्लुश्छान्दसः)	हर्ष से युक्त करे
प्र	प्र+	–
रोचि	प्र+रोचि,प्रदीप्तोऽभूत् (रुच दीप्तौ लुङि व्यत्ययेन च्लेश्चिणादेशः)	प्रदीप्त हो गया
अस्याः	अस्याः	इस से
उषसः	उषसः	उषा से

न	इव	मानो
सूरः	सूर्य्यः	सूर्य्य
इन्दुः	सोमः	सोम
येभिः	यैः	जिन से
आष्ट	प्राप्नोति	प्राप्त होता है
स्वऽइन्दुहव्यैः	स्वतोदीप्तैर्हव्यैः (ञिइन्धीदीप्तौ, पृषोदरादित्वाद्रूपसिद्धिः)	अपने आप चमकतीहुई हवियों से
स्रुवेण	स्रुवेण	स्रुव के द्वारा
सिञ्चन्	सिञ्चन्	सींचता हुआ
जरणा	स्तोतॄणाम् (जरतिःस्तुतिकर्म्मा निघं० ३।१४ विभक्तेराऽऽत्वम्)	स्तुति करने वालों के
अभि	प्रति	की ओर

धाम	स्थानम्	स्थान को

संस्कृतार्थः।

तदा शीघ्रगामी सूर्यः अस्या उषसः प्रदीप्तइव प्रादुर्बभूव(अयमस्मान्) मादयतु, यैः स्वतः प्रदीप्तैः हव्यैः स्त्रुवेण सिञ्चन् सोमः स्तोतृणां स्थानं प्रति प्राप्नोति ॥ ६ ॥

भावार्थः।

तब शीघ्रगामी सूर्य्य मानो इस उषा से प्रदीप्त होकर प्रकट हुआ (यह हमें) हर्षित करे, जिन स्वयं चमकती हुई हवियों से स्रुव के द्वारा सींचता हुआ चन्द्रमा भक्तों के स्थान को प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

इस की पूर्ति पिछले मंत्रसे है।

सूर्य्य का उदय होना देवताओं की विजय का सूचक है, इस लिये हमें प्रत्येक सूर्य्यउदय पर हर्षित होना चाहिये।

स्वयं चमकती हुई हवियाँ सूर्यकी किरणें हैं जो चन्द्रमापर गिर कर चन्द्ररश्मिरूप से हमारे पास आती हैं,मानो इन को स्रुवे से सींचता हुआ चन्द्रमा हमारे स्थान को प्राप्त होता है।

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

स्विध्मायद्वनधितिरपस्यात

सूरो अध्वरे परिरोधना गोः । यद्ध प्रभासि कृत्व्याँ अनु द्यू नर्नविशे पश्विषे तुराय ॥ ७ ॥

सऽइध्मा	सुदीप्यमाना	खूब चमकती हुई
यत्	यत्	जो
वनऽधितिः	वृक्षादनी (आ० को०)	कुल्हाड़ी
अपस्यात्	कर्मोद्युक्ता भवति (अपस् इति कर्म नाम निघं० २।१ क्यचि सति लेट्यडागमः)	कर्म में तत्पर होती है
सूरः	विदुषः (षष्ठ्याःसुः)	विद्वान के
अध्वरे	यज्ञे	यज्ञ में

परि	परि+	–
रोधना	परि+रोधना,बन्धनाय (चतुर्थ्याः डा)	बांधने के लिये
गोः	पशोः	पशु के
यत्	यत्	जो
ह	खलु	सचमुच
प्रऽभासि	अनु+प्रभासि, अनुदिनं प्रदीपयसि (अन्तर्भावितण्यर्थ)	तू प्रतिदिन प्रकाशित करता है
कृत्व्यान्	कर्म्मयोग्यान् (कृत्वीति कर्मनाम निघं॰ २।१ तत्रसाधुरितियत्)	कर्म्म करने में योग्यों को
अनु	अनु+	–
द्यून्	दिवसान्	दिनों को

अनर्विशे	अनसा शकटेन प्रविशते (विशतेः क्विपि सति 'अहरादीनां-' इति वार्तिकेन सकारस्य रेफादेशः)	गाडीवान के लिये
पशुऽइषे	पशूनां प्रेरकाय (इषगतौ, अन्तर्भावितण्यर्थादस्मात् क्विप्)	पशुओं के हांकने वाले के लिये
तुराय	त्वरमाणाय	शीघ्रता करते हुए के लिये

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र! यद् विदुषो यज्ञे पशोर्बन्धनाय सुदीप्यमाना वृक्षादनी कर्मोद्युक्ता भवति, यत् (च) खलु शकटेन प्राप्नुवते, पशुवाहकाय, त्वरमाणाय (च) कर्मयोग्यान् दिवसान् अनुदिनं प्रदीपयास (तत् तवैव वीर्य्यस्य फलम्) ॥ ७ ॥

भावार्थः।

हे इन्द्र! जो विद्वान के यज्ञ में पशु के बांधने के लिये खूब चमकने वाली कुल्हाड़ी अपना काम करती है, (और) जो सचमुच गाडीवान के लिये, पशु हांकने वाले के लिये (और) शीघ्रता करने वाले

के लिये काम करने योग्य दिनों को प्रतिदिन प्रकाशित करते हो(वह आपके ही वीर्यका फल है)॥७॥

कुल्हाड़ी अपना काम करती है अर्थात् यूप बनाने के लिये वृक्ष को काटती है ॥

इन्द्रोदेवता भुरिक्त्रिष्टुप्छन्दः ।१२।११।११।११

अष्टामहोदिवआदोहरीइह द्युम्नासाहमभियोधानउत्सम्। हरिं यत्तेमन्दिनंदुक्षन्वृधे गोरभसमद्रिभिर्वाताप्यम् ॥ ८ ॥

अष्टा	अष्टौ (विभक्तेरात्वम्)	आठ
मह:	महतः	महान से
दिव:	द्युलोकात्	द्युलोक से
आद:	आनीतवानसि (आ०श्रो०)	तू लाया है

हरी०	अश्वान् (वचनव्यत्ययः)	घोड़ों को
इह	इह	यहां
द्युम्नऽसहम्	प्रकाशस्याऽभिभवितारम्	प्रकाश के दबाने वाले को
अभि	प्रति	की ओर
योधानः	युध्यमानः	युद्ध करता हुआ
उत्सम्	कूपम्	कूए को
हरिम्	हरिद्वर्णम्	सुनहरी रंग वाले को
यत्	यदा	जब
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
मन्दिनम्	मदकारकम्	मद करने वाले को
धुक्षन्	अधुक्षन् (अडभावः)	दोहा

वृधे	वृद्धयै	वृद्धि के लिये
गोऽरभसम्	पयसा प्रबलीकृतम्	दूध से बलयुक्त किये हुए को
अद्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
वाताप्यम्	सोमरसम् (आ०को०)	सोमरस को

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र ! त्वम्) प्रकाशस्य अभिभवितारं कूपं प्रति युध्यमानः (सन्) महतो द्युलोकाद् अष्टाश्वान् आनीतवानसि, यदा (मनुष्याः) तुभ्यं हरिद्वर्णं, पयसा प्रबलीकृतं, मदकारकम् (च) सोमरसं पाषाणैः दुग्धवन्तः ॥ ८ ॥

भावार्थः ।

(हे इन्द्र !) प्रकाश के दबाने वाले कूप के प्रति युद्ध करते हुए आप महान द्युलोक से आठ घोडों को लाए जब (मनुष्यों ने) आप के लिये सुनहरी रंगवाले, दूध से बल युक्त किये हुए (और) मदकारक सोमरस को पत्थरों से दोहा ॥ ८ ॥

(१) प्रकाशके दबाने वाला कूप उत्तर देशोंकी चार महीने की लंबी शीतकाल की रात्रि है ॥

(२) आठ घोड़े प्रकाश के आठ महीने हैं ॥

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

त्वमायसंप्रतिवर्तयोगो दिवोअ-
श्मानमुपनीतमृभ्वा। कुत्सायय-
त्रपुरुहूतवन्वञ् छुष्णामनन्तैःप-
रियासिवधैः ।९।

त्वम्	त्वम्	तू ने
आयसम्	लोहमयम्	लोहे वाले को
प्रति	प्रति+	—
वर्तयः	प्रति+वर्तयः, विसृष्टवानसि (लङ्यडभावः)	फैंका
गोः	गवादिपशूपलक्षितस्य चर्मणः	चमड़े के
दिवः	द्युलोकात्	द्युलोक से

अश्मानम्	वज्रम्	वज्र को
उपऽनीतम्	प्रापितम्	लाए हुए को
ऋभ्वा	कर्मकुशलेन (त्वष्ट्रा)	काम में चतुर (त्वष्टा) के द्वारा
कुत्साय	कुत्साय	कुत्स के लिये
यत्	यस्मिन् (काले)	जब
पुरुऽहूत	हेबहुभिराहूत !	हे बहुतों से बुलाए हुए
वन्वन्	रक्षांकुर्वन् (यास्कः)	रक्षा करता हुआ
शुष्णम्	शुष्णम्	शुष्ण को
अनन्तैः	अनन्तैः	अनेकों से
परिऽयासि	परिगतवानसि (लड्थेंलट्)	तूने घेर लिया है
वधैः	हननसाधनैः (आयुधैः)	शस्त्रों से

संस्कृतार्थः ।

हे बहुभिराहूत ! (इन्द्र !) त्वं कर्मकुशलेन (त्वष्ट्रा) आनीतं लोहमयं वज्रं चर्मणः (सकाशेन) द्युलोकाद् विसृष्टवानसि यदा कुत्साय रक्षां कुर्वन् अनन्तैरायुधैः शुष्णं परिगतवानसि ॥ ९ ॥

भावार्थः ।

हे बहुतों से बुलाए हुए (इन्द्र !)आपने काम में चतुर (त्वष्टा) से लाए हुए लोहे के वज्र को चर्म के द्वारा द्युलोक से फैंका जब कुत्स के लिये रक्षा करते हुए आपने शुष्ण को अनेक शस्त्रों से घेर लिया ॥ ९ ॥

(१) वज्र को छोड़ने के लिये हाथ में चर्म पहना जाता है ॥

(२) शुष्ण पृथिवी को सुखाने वाला अनावृष्टि रूप असुर है।

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

पुरायत्सूरस्तमसोअपीते स्तमद्रिवःफलिगंहेतिमस्य । शुष्णस्य चित्परिहितंयदोजो दिवस्परिसुग्रथितंतदादः ।१० ।

पुरा	पूर्वम्	पहिले
यत्	यावत्	जबतक
सूरः	सूर्यस्य (षष्ठयाः सुः)	सूर्य के
तमसः	अन्धकारेण (तृतीयार्थे षष्ठी)	अंधकार के द्वारा
अपिऽइतेः	लयात् (शा०पो०)	लय से
तम्	तम्	उस को
अद्रिऽवः	हे वज्रिन् !	हे वज्रधारी
फलिऽगम्	वृत्रम् (प्रति) (निघं० १।१०)	वृत्र (की ओर)
हेतिम्	वज्रम् (निघं० २।२०)	वज्र को
अस्य	प्रक्षिप (असुक्षेपणे)	फेंको
शुष्णस्य	शुष्णस्य	शुष्ण का

चित्	(पूरणः)	–
परिऽहितम्	व्याप्तम्	व्याप्त
यत्	यत्	जो
ओजः	बलम्	बल
दिवः	द्युलोकस्य	द्युलोक के
परि	उपरि	ऊपर
सुऽग्रथितम्	संघट्टितम्	गठा हुआ
तत्	तत्	उस को
आ	आ+	–
अदः०	आ+अदः, सर्वतो-विदारय (दृविदारणे;लोडर्थे लङि विकरणस्य लुक्)	सब ओर से तोड़ो

संस्कृतार्थः।

हे वज्रिन्! (इन्द्र!) अन्धकारेण सूर्यस्य

लयात्पूर्वं यावत् (तावत्) तं वृत्रम् (प्रति) वज्रं प्रक्षिप, दिव उपरि यद् संघट्टितं शुष्णस्य व्याप्तं बलम् (चाऽस्ति) तत् सर्वतो विदारय ॥ १० ॥

भावार्थः ।

हे वज्रधारी (इन्द्र !) अन्धकार द्वारा सूर्य्य के लय होने से पहले[२] उस वृत्र की (ओर) वज्र को फैंको, (और) द्यौके ऊपर जो गठा हुआ शुष्ण का व्याप्त बल (है) उसको सब ओर से तोड़ो ॥ १० ॥

फलिग, शुष्ण, ये दोनों अनावृष्टि रूप असुरों के कल्पित नाम हैं ।

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अनु॑त्वाम॒ही पाज॑सीअच॒क्रे द्या-
वा॒क्षामा॑मदतामिन्द्र॒कर्म॑न् । त्वं
वृत्रमा॒शया॑नंसि॒रासु॑ म॒होवज्रे॑णसि-
ष्वपीव॒राहु॑म् । ११ ।

अनु	अनु-(स्तय)	साथ २
त्वा	त्वाम्	तुझ को
मही०	महत्यौ (सुपामिति विभक्तेःसुः)	बड़ीं
पाजसी०	बलवत्यौ	बल वालीं
अचक्रे०	चक्ररहिते	पहियों से रहित
द्यावाक्षामा	द्यावापृथिव्यौ	द्यौ (और) पृथिवी
मदताम्	मदयुक्तेऽभवताम् (व्यत्ययेन शप्, अड-भावः)	मद से युक्त हुई हैं
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
कर्मन्	कर्मणि (सुपामिति सप्तम्यालुक्)	कर्म में
त्वम्	त्वम्	तू ने
वृत्रम्	वृत्रम्	वृत्र को

आऽशयानम्	निवसन्तम् (आ०को०)	रहने वाले को
सिरासु	नदीषु (निघं० १।१३)	नदियों में
मह्नः	महता (तृतीयार्थे षष्ठी)	महान से
वज्रेण	वज्रेण	वज्र से
सिस्वपः	स्वापितवानसि (अडभावः)	सुलादिया है
वराहुम्	वराहसदृशम्	वराह जैसे को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र! (तव)कर्म्मणि चक्ररहिते महत्यौ बलवत्यौ द्यावापृथिव्यौ त्वामनुसृत्य मदयुक्तेऽभवताम्, त्वं नदीषु निवसन्तं वराहसदृशं वृत्रं महता वज्रेण (हत्वा) स्वापितवानसि । ११ ।

भावार्थः ।

हे इन्द्र ! (आप के) कर्म पर विना पहियों वाले बड़े बलवान द्यौ (और) पृथिवी आप के साथ मद से युक्त हुए हैं, आपने नदियां में रहने वाले वराह तुल्य वृत्र को महान वज्र से(मारकर)सुलादियाहै।११।

इन्द्रोदेवता निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।१०।११।११।११

त्वमिन्द्रनर्य्योयाँ॥अवोनॄन् ति-

ष्ठावातस्यसुयुजोवहिष्ठान्। यंते

काव्यउशनामन्दिनंदाद् वृत्रहणं

पार्य्यंततक्षवज्रम् ॥ १२ ॥

त्वम्	त्वम्	तू
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
नर्य्यः	नृभ्योहितः	मनुष्यों के लिये हितकारी
यान्	यान्	जिन को
अवः	रक्षसि (लेट्यडागमः)	रक्षा करते हो
नॄन्	नरान्	नरों को

तिष्ठ	आरोह (आङोलोपश्छान्दसः)	चढो
वातस्य	वायोः	वायु के
सुऽयुजः	सुयुक्तान्	सुन्दर जुड़े हुओंको
वहिष्ठान्	अतिवोढॄन्	खूब लेचलने वालों को
यम्	यम्	जिस को
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
काव्यः	कवेःपुत्रः	कवि के पुत्र ने
उशना	उशना	उशना ने
मन्दिनम्	मदकरम्	मदकारी को
दात्	दत्तवान् (अडभावः)	दिया है
वृत्रऽहनम्	वृत्रस्य हन्तारम्	वृत्रकेमारनेवालेको

पार्यम्	(शत्रूणाम्)पारणेऽतिक्रमणे समर्थम्	(शत्रुओं के) उलांघने में समर्थ को
ततक्ष	तनूकुरु (लोडर्थेलिट्)	पैनाओ
वज्रम्	वज्रम्	वज्र को

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्रानृभ्योहितस्त्वं यान्नरान् रक्षसि (तान्) अतिवोढ्न्, वायोः सुयुक्तान् (अश्वान्) आरोह, (अपिच) कवेःपुत्रः उशना वृत्रस्य हन्तारम् (शत्रून्) अतिक्रमितुं समर्थं मदकरं यं वज्रं तुभ्यं दत्तवान् (तम्) तनूकुरु।१२।

भाषार्थः।

हे इन्द्र ! मनुष्यों के हितकारी आप जिन नरों की रक्षा करते हो (उन) खूब ले चलने वाले वायु के सुन्दर जुड़े हुए (घोड़ों) पर चढो (और) कवि के पुत्र उशना ने जो वृत्र के मारने वाला (और शत्रुओं के) उलांघने में समर्थ मदकारी वज्र आप को दिया है (उस को) पैनाओ ।१२।

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११

त्वंसूरोहरितोरामयोनॄन् भर-
च्चक्रमेतशोनायमिन्द्र। प्रास्यपारं
नवतिंनाव्याना मपिकर्तमवर्तयोऽ-
यज्यून् ॥ १३ ॥

त्वम्	त्वम्	तू ने
सूरः	सूर्य्यस्य (षष्ठयाः सुः)	सूर्य्य के
हरितः	हरिद्वर्णान्	सुनहरीरंग वालों को
रमयः	उपरमितवानसि (अडभावउपसर्गा-भावश्च)	रोका है
नॄन्	नरान्	नरों को
भरत्	वोढुमशकत् (अडभावः)	लेचलसका

चक्रम्	चक्रम्	पहिये को
एतशः	एतशः	एतश
न	न	नहीं
अयम्	अयम्	यह
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
प्रऽअस्य	प्रक्षिप्य	फेंक कर
पारम्	पारम्	पार
नवतिम्	नवतिम्	नव्वे को
नाव्यानाम्	नावातार्य्याणाम् (नदीनाम्)	नदियों के
अपि	अपि	भी
कर्तम्	गर्तम् (गस्यकत्वं छान्दसम्)	गढे को
अवर्तयः	प्रापितवानसि	पहुंचाया है।

अयज्यून्	यजनरहितान्	यज्ञ न करने वालों को

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र ! त्वं सूर्य्यस्य हरिद्वर्णानश्वान्उपरमितवानसि, अयम् एतशः (सूर्य्यरथस्य) चक्रं वोढुं नाऽशकत् (त्वम्) यजनरहितान् नवतेर्नदीनां पारे प्रक्षिप्य गर्तं प्रापितवानसि ॥ १३ ॥

भाषार्थः।

हे इन्द्र! आपने सूर्य्य के सुनहरी घोड़ों को रोक दिया, यह एतश (सूर्य्य के रथ के) पहिये को न ले चल सका, आपने यज्ञ न करने वालों को नब्बे नदियोंके पार फैंक कर गढे में पहुंचाया है ॥१३॥

एतश सूर्य्य के घोड़े का नाम है, और इन्द्र के उस भक्त का नाम भी है जिस के लिये इन्द्र ने सूर्य्य के रथ को ठैरा कर युद्ध के लिये दिन को लंबा कर दिया था देखो २।१९।५

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

त्वंनोअस्याइन्द्रदुर्हणायाः पाहिवज्रिवोदुरितादभीके । प्रनोवा-

जानृथ्यो ३ अघ्नवुद्ध्या निषेयन्धि

श्रवसेसूनृतायै ॥ १४ ॥

त्वम्	त्वम्	तू
नः	अस्मान्	हम को
अस्याः	अस्याः	इस से
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
दुःऽहनायाः	दुःखेनहन्तव्यायाः (दरिद्रतायाः) (हन्तेःकर्म्मणिखल् प्रत्ययः)	दरिद्रता से
पाहि	पाहि	रक्षा कर
वज्रिऽवः	हे वज्रिन् !	हे वज्रवाले
दुःऽइतात्	पापात्	पाप से

अभीके	समीपे	समीप में
प्र	प्र+	–
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
वाजान्	बलानि	बलों को
रथ्यः	रथयुक्तानि (छन्दसित्रनिपौ,इति मत्वर्थीयईकारः)	रथ सहितों को
अश्वऽबुध्यान्	अश्वाः (विद्यमानत्वेन) बोद्धव्या-येषुतानि	जिनमें घोड़ों का होना निश्चित हो उन को
इषे	अन्नार्थम्	अन्न के लिये
यन्धि	प्र+यन्धि, प्रयच्छ (विकरणस्यलुक्)	दे
श्रवसे	यशसे	यश के लिये
सूनृतायै	प्रियसत्यात्मि-कायै वाण्यै	प्यारी (और)सच्ची वाणी के लिये

संस्कृतार्थः।

हे वज्रिन् ! इन्द्र ! त्वमस्मान् समीपे (वर्तमानात्)अस्माद् दारिद्र्यरूपात् पापाद् रक्ष, अन्नार्थं यशसे प्रियसत्यात्मिकायै वाण्यै (च) रथयुक्तानि, अश्ववोधकानि (च) बलानि अस्मभ्यं प्रयच्छ ॥१४॥

भावार्थः।

हे वज्रवाले इन्द्र ! आप हमें इस समीपवर्ती दारिद्र्यरूप पाप से बचावें, अन्न के लिये, यश के लिये (और) प्यारी (और) सच्ची वाणी के लिये रथ से युक्त (और) अश्वों के बोध कराने वाले बलों को हमारे ताईं दें ॥ १४ ॥

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११

मासातेअस्मत्सुमतिर्विदसद्

वाजप्रमहःसमिषोवरन्त । आनो

भजमघवन्गोष्वर्यो मंहिष्ठास्ते

सधमादःस्याम ।१५।

मा	मा	मत
सा	सा	वह
ते	त्वदीया	तेरी
अस्मत्	अस्मासु (सप्तम्यालुक्)	हममें
सुऽमतिः	अनुग्रहात्मिका बुद्धिः	दयाबुद्धि
वि	वि+	–
दसत्	वि+दसत्, उपक्षीयताम् (दसुउपक्षये, लोडर्थे लुङ्)	क्षीण हो
वाजऽप्रमहः	वाजैर्बलैःप्रकृष्टं महस्तेजो यस्य तथोक्तस्ततूस-म्बुद्धौ	हे बलों के कारण प्रतापशाली
सम्	सम्+	–

इषः	अन्नानि	अन्न
वरन्त	सम् + वरन्त, संवृण्वन्तु, (वृञ् वरणे व्यत्ययेन) शप्)	चारों ओर हो
आ	आ+	—
नः	अस्मान्	हम को
भज	आ + भज, भागिनःकुरु	भागी बनाओ
मघऽवन्	हे धनवन् !	हे धनवाले
गोषु	गोषु,	गौओं में,
अर्यः	स्वामी	स्वामी
मंहिष्ठाः	अतिस्तोतव्याः	अत्यन्त स्तुतिके योग्य
ते	तव	तेरे
सधऽमादः	सहमाद्यन्तः (क्विप्)	साथ मोद करने वाले

स्याम	स्याम	हम होवें

संस्कृतार्थः ।

हे वलैस्तेजस्विन्! धनवन्! (इन्द्र!) सा त्वदीया दयात्मिका बुद्धिरस्मासु मा उपक्षीयताम्, अन्नानि अस्मान् संवृण्वन्तु, स्वामी त्वम् गोषु अस्मान् भागिनः कुरु, (वयम्) अतिस्तोतव्याः (सन्तः) तव सहमादिनो भवेम ॥१५॥

भाषार्थः ।

हे वलोंके कारण प्रतापशाली ! धन वाले (इन्द्र!) वह आप की दयाबुद्धि हम में क्षीण न हो, अन्न हमारे चारों ओर हों, स्वामी आप गौओं में हम को भागी बनावें, हम अत्यन्त स्तुति के योग्य हुए २ आप के साथ मोद करने वाले हों ॥ १५ ॥

इत्येकविंशत्यधिकशततमं सूक्तम् ॥

ऋ०मं०१ सू०१२२।

विश्वेदेवादेवताः ऋक्षीवानृषिः।

विनियोगोलैङ्गिकः।

सूक्त का भावार्थ।

हे मरुतो! आप जो क्रोध करके शीघ्र दयालु होजाते हो ऐसे आपके लिये हम दानीरुद्र को हवि अर्पण करते हैं जिस में आपका भी भाग है, मैं रुद्र के साथ मरुतों की स्तुति इस लिये करता हूं कि वे आकाश और पृथिवी के बाणधारी वीरों की न्याईं सदा हमारी रक्षा में तत्पर रहते हैं।१। दिन और रात्रिदेवता भक्त को पहिली पुकार पर ही पत्नी की न्याईं तुरन्त उत्तर देती हैं, वे भिन्न प्रकार से जानी जाती हैं, एक तो धूएँ जैसे बुने हुए वस्त्रों को पहनती है, दूसरी सूर्य्य की शोभा से सिंगरी हुई ऐसी सुन्दर प्रतीत होती है मानो सोने के आभूषण पहने हुए है।२। भ्रमण करने वाले सूर्य्य का दर्शन हमें मदयुक्त करे, वर्षा करने वाले वायु का स्पर्श हमें मदयुक्त करे, बल के अभिमानीदेवता इन्द्र और महत्त्व के आदर्शरूप पर्वत हमारे उत्साह को बढ़ावें, यह सब देवता हम को धन देने की इच्छा करें।३। उशिक का पुत्र* मेरे लिये अश्विनों को बुलावे, जो आकर मेरी हवि को खावें, मेरी रक्षा करें और मुझे यश से उज्ज्वल करें, हे आर्य्यगण! जलों के पुत्र अग्नि का अर्चन करो, और भक्त की माता पृथिवी और पिता आकाश को ध्याओ।४। हे आर्य्यजन! तुम्हारे लिये उशिक का पुत्र इन्द्र को पुकारता है जैसे पूर्व-

---

* उशिक का पुत्र स्वयं इस मन्त्र का द्रष्टा ऋषि है।

समय में घोषा ने पति की प्राप्ति के लिये पुकारा था, धनों के बांटने वाले पूषादेव की उदारता को जानता हुआ मैं अग्नि की धनराशि का वर्णन करता हूं। ५। हे मित्र और वरुण! मेरी इस पुकार को सुनो, घर घर में जो आर्य्यजन आपको बुलाते हैं उन सब की पुकार को सुनो, हमारा सिन्धुनद जिस का दान प्रसिद्ध है, जो हमारे खेतों को सींच कर हरे भरे करता है और जो खूब सुनने वाला है जलों के साथ हमारी पुकार को सुने। ६। हे मित्र और वरुण! मैं आपके उस दान की प्रशंसा करता हूं जो आपने मुझे यज्ञ में सौ गौएँ दिलाईं और प्रसिद्ध रथी राजा प्रियरथ को तत्काल पुष्टि दी और यह पुष्टि उसके लिये चिरस्थाई हुई। ७। मैं उस बड़े धनी देवजन के दान की स्तुति करताहूं, हम आर्य्यमनुष्य वीर पुत्रों वाले हुए२ इकट्ठे मिलकर धन को भोगें, देवताओं ने अंगिरावंशियों को बहुत अन्न दिया है और मुझे घोड़े रथ और धन का स्वामी बनाया है। ८। हे मित्र और वरुण! जो मनुष्य सब के साथ द्रोह करता हुआ टेढी चाल से चलता है और आपके साथ द्वेष करता हुआ सोम को नहीं निचोड़ता† उस के हृदय में नाश का मूल यक्ष्मा रोग स्थापन होता है। ‡और जो मनुष्य दैवीनियम के अनुकूल सत्य पर चलता हुआ स्तुति की वाणियों से आपको प्राप्त होता है। ९। वह मनुष्य देवताओं से प्रेरित होकर अत्यन्त बलवान यशस्वी त्यागशील और सदा शूरवीर होता है, वह

---

† अभिप्राय यह है कि जो नास्तिक बुद्धि रखता हुआ किसी प्रकार से ईश्वर का पूजन नहीं करता।

‡ अर्थात कुछ काल के अनन्तर वह समूल नष्ट हो जाता है॥

युद्ध में निःशंक होकर जाता है और अपने से बड़े से भी नहीं डरता। १०। हे आनन्द के देने वालो ! अमर राजाओ ! आप अब आकर स्तुति करने वाले भक्त की पुकार को सुनो, आकाश में वेग से चलते हुए आप रथी की पुकार को सुन कर उसे युद्ध में जिता कर धन दिलाते हो, जिससे आपका यश बढ़े ।११। देवताओं ने कहा है कि जो सोम निचोड़ कर यज्ञ में हमें बुलाएगा हम उसके लिये बल को लेकर आवेंगे, यश और धन का समूह जिन में स्थिर है ऐसे देवता हमारे यज्ञ में आकर हमसे अर्पण किये हुए अन्न को सेवन करें ।१२। जब दस चमसों में सोम को उठाए हुए ऋत्विज लोग आहुति देने के लिये अग्नि की ओर जाते हैं तब हम हर्ष से युक्त होते हैं, जिन के घोड़े और रासें इच्छानुकूल हों वह हम क्या करें, घोड़े मालिक हैं और वीरों को जय के लिये स्वयं युद्ध की ओर प्रेरण करते हैं ।१३। जिसके सोने के कान और रत्नों से जड़ी हुई ग्रीवा है उस धनरूप सूर्य्यको देवता हमें देवें, आर्य्य की स्तुति से तत्काल आने वाली उषाएँ स्तुति करने वाले और हवि देने वाले दोनों से प्रेम करें ।१४। हे मित्र और वरुण ! मुझे राजा मशर्शार ने चार और राजा आयवस ने तीन नई उमर के घोड़े दान किये हैं, मुझ पर अनुग्रह रूपी आपका लंबा रथ चमका है जिस के किरणों के डंडे हैं और जिस का सूर्य्यजैसा प्रकाश है।१५।

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

प्रवःपान्तंरघुमन्यवोऽन्धो यज्ञं रुद्रायमीळ्हुषेभरध्वम् । दिवोअ-

स्तोष्यसुरस्यवीरैरिषुध्येवमरुतो रोदस्योः ॥ १ ॥

प्र	प्र+	–
वः	युष्मान्	तुम्हें
पान्तम्	पालयन्तम्	पालते हुए को
रघुऽमन्यवः	हेलघुक्रोधाः !	हे शीघ्रगामी क्रोधवाले
अन्धः	अन्नम् (निघं०२।७)	अन्न को
यज्ञम्	यज्ञम्	यज्ञ को
रुद्राय	रुद्राय	रुद्र के लिये
मीळ्हुषे	दानिने	दानी के लिये
भरध्वम्	प्र+भरध्वम्, सम्पादयामः (पुरुषव्यत्ययः)	हम संपादन करते हैं

दिवः	द्युलोकस्य	द्युलोक के
अस्तोषि	स्तौमि (लडर्थे छान्दसो लुङ्)	स्तुति करता हूं
असुरस्य	प्राणवतः	प्राणवान के
वीरैः	वीरैः	वीरों के साथ
इषुध्याऽइव	इषूणांधारकाइव (गुणाभावे यणादेशः, विभक्तेरात्वम्)	बाणोंके धारण करनेवालोंकीन्याइ
मरुतः	मरुतः	मरुत
रोदस्योः	द्यावापृथिव्योः (निघं०)	द्यौ (और) पृथिवी के

संस्कृतार्थः।

हे लघुक्रोधाः! (मरुतः!) युष्माकं पालयितारम् अन्नरूपं यज्ञम् (वयम्) दानिने रुद्राय सम्पादयामः, (अहम्) प्राणवतो द्युलोकस्य वीरैः सह(रुद्रम्) स्तौमि (यतस्ते) द्यावापृथिव्योर्बाणानां धारयितार इव (सन्ति) ॥ १ ॥

भावार्थः।

हे शीघ्रगामी क्रोध वाले (मरुतो !) आपके पालने वाले अन्नरूप यज्ञ को हम दानी रुद्र के लिये संपादन करते हैं, मैं प्राणवान द्युलोक के वीरोंके साथ (रुद्रकी) स्तुति करता हूं (क्योंकि वे) द्यौ (और) पृथिवी के वाण धारण करने वालों की न्याईं (हैं) ॥ १॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।१११११११११

पत्नीवपूर्वहूतिंवावृधध्या उषासानक्तापुरुधाविदाने । स्तरीर्नाऽत्कंव्युतंवसाना सूर्यस्यश्रियासुदृशीहिरण्यैः ॥ २ ॥

पत्नीऽइव	पत्नीव	पत्नी की न्याईं
पूर्वऽहूतिम्	पूर्वाह्वानम्	पहिली पुकार को

वव्रधध्यै	वक्तुम् (वृधुभाषणेतुमर्थेशध्यै प्रत्ययः)	बोलने के लिये
उषसानक्ता	अहोरात्रिदेवते (उभयत्रविभक्तेरात्वम्)	दिन (और) रात्रि देवता
पुरुधा	भिन्नप्रकारेण	भिन्न प्रकार से
विदाने०	ज्ञायमाने (व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदे सति विदेः कर्मणि लटः शानच्)	जानी जाती हुई
स्तरीः	धूम्रः (आ०को०)	धूआँ
न	इव	की न्याईं
अत्कम्	वस्त्रम् (आ० को०)	वस्त्र को
विऽउतम्	व्यूतम्	बुने हुए को
वसाना	परिदधाना	पहिनती हुई

सूर्य॑स्य	सूर्यस्य	सूर्य की
श्रि॒या	शोभया	शोभा से
सु॒ऽदृशी॑	शोभनंदृश्यमाना	सुन्दर दीखती हुई
हिर॑ण्यैः	स्वर्णालङ्कारैः	सोनेकेअलंकारोंसे

संस्कृतार्थः ।

भिन्नप्रकारेण ज्ञायमाने अहोरात्रिदेवते पत्नीव पूर्वाह्वाने वक्तुम् (स्पृहयेते,) (एका) धूम्र इव व्यूतं वस्त्रं परिदधाना (आस्ते,द्वितीया तु) सूर्यस्य शोभया स्वर्णालङ्कारैः सुदृश्यमाना (विद्यते) ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

दिन (और) रात्रि देवता जो भिन्न प्रकार से जानी जाती हैं पत्नी की न्याईं पहली पुकार पर बोलने के लिये (उत्सुक होती हैं,) एक धूएँ की न्याईं बुने हुए वस्त्र को पहिने हुए(हैं,और दूसरी)सूर्य्य की शोभा द्वारा सोने के भूषणों से सुन्दर दीखती(है) ॥२॥

विश्वेदेवादेवता निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।१११११११११

म॒मत्तु॑ नः॒ परि॑ज्मा वस॒र्हा म॒मत्तु॑

वातो॒अपां॒वृष॑ण्वान्। शि॒शी॒तमि॑न्द्रा- पर्व॑तायु॒वं॒न् स्तन्नो॒विश्वे॒व॑रिवस्य- न्तुदे॒वाः ॥ ३ ॥

म॒मत्तु	मादयतु (मदीहर्षे, अन्तर्भावितण्यर्थाल्लोटि विकरणस्य श्लुश्छान्दसः)	मद से युक्त करे
नः	अस्मान्	हम को
प॒रि॒ऽज्मा	परितोगन्ता (सूर्य्यः)	भ्रमण करने वाला(सूर्य्य)
व॒स॒र्हा	वासरस्यगमयिता (सा०भा०)	दिनके प्राप्त कराने वाला
म॒मत्तु	मादयतु	मद से युक्त करे
वातः	वायुः	वायु
अ॒पाम्	अपाम्	जलों के

वृषण्ऽवान्	वर्षणवान्	बरसाने वाला
शिशीतम्	तीक्ष्णीकुरुतम, उत्तेजयतमित्यर्थः	उत्तेजित करो
इन्द्रापर्वता	हे इन्द्रापर्वतौ !	हे इन्द्र (और) पर्वत
युवम्	युवाम्	तुम दोनों
नः	अस्मान्	हम को
तत्	ते (विभक्तेर्लुक्)	वे
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
विश्वे	सर्वे	सब
वरिवस्यन्तु	धनंदातुमिच्छन्तु (वरिवइतिधननाम, निघं० २।१० तस्मात्क्यच्प्रत्ययः)	धन देने की इच्छा करें
देवाः	देवाः	देवता

संस्कृतार्थः ।

वासरस्य गमयिता परितोगन्ता (सूर्यः) अस्मान् मादयतु, अपां वर्षिता वायुः (च)मादयतु, हे इन्द्रापर्वतौ ! युवाम् अस्मानुत्तेजयतम्, एते सर्वे देवा अस्मभ्यं धनं दातुमिच्छन्तु ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

दिनके प्राप्त कराने वाला (और) चारों ओर भ्रमण करने वाला(सूर्य) हमें मद से युक्त करे(और) जलोंके बरसाने वाला वायु मद से युक्त करे,हे इन्द्र (और)पर्वत ! आप हमें उत्तेजित करें,ये सब देवता हमारे लिये धन देने की इच्छा करें ॥ ३ ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुपूछन्दः ।११।११।११।११।

उतत्यामेयशसाश्वेतनायै व्यन्तापान्तौशिजोहुवध्यै । प्रवोनपातमपांकृणुध्वं प्रमातरारास्पिनस्यायोः ।४।

वृषण्ऽवान्	वर्षणवान्	बरसाने वाला
शिशीतम्	तीक्ष्णीकुरुतम, उत्तेजयतमित्यर्थः	उत्तेजित करो
इन्द्रापर्वता	हे इन्द्रापर्वतौ !	हे इन्द्र (और) पर्वत
युवम्	युवाम्	तुम दोनों
नः	अस्मान्	हम को
तत्	ते (विभक्तेर्लुक्)	वे
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
विश्वे	सर्वे	सब
वरिवस्यन्तु	धनंदातुमिच्छन्तु (वरिवइतिधननाम, निघं० २।१० तस्मात्क्यच्प्रत्ययः)	धन देने की इच्छा करें
देवाः	देवाः	देवता

नपातम्	पुत्रम्	पुत्र को
अपाम्	अपाम्	जलों के
कृणुध्वम्	प्र+कृणुध्वम्, अर्चयत (आ०को०)	पूजो
प्र	प्र+(कृणुध्वम्) अर्चयत	पूजो
मातरा	मातरौ (विभक्तेराद्यम्)	माताओं को
रास्पिनस्य	स्तोतुः (निघं०४।३)	स्तोता के
आयोः	मनुष्यस्य (निघं० २।३)	मनुष्य के

संस्कृतार्थः ।

अपिच उशिजः पुत्रो यशसा ममोज्ज्वलनार्थम् (हविः) भक्षयन्तौ रक्षन्तौ (चाऽश्विनौ) आह्वयितुम् (प्रवृत्तो भवत्) (हे आर्य्याः !) यूयम् अपां पुत्रम् अर्चयत, स्तोतुर्मनुष्यस्य मातरौ (द्यावापृथिव्यौ च) अर्चयत ॥ ४ ॥

भावार्थः ।

और उशिक् का पुत्र यशसे मेरे उज्ज्वल होने के

उत	अपिच	और
त्या	तौ (विभक्तेरात्वम्)	उन दोनों को
मे	मम	मे
यशसा	यशसा	यश से
श्वेतनायै	उज्ज्वलनार्थम्	उज्वल होने के लिये
व्यन्ता	व्यदन्तौ, [हविः] भक्षयन्तौ (दकारलोपश्छान्दसः)	[हवि] भक्षण करने वालों को
पान्ता	पान्तौ	रक्षाकरनेवालों को
औशिजः	उशिजःपुत्रः	उशिक का पुत्र
हुवध्यै	आह्वयितुम् (तुमर्थेशध्यै)	बुलाने के लिये
प्र	प्र+	–
वः	यूयम् (प्रथमार्थेद्वितीया)	तुम सब

औशिजः	उशिजः पुत्रः	उशिक् का पुत्र
हुवध्यै	आ + हुवध्यै, आ-ह्वयितुम्	बुलाने के लिये
घोषाऽइव	घोषेव	घोषा की न्याईं
शंसम्	आह्वानम्	पुकार को
अर्जुनस्य	अर्जुनस्य	अर्जुन की
नंशे	प्राप्तये	प्राप्ति के लिये
प्र	प्र+	—
वः	युष्मदर्थम्	आपके लिये
पूष्णे	पूषणम् (द्वितीयार्थेचतुर्थी)	पूषा को
दावने	दानितम्	दानी को
आ	आ+	

लिये उन (हवि) खानेवाले (और) रक्षा करने वाले (अश्विनों) को बुलाने में (प्रवृत्तहो) (हे आर्यों !)तुम जलों के पुत्र की पूजा करो (और) स्तोता मनुष्य की माताओं (द्यौ और पृथिवी) की पूजा करो ॥ ४ ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।१११११११११

आवोरुवण्युमौशिजोहुवध्यै घोषेवशंसमर्जुनस्यनंशे । प्रवःपूष्णे दावनआँअच्छा वोचेयवसुतातिमग्नेः ।५।

आ	आ +	–
वः	युष्मदर्थम्	आप के लिये
रुवण्युम्	गर्जितारम्	गरजने वाले को

औशिजः	उशिजः पुत्रः	उशिक् का पुत्र
हुवध्यै	आ + हुवध्यै, आ-ह्वयितुम्	बुलाने के लिये
घोषाऽइव	घोषेव	घोषा की न्याईं
शंसम्	आह्वानम्	पुकार को
अर्जुनस्य	अर्जुनस्य	अर्जुन की
नंशे	प्राप्तये	प्राप्ति के लिये
प्र	प्र+	—
वः	युष्मदर्थम्	आपके लिये
पूष्णे	पूषणम् (द्वितीयार्थे चतुर्थी)	पूषा को
दावने	दानिनम् (")	दानी को
आँ	आ+	

अच्छ	आ + अच्छ, अभिलक्ष्य	लक्ष रख कर
वोचेय	प्र + वोचेय, प्रवच्मि (लडर्थे लिङ्)	कथन करता हूं
वसुऽतातिम्	धनराशिम् (तातिल् प्रत्ययः)	धनराशि को
अग्नेः	अग्नेः	अग्नि की

संस्कृतार्थः ।

(हे आर्य्याः!) उशिजः पुत्रो युष्मदर्थं गर्जितारम् (इन्द्रम्)आह्वयितुम् (प्रवृत्तो भवति) यथा घोषा अर्जुनस्य प्राप्तये आह्वानम् (कृतवती) (अहम्) युष्मदर्थं दानिनं पूषणम्अभिलक्ष्य अग्नेर्धनराशिंवर्णयामि॥५॥

भापार्थः ।

(हे आर्यगण!) उशिक् का पुत्र आपके लिये गर्जनेवाले (इन्द्र)को बुलानेके लिये (प्रवृत्त होता है) जैसे घोषा ने अर्जुन की प्राप्ति के लिये बुलाया था, मैं आप के लिये दानी पूषा को लक्ष में रख कर अग्नि की धनराशि का वर्णन करता हूं ॥ ५ ॥

घोषा ने पति की प्राप्ति के लिये(इन्द्र को)बुलाया था, सम्भव है कि अर्जुन उस के पति का नाम हो ।

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

श्रुतं मे मित्रावरुणा हवेमोत श्रुतं सदने विश्वतः सीम् । श्रोतु नः श्रोतुरातिः सुश्रोतुः सुक्षेत्रा सिन्धुरद्भिः ।६।

श्रुतम्	शृणुतम् (विकरणस्यलुक्)	सुनो
मे	मम	मेरी
मित्रावरुणा	हे मित्रावरुणौ !	हे मित्र (और) वरुण
हवा	आह्वानानि (शेर्लोपः)	पुकारों को
इमा	इमानि (,,)	इन को
उत	अपिच	और भी
श्रुतम्	शृणुतम्	सुनो
सदने	गृहे	घर में

विश्वतः	सर्वतः	सब ओर से
सीम्	(पूरणः)	–
श्रोतु	शृणोतु	सुने
नः	अस्माकम्	हमारे
श्रोतुऽरातिः	प्रसिद्धदानः	प्रसिद्ध दानी
सुऽश्रोतुः	सुश्रोता (औणादिकं रूपम्)	खूब सुनने वाला
सुऽक्षेत्रा	सुक्षेत्रः (विभक्तेरात्वम्)	सुन्दर खेतों वाला
सिन्धुः	सिन्धुः	सिन्धु
अत्ऽभिः	अद्भिःसह	जलों के साथ

संस्कृतार्थः ।

हे मित्रावरुणौ!(युवाम्)इमानि मदीयानि आह्वानानि शृणुतं, गृहे(च)विश्वतः (आह्वानानि) शृणुतम्, प्रसिद्धदानः, सुश्रोता, सुक्षेत्रः (च)सिन्धुः अद्भिः सह अस्मान् शृणोतु ॥ ६ ॥

भावार्थः।

हे मित्र (और) वरुण ! आप इन मेरी पुकारों को सुनो,(और)घर में सब ओर से (पुकारों को) सुनो, प्रसिद्धदानी, खूब सुनने वाला (और) सुन्दर खेतों वाला सिन्धु जलों के साथ हम को सुने ॥ ६ ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

स्तुषेसावांवरुणामित्ररातिर्गवां

शतापृक्षयामेषुपज्रे। श्रुतरथेप्रियरथे

दधानाः सद्यःपुष्टिंनिरुन्धानासो

अग्मन्। ७।

स्तुषे	स्तुवे (व्यत्ययेन मध्यमः)	स्तुति करता हूं
सा	तत् (विभक्तेःसुः)	उस को
वाम्	युवयोः	तुम दोनों के

वरुण	हे वरुण !	हे वरुण
मित्र	हे मित्र !	हे मित्र
रातिः	दानम् (विभक्तेःलुः)	दान को
गवाम्	गवाम्	गौओं का
शता	शतम् (विभक्तेरात्वम्)	सैंकड़ा
पृक्षऽयामेषु	पृक्षाणामन्नानां यामः नियमनं येषु तथोक्तेषु (यज्ञेषु) (पृक्षइत्यन्ननाम निघं०२।७)	अन्न से युक्त हुए (यज्ञों) में
पज्रे	पज्रवंशीये	पज्रवंशी में
श्रुतऽरथे	प्रसिद्धरथोपेते	प्रसिद्धरथवाले में
प्रियऽरथे	प्रियरथे	प्रियरथ में

दधानाः	धारयन्तः	धारण करते हुए
सद्यः	तत्कालम्	तत्काल
पुष्टिम्	पुष्टिम्	पुष्टि को
निऽरुन्धानासः	स्थिरीकुर्वन्तः (जसोऽसुगागमः)	स्थिर करते हुए
अग्मन्	प्राप्नुवन्	पहुंचे

संस्कृतार्थः।

हे वरुण ! हे मित्र ! (अहम्) युवयोः तद् दानं स्तुवे (यद् देवाः) यज्ञेषु पज्रवंशीये (मयि) गवांशतं, प्रसिद्धरथोपेते प्रियरथे (च) सद्यः पुष्टिं दधानाः स्थिरीकुर्वन्तः (च) प्राप्तवन्तः ॥७॥

भाषार्थः।

हे वरुण!हे मित्र! मैं आपके उस दानकी स्तुति करता हूं जो यज्ञों के बीच(देवता)(मुझ)पज्रवंशीमें सौ गौओं को (और) प्रसिद्ध रथ वाले (राजा) प्रियरथ में तत्काल पुष्टि को धारण (और) स्थिर करते हुए पहुंचे ॥ ७॥

विश्वेदेवादेवताः,त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११

अस्यस्तुषेमहिमघस्यराधः स-
चासनेमनहुषःसुवीराः । जनोयः
पज्रेभ्योवाजिनीवा नश्वावतोरथि-
नोमह्यंसरिः ।८।

अस्य	अस्य	इस के
स्तुषे	स्तुवे (व्यत्ययेन मध्यमः)	स्तुति करता हूं
महिऽमघस्य	महाधनिन.	महाधनी के
राधः	दानम् (आ०को०)	दान को
सचा	सह (भूत्वा)	इकट्ठे (होकर)
सनेम	सम्भजेम.	हम भोगें

पृ०	पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्
३१०५	९	यवम्	युवाम्
,,	१३	जार्य्यं	जीर्य्यं
३१०६	१	का	को
३१०७	१६	तुप्राय	तुग्राय
३१०८	१	पु	पू
३१०९	१०	रीति	रीतियों
३११०	९	सुम्	सुमू
३१११	८	हेवारौ!	हेवीरौ!
३११३	२	अरु	अमु
३११६	१	देवा	देवो
३११९	१७	ब्पया	ब्पुया
,,	,,	युचा	युचा
३१२२	१५	अघे	अधे
,,	,,	सा	म्रा
३१२३	७	घसेदू	दूघसे
३१२९	४	हुईका	हुईको
३१३७	१६	आदव	अश्वि
,,	,,	मन	मनु
३१३८	२१	पुनर्य	पुनर्यु
३१३९	१२	रथी	रथो
,,	१४	जघो	जघी
,,	१७	घाम्	घाम्
[illegible]	[illegible]	मर्त्यस्य	मार्त्यस्य
३१४४	९	तान	तीन
३१४६	१०	पुरा	पुरा
३१४८	६	यक्तासः	युक्तासः
३१५४	८	लट,	लट्,
,,	१०	नः	पुनः
३१५७	१	चक्षः	चक्षुः
,,	४	तु ने फ	तुमने फिर दिया
३१५८	८	`	वे
३१५९	९	प्रात	प्रति
३१६०	१	नाम्	गाम्
३१६५	३	स्तुताः	स्तुतीः
३१६८	१२	ङ्गा	ङ्प्रा
,,	१४	र्थम	र्थम्
,,	२०	दीर्घायु	दीर्घायुर्वं
३१६९	११	बाधा	घोधा
३१७०	१७	ह्वेशो	ह्वेशो
३१७१	११	का	फो
३१८१	७	नष्टं	नष्ट
३१८८	३	यवम्	युघम्
३१९०	९	प्राप्तं	नष्टप्रायं
३१९२	८	चित्रा	चित्राः
३१९३	११	यघं	युवं
३११४	१५	यवम्	युघम्

विज्ञापन।

इस अंक के साथ छठा साल पूरा होगया है, जिन स्वाध्यायी पंडितों की सूचना आएगी उन का नाम सातवें साल के रजिस्टर में लिखा जावेगा, जिन की नहीं आवेगी उनके नाम अगला अंक नहीं जायगा—पिछले अंक डाक महसूल भेजने से भेजे जावेंगे।

मुन्शी जयराम
मैनेजर ऋग्वेद संहिता,
फ़ीरोज़पुर छावनी।

अंक ७३-७४] [भाद्रपद १९६९

ऋग्वेद संहिता

(वैदिक जीवनव्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद
टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर
व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलताननिवासी पं॰ शङ्करदत्तशास्त्री
की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने
सम्पादन किया।

लाहौर
पञ्जाब एकानोमीकल यन्त्रालय में प्रिण्टर लाला
लालमन के अधिकार से छपा।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २)
पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)
७० अंकों का मूल्य १३≠)

नहुषः	मनुष्याः (निघं०२।३)	मनुष्य
सुऽवीराः	सुवीरोपेताः	सुन्दरवीरोंसे युक्त
जनः	(देव–)जनः	[देव-] समूह
यः	यः	जो
पज्रेभ्यः	पज्रवंशीयेभ्यः	पज्रवंशियों के लिये
वाजिनीऽवान्	प्रभूतेनाऽन्नेन युक्तः	बहुत अन्न वाला
अश्वऽवतः	अश्वोपेतस्य	घोड़ों से युक्त के
रथिनः	रथिनः	रथ से युक्त के
मह्यम्	मह्यम्	मेरे लिये
सूरिः	प्रेरयिता (षुप्रेरणे)	प्रेरण करने वाला

संस्कृतार्थः ।

(अहम्)अस्य महाधनिनः (देव-) जनस्य दानं स्तौमि, (वयमार्य्य-) मनुष्याः सुवीराः (सन्तः) सह (भूत्वा) सम्भजेम, यः (देव·) जनः-पञ्चवंशीयेभ्यः प्रभूतेनाऽन्नेन युक्तो मह्यम् (च) अश्वोपेतस्य रथोपेतस्य (च धनस्य) प्रेरयिता (अस्ति)॥८॥

भाषार्थः ।

मैं इस महाधनी (देव-) जन के दान की स्तुति करता हूं, (हम आर्य–) मनुष्य सुन्दर वीरोंसे युक्त (हुए २) इकट्ठे मिल कर भोगें जो (देवजन) अंगिरावंशियों के लिये बहुत अन्न वाले (और) मेरे लिये घोड़ों से (और) रथोंसे युक्त (धन) के प्रेरण करने वाले हैं ॥ ८ ॥

मित्रावरुणौदेवते, निचृत् त्रिष्टुप्छन्दः॥११।११।११।१०

जनोयोमित्रावरुणावभिध्रुगपो-
नवांसनोत्यद्दणायाध्रुक्। स्वयंसय-
क्ष्मंहृदयेनिधत्त आपयदींहोत्राभि-
र्ऋतावा॥ ९ ॥

जनः	मनुष्यः	मनुष्य
यः	यः	जो
मित्रावरुणौ	हे मित्रावरुणौ !	हे मित्र[और] वरुण
अभिऽध्रुक्	अभितो द्रोग्धा	सब ओर से द्रोह करने वाला
अपः	जलमयान् [सोमान्]	जलमय(सोमों)को
न	न	नहीं
वाम्	युवाभ्याम्	तुम दोनों के लिये
सुनोति	निष्पीडयति	निचोड़ता है
अक्ष्णयाऽ-ध्रुक्	कुटिलगत्या द्वेष्टा	टेढी चाल से द्वेष करने वाला
स्वयम्	स्वयम्	अपने आप
सः	सः	वह

यक्ष्मम्	यक्ष्मरोगम्	यक्ष्मा रोग को
हृदये	हृदये	हृदय में
नि	नि+	–
धत्ते	नि+धत्ते,स्थापयति	स्थापन करता है
आप	प्राप्नोति (लडर्थे लिट्)	प्राप्त होता है
यत्	यः (विभक्तेर्लुक्)	जो
ईम्	[पूरणः]	–
होत्राभिः	वाग्भिः (निघं०१।११)	वाणियों से
ऋतऽवा	ऋतयुक्तः	नियम से युक्त

[संस्कृतार्थः]

हे(मित्रावरुणौ!) अभितो द्रोग्धा यो मनुष्यः कुटिलगत्या द्वेष्टा (सन्) युवाभ्यां जलमयान् (सोमान्) न निष्पीडयति, स स्वयं हृदये यक्ष्मरोगं

स्थापयति, यः (च जनः) ऋतेन युक्तः (सन् स्तुति-रूपाभिः) वाग्भिः (युवाम्) प्राप्नोति ॥ ९ ॥

भाषार्थः ।

हे मित्र (और) वरुण ! सब से द्रोह करने वाला जो मनुष्य टेढी चाल से द्वेष करता हुआ आपके लिये जलमय (सोमों) को नहीं निचोड़ता, वह अपने आप हृदय में यक्ष्मा रोग को स्थापित करता है, (और) जो मनुष्य नियम से युक्त हुआ२ स्तुतिरूप वाणियों से (आपको) प्राप्त होता है ॥ ९ ॥

इस का सम्बन्ध अगले मंत्र के साथ है ।

विश्वेदेवादेवता निचृत्त्रिष्टुपृछन्दः ।११।१०।११।११

सत्राधतोनहुषोदंसुजतः प्र-ध्र्स्तरोनरांगूर्तश्रवाः।विसृष्टराति-र्यातिबाळ्हसृत्वा विश्वासुपृत्सु सदमिच्छूरः ॥१०॥

सः	सः	वह
आधतः	महतः (निघं०३।३)	महानों को
नहुषः	मनुष्यान् (निघं०२।३)	मनुष्यों को
दम्ऽसुजूतः	दानशीलैः (देवैः) सुप्रेरितः	दानी (देवताओं) से खूब प्रेरण किया हुआ
शर्धःऽतरः	बलवत्तरः (शर्धइति बलनाम निघं०२।९)	अत्यन्त बलवान्
नराम्	नराणाम् (मध्ये) (वर्णापायश्छान्दसः)	नरों के (बीच)
गूर्तऽश्रवाः	विख्यातयशाः	प्रसिद्ध यश वाला
विसृष्टऽरातिः	विसृष्टा त्यक्ता रातिर्दानं येन तथोक्तः,	त्यागशील

याति	प्राप्नोति	जाता है
बाळ्हऽ-सृत्वा	भृशं सर्ता, अशङ्कितगमनः (सर्तेः क्वनिप्)	निश्शङ्क होकर जाने वाला
विश्वासु	सर्वेषु	सब में
पृत्ऽसु	सङ्ग्रामेषु (निघं०२।१७)	युद्धों में
सदम्	सदा	सदा
इत्	एव	ही
शूरः	शूरः	शूरवीर

संस्कृतार्थः ।

स दानशीलैः (देवैः) सुप्रेरितः, नराणाम् (मध्ये) बलवत्तरः, विख्यातयशाः, त्यागशीलः सर्वेषु सङ्ग्रामेषु सदैव शूरः महतो मनुष्यान् (अपि) अशङ्कितगमनः (सन्) प्राप्नोति ॥ १० ॥

भावार्थः ।

वह दानशील (देवताओं) से खूब प्रेरित हुआ,

नरों के [बीच] अत्यन्त बलवान्, प्रसिद्धयशवाला, त्यागशील [और]सब युद्धों में सदा शूरवीर वड़ेमनुष्यों के सामने [भी] निश्शङ्क (होकर) जाता है ॥ १० ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अधग्मन्तानहुषोहवंसूरेः श्रोतारा जानोअमृतस्यमन्द्राः। नभोजुवोयन्निरवस्यराधः प्रशस्तयेमहिनारथवते ॥ ११ ॥

अध	अथ	अब
ग्मन्त	प्राप्नुत (गमेर्लडर्थेलङि व्यत्ययेन तः,शपोलुक्, उपधालोपश्च)	तुम प्राप्त हो
नहुषः	मनुष्यस्य (निघं०२।३)	मनुष्य की

ह्वम्	आह्वानम्	पुकार को
सूरेः	स्तोतुः (निघं० ३।१६)	स्तोता की
श्रोत	शृणुत (शपोलुक्)	सुनो
राजानः	हे राजानः!	हे राजाओ
अमृतस्य	अमृतस्य	अमृत के
मन्द्राः	हे हर्षयितारः!	हे हर्ष के देने वाले
नभःऽजुवः	नभसि वेगवन्तः	आकाश में वेग वाले
यत्	ये (विभक्तेर्लुक्)	जो
निरवस्य	निर्गतो मुखादुच्चरितोरवःशब्दो यस्य तस्मै (चतुर्थ्यर्थे षष्ठी)	पुकारने वाले के लिये
राधः	धनम्	धन को

प्रऽशस्तये	प्रशंसार्थम्	प्रशंसा के लिये
महिना	महत्त्वेन (मकारलोपश्छान्दसः)	महत्त्व से
रथऽवते	रथवते	रथी के लिये

संस्कृतार्थः।

हे हर्षयितारः ! अमृतस्य राजानः ! (देवाः!) (ते यूयम्) इदानीमागच्छत, स्तोतुर्मनुष्यस्याऽऽह्वानं शृणुत, नभसि वेगवन्तो ये (यूयम्) आह्वयित्रे रथवते (निज-)महत्त्वेन प्रशंसार्थं धनम् (प्रयच्छथ) ॥ ११ ॥

भाषार्थः।

हे हर्ष के देने वाले ! अमृत के राजा (देवताओ!) (वे) आप अब आओ, स्तोता मनुष्य की पुकार को सुनो, आकाश में वेग वाले जो आप पुकारने वाले रथी के लिये (अपने) महत्त्व से प्रशंसा के लिये धन को (देते हो) ॥ ११ ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।१।१।१।१।१।११

एतंशर्धंधामयस्यसूरे रित्यवो-

चन्दशंतयस्यनंशे । द्युम्नानियेषु वसुतातीरारन् विश्वेसन्वन्तुप्रभृथेषुवाजम् ॥ १२ ॥

एतम्	एतत्	इस को
शर्धम्	बलम्	बल को
धाम	धारयिष्यामः (दधातेर्लृडर्थे लुङि सिचोलुक्,अडभावः)	हम धारण करेंगे
यस्य	यस्य	जिसके
सूरेः	स्तोतुः	स्तोता के
इति	इति	ऐसे
अवोचन्	उक्तवन्तः	कहा

द॒श॒ऽत॒यस्य	दशचमसेष्ववस्थितस्य(सोमस्य) (सा०भा०)	दस चमस पात्रों में रक्खे हुए (सोम) की
न॒ंशे	प्राप्तये (,,)	प्राप्ति के लिये
द्यु॒म्नानि॑	यशांसि	यश
ये॒षु	येषु	जिन में
व॒सु॒ऽता॑ति॒:	धनराशिः	धन का समूह
र॒र॒न्	भृशं रमन्ते (यङ्लुगन्तादरमतेर्लङ्यर्थेलुङि रूपम्)	खूब रमण करते हैं
विश्वे॑	सर्वे	सब
स॒न्व॒न्तु॒	सभजन्ताम् (षण सम्भक्तौ)	सेवन करें
प्र॒ऽभृ॒थेषु॑	यज्ञेषु (सा० भा०)	यज्ञों में
वाज॑म्	अन्नम्	अन्न को

संस्कृतार्थः।

'यस्य स्तोतुर्दशचमसेष्ववस्थितस्य (सोमस्य) प्राप्तये (वयमाहूताःस्मः, तस्मै) एतद्बलंधारयिष्यामः' इति (देवाः) उक्तवन्तः, येषु यशांसि धनानि (च) रमन्ते (ते) विश्वे (देवाः) यज्ञेषु अन्नं सम्भजन्ताम् ॥ १२ ॥

भावार्थः।

'जिस स्तोता के दश चमसों में रक्खे हुए(सोम) की प्राप्ति के लिये(हम बुलाए गए हैं, उसके लिये) इस बल को धारण करेंगे' ऐसा (देवताओं ने) कहा, जिन में यश (और) धन रमण करते हैं वे सब (देवता) यज्ञों में अन्न को सेवन करें।१२

विश्वेदेवादेवताः,त्रिष्टुपूछन्दः ।११।१३।११।११

मन्दामहेदशतयस्यधासे द्विर्य-

त्पञ्चबिभ्रतोयन्त्यन्ना। किमि-

ष्टाश्वइष्टरश्मिरेत ईशानासस्त

रुषऋञ्जतेनॄन्।१३।

मन्दामहे	हृष्यामः	हम हर्षित होते हैं
दशऽतयस्य	दशचमसेष्ववस्थितस्य	दस चमसों में रखे हुए के
धासेः	(सोमरूपस्य) अन्नस्य (निघं॰२।७)	(सोमरूप)अन्न के
द्विः	द्विः+	–
यत्	यदा	जब
पञ्च	द्विः+पञ्च	दो पंजे को
बिभ्रतः	धारयन्तः	धारण करते हुए
यन्ति	गच्छन्ति	जाते हैं
अन्ना	अन्नानि (शेर्लोपः)	अन्नों को
किम्	किम्	क्या
इष्टऽअश्वः	इष्टाश्वोपेताः (सुपामितिविसर्गोऽसुः)	अभीष्ट घोड़ों वाले

इष्टऽरश्मिमः	इष्टरश्मियुक्ताः (,,)	अभीष्ट रासों वाले
एते	एते	ये
ईशानासः	ईशितारः	ईशन करते हुए
तरुषः	जयशीलाः (तरतेरौणादिक उसिः)	जयशील
ऋञ्जते	प्रेरयन्ति	प्रेरण करते हैं
नॄन्	नरान्	वीरों को

संस्कृतार्थः ।

(वयम्) दशचमसेष्ववस्थितस्य (सोमरूपस्य) अन्नस्य (अर्पणेन) हृष्यामः, यदा (अस्मदीयाऋत्विजः) द्विपञ्चकानि (सोमरूपाणि) अन्नानि धारयन्तश्चलन्ति, अभीष्टाऽश्वोपेताः अभीष्टरश्मिवन्तः (च नराः) किम् (कुर्युः,) एते ईशितारो जयशीलाः (चाऽश्वाः) नरान् (युद्धार्थम्) प्रेरयन्ति ॥१३॥

भावार्थः ।

हम दश चमसों में रखखे हुए (सोमरूप) अन्न

के (अर्पण करने से) हर्षित होते हैं, जब (हमारे ऋत्विज) दो पंजे (सोमरूप) अन्नों को धारण करते हुए चलते हैं, अभीष्ट घोड़ों वाले (और) अभीष्ट रासों वाले (नर) क्या करें, ये ईशन करने वाले जयशील (घोड़े) नरों को (युद्ध के लिये) प्रेरण करते हैं ॥१३॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

हिरण्यकर्णंमणिग्रीवमर्णस्त-

न्नोविश्वेवरिवस्यन्तुदेवाः । अर्यो

गिरःसद्यआजग्मुषीरोस्राश्चाक-

न्तूभयेष्वस्मे ।१४।

{हिरण्य-ऽकर्णम्	हिरण्ययुक्तकर्णवन्तम्	सोने से युक्त कानों वाले को
मणिऽग्रीवम्	मणियुक्तया-ग्रीवयायुक्तम्	मणियों से युक्त ग्रीवा वाले को

अर्णां:	क्षोभयुक्तम्	क्षोभ वाले को
तत्	तत्	उस को
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
विश्वे	सर्वे	सब
वरिवस्यन्तु	धनंदातुमिच्छन्तु (वरिवइतिधननाम निघं०क्यच् प्रत्ययः)	धन देनेकी इच्छा करें
देवाः	देवाः	देवता
अर्य्यः	आर्य्यस्य (ह्रस्वश्छान्दसः,सुपामितिविभक्तेःसुः)	आर्य्य की
गिरः	स्तुतीः	स्तुतियों को
सद्यः	तत्कालम्	तत्काल
आ	आ +	–
जग्मुषीः	आ+जग्मुषीः, आगतवत्यः (पर्वसवर्णदीर्घः)	आई हुई

आ	आ+	–
उस्राः	उषमः (आ०को०)	उषाएँ
चाकन्तु	आ+चाकन्तु, प्रीतिं कुर्वन्तु	अनुराग करें
उभयेषु	उभयेषु	दोनों में
अस्मे०	अस्मासु (सप्तम्याःशेआदेशः)	हम में

संस्कृतार्थः।

सर्वेदेवाः अस्मभ्यं हिरण्ययुक्तकर्णवन्तं मणियुक्तया ग्रीवया युक्तम् [च] क्षोभयुक्तम् [सूर्य्यम्] धनरूपेण दातुमिच्छन्तु, आर्यस्य स्तुतीःप्रति सद्यः आगतवत्यउषसः (हविर्दातरि स्तोतरिचेति) उभयेषु अस्मासु प्रीतिं कुर्वन्तु ॥ १४ ॥

भावार्थः।

सब देवता [हमारे लिये] सोने से युक्त कानों वाले [और] मणियों से युक्त ग्रीवा वाले क्षोभयुक्त [सूर्य]को धनरूप से देने की इच्छा करें, आर्य की स्तुतियों के प्रति तत्काल आई हुई उषाएँ [हवि देने वाले और स्तोता इन) हम दोनों में अनुराग करें ॥ १४ ॥

मित्रावरुणौदेवते, त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११।

चत्वारोमामशर्शारस्यशिश्व

स्त्रयोराज्ञआयवसस्यजिष्णोः। रथो

वांमित्रावरुणादीर्घाप्साः स्यूमग-

भस्तिःसूरोनाऽद्यौत् ।१५।

चत्वारः	चत्वारः	चार
मा	माम्	मुझ को
मशर्शारस्य	मशर्शारस्य	मशर्शार के
शिश्वः	शिशवः (गुणाभावे यणादेशः)	बालक
त्रयः	त्रयः	तीन
राज्ञः	राज्ञः	राजा के

आयवसस्य	आयवसस्य	आयवस के
जिष्णोः	जयशीलस्य	जीतने वाले के
रथः	रथः	रथ
वाम्	युवयोः	तुम दोनों का
मित्रावरुणा	हे मित्रावरुणौ !	हे मित्र (और) वरुण
दीर्घाऽप्साः	दीर्घरूपः (अप्स इति रूपनाम निघं०३।७)	बड़े रूप वाला
स्यूमऽगभस्तिः	किरणरूपदण्डोपेतः	किरण रूपी डंडों वाला
सूरः	सूर्य्यः	सूर्य्य
न	इव	की न्याईं
अद्यौत्	दीप्तवान्	चमका है

संस्कृतार्थः।

हे मित्रावरुणौ ! मां चत्वारः [राज्ञः] मशर्शारस्य, त्रयः [च] जयशीलस्य राज्ञआयवसस्य(अश्व-) शिशवः [प्राप्ताः] किरणरूपदण्डोपेतो दीर्घरूपः [च] युवयोरथः सूर्यइव दीप्तवान् ॥ १५॥

भाषार्थः।

हे मित्र [और] वरुण ! मुझको चार [राजा] मशर्शार के [और] तीन जयशाली राजा आयवसके बालक घोड़े [मिले हैं] किरणरूपी डंडों वाला (और) बड़े रूप वाला आपका रथ सूर्य्य की न्याईं चमका है॥ १५॥

इतिद्वाविंशत्युत्तरशततमं सूक्तम्।

ऋ० मं०१ सू० १२३।

उषादेवता, दीर्घतमसःपुत्रःकक्षीवानृषिः।

विनियोगः-

१—१३। एतत्सूक्तं प्रातरनुवाके उषस्येक्रतौ आश्विनशस्त्रेच विनियुक्तम् ।

सूक्त का भावार्थ।

दक्षिण की ओर उषा का चौड़ा रथ जुड़ गया है * और मरणरहित देवता इस पर चढ़ गए हैं, महारानी उषा मनुष्यसमुदाय के लिये चिकित्सा † करती हुई काले आकाश से उठ खड़ी हैं।१। धन को जीतने वाली दानशीला उषा सारे जगत से पहिले जागी है, वह नित्य नए जोबन वाली युवति ऊंचेस्थान से दृष्टि फैंकती है और हमारी पुकार पर सब देवताओं से पहले आती है।२। हे कुलवन्ती उषा देवि! आप जो आज मरणधर्मियों को अपना २ भाग बांट रही हो हमें यह घर बाँटो कि दानी सविता हमें सूर्य के सामने निष्पाप कहें।३। दिनदिन अधिक रूपवती बन कर उषादेवी घर घर जाती हैं, वह मङ्क वाली नित्य देनेकी इच्छा करती हुई आती है और आगे से आगे धनों को बाँटती है।४। हे दयाशीले! हे भगःकी बहिन! और हे वरुणकी पुत्री! आप सबसे पहले

---

* उत्तर मेरु के समीप शीतकाल की लंबी रात्रि के पीछे पहले पहल दक्षिण की ओर उषा का प्रादुर्भाव होता है और यह उत्तर देशों में कई दिन तक और मेरु पर दो महीने तक आकाश की परिक्रमा करती रहती है, पीछे सूर्य उदय होता है।

† 'उषा' प्रकाश द्वारा मनुष्य जाति की चिकित्सा करती है, क्योंकि प्रकाश आरोग्य के देनेवाला है।

‡ 'भग' सौभाग्य का अभिमानी देवता है।

स्तुति की ध्वनि को उठाओ, जो पाप को बटोरता है वह पीछे रहे और हम उसको आपकी सहायता से युद्धमें जीतें।५। अब स्तुति के गीत उचरें, हमारी बुद्धियाँ ऊपर की ओर लगें और अग्निहोत्र के लिये अग्नियाँ प्रज्वलित हों, देखो ! जगमगाती हुई उषाएँ अंधकार से छिपे हुए धनों को प्रकट कररही हैं।६। चमकते हुए रथ पर ठहरीहुई उषा ने आकाश और पृथिवी के अन्धकार को छिपा दिया है, एक हटता है और दूसरा आता है इस प्रकार भिन्न रूप वाले दिन और रात आते और जाते हैं * ।७। यह उषाएँ जैसी कल थीं वैसी ही आज हैं, यह बहुत काल तक वरुण के स्थान में † ठहरती हैं, तीस दिन तक आकाश की परिक्रमा करती हैं और प्रत्येक उषा एक दिन में अपने अपने स्थान को पहुंच जाती हैं ‡ ।८। प्रथम दिन § को जानती हुई उषा चमकती हुई काले अंधेरे से श्वेत रंग की उत्पन्न होगई है, वह प्रतिदिन नियत स्थान को पहुंचती हुई सृष्टि नियम की मर्यादा को नहीं

---

* उत्तर देशों की लंबी उषा के अनन्तर सूर्य उदय होता है और फिर ६० घड़ी के दिन रात्रि होने लगते हैं, परन्तु ये भिन्न रूप वाले होतेहैं अर्थात् पहिले दिन छोटे और रात बड़ी होती है, फिर शनैःशनैः दिन बढ़ता जाता है।

† 'वरुण का स्थान' आकाश है।

‡ जिस मेरुसमीपस्थ स्थान को ऋषि देख रहे हैं वहां निरन्तर ३० दिन तक उषा का प्रकाश आकाश में घूमता हुआ दीखता है और एक दिन में एक एक उषा वहीं पहुंच जाती है जहां से चली थी।

§ प्रथम दिन लम्बी रात्रि के समाप्त होने पर उषा के फूटने का पहला दिन है।

उल्लंघन करती है। ९। हे देवी! आप कन्या की न्याईं अपने शरीर के सौन्दर्य्य से मोहती हुई मिलने की कामना करने वाले सूर्य्य देव के पास जाती हो और युवती आप मुस्कराती हुई दमक कर सामने से छाती को उघाड़ देती हो। १०। हे उषा! माता से सिंगारी हुई युवती की न्याईं आप सुन्दर रूपवती बनकर अपने शरीर को दिखाने के लिये प्रकट करती हो हे कल्याणी! आप खूब दूर तक चमको, आपकी इस कान्ति को दूसरी उषा नहीं पहुंचीहै।११। घोड़े और गौओं की स्वामिनी, सबसे वरने योग्य उषाएँ सूर्य्य की किरणों से ईर्षा करती हुई कल्याण वाले रूप को लेकर आती हैं और फिर चली जाती हैं। १२। हे नियम की डोरी के अनुसार चलने वाली उषा! हम में प्रत्येक शुभ कर्म को स्थापन करो, हमारे बुलाने से शीघ्र आओ और हम में और हमारी जाति के धनवानों में धनों को चिरस्थायी करो। १३।

उषादेवता निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।१०।११

पृथू रथो दक्षिणाया अयोज्यैनं देवासो अमृतासो अस्थुः। कृष्णादुदस्थादर्य्या विहाया श्चिकित्सन्ती मानुषाय क्षयाय। १।

पृथुः	विस्तीर्णः	चौड़ा
रथः	रथः	रथ
दक्षिणायाः	दक्षिणसम्बन्धिन्याः(उषसः)	दक्षिण वाली (उषा) का
अयोजि	युक्तोऽभूत्	जुड़ गया है
आ	आ +	–
एनम्	एनम्	इस को
देवासः	देवाः (जसोऽसुगागमः)	देवता
अमृतासः	मरणरहिताः (,,)	मरण से रहित
अस्थुः	आ+अस्थुः, आरूढवन्तः	चढ़े हैं
कृष्णात्	कृष्णवर्णात्	काले से
उत्	उत्+	–

अस्थात्	उत्+अस्थात्, उत्थिताऽभूत्	उठी है
अर्य्या	स्वामिनी	स्वामिनी
विऽहायाः	विहायसः (वर्णलोपश्छान्दसः)	आकाश से
चिकित्सन्ती	चिकित्सन्ती	चिकित्सा करती हुई
मानुषाय	मनुष्यसम्बन्धिने	मनुष्य सम्बन्धी के लिये
क्षयाय	वर्गाय (आ०को०)	समुदाय के लिये

संस्कृतार्थः ।

दक्षिणसम्बन्धिन्याः (उषसः) विस्तीर्णो रथो युक्तोऽभूत्, मरणरहिता देवा एनमारूढवन्तः, स्वामिनी (उषाः) मनुष्यवर्गाय चिकित्सां कुर्वती (सती) कृष्णदाकाशादुत्थिताऽभूत् ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

दक्षिणवाली(उषा)का चौड़ा रथ जुड़ कर तैय्यार हो गया है, मरण से रहित देवता इस पर चढ़े हैं,

स्वामिनी(उषा)मनुष्यसमुदाय के लिये चिकित्सा करती हुई काले आकाश से उठी है ॥ १ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

पूर्वाविश्वस्माद्भुवनादबोधि

जयन्तीवाजंबृहतीसनुत्री । उच्चा

व्यख्यद्युवतिःपुनर्भू रोषाअगन्

प्रथमापूर्वहूतौ ।२।

पूर्वा	पूर्वम्	पहले
विश्वस्मात्	सर्वस्मात्	सब से
भुवनात्	लोकात्	लोक से
अबोधि	जागृताऽभूत्	जागी है
जयन्ती	जयन्ती	जीतती हुई

वाजम्	धनम् (आ०को०)	धन को
बृहती	महती	बड़ी
सनुत्री	दात्री (षणुदाने)	देने वाली
उच्चा	उच्चस्थानात् (विभक्तेराकारः)	ऊंचे स्थान से
वि	वि+	–
अख्यत्	वि+अख्यत्, पश्यति (लडर्थेलङ्)	देखती है
युवतिः	युवतिः	युवति
पुनःऽभूः	पुनःपुनर्भवनशीला	वार २ होने वाली
आ	आ+	–
उषाः	उषाः	उषा
अगन्	आ+अगन्,आगतवती (गमेश्चपधालोपः)	आई है

प्रथमा	प्रथमम्	पहले
पूर्वऽहूतौ	पूर्वाह्वाने (सति)	पहिली वार पुकारने पर

संस्कृतार्थः ।

धनं जयन्ती महती दात्री(उषाः)विश्वस्माद्भुवनात्पूर्वं जाग्रताऽभूत्, पुनःपुनर्भवनशीला युवतिः उच्चस्थानात् पश्यति, (इयम्) उषाः पूर्वाह्वाने (सति) प्रथमम् आगतवती ॥ २ ॥

भाषार्थ. ।

धन को जीतती हुई बड़ी देने वाली (उषा) सब लोकों से पहले जागी है, वार २ होने वाली युवति ऊंचे स्थान से देखती है (यह) उषा पहली वार पुकार ने पर (सब से) पहले आई है ॥ २ ॥

उषादेवता निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।१०।११

यद्द्यभागंविभजासिनृभ्य उषोदेविमर्त्यत्रासुजाते । देवोनोअत्रस-

वितादमूना अनागसोवो चतिसू-
र्याय । ३ ।

यत्	यत्	जो
अद्य	अद्य	आज
भागम्	भागम्	भाग को
विऽभजासि	विभजसि (लेट्याडागमः)	बाँटती हो
नृऽभ्यः	मनुष्येभ्यः	मनुष्यों के लिये
उषः	हे उषः !	हे उषा
देवि	हे देवि !	हे देवी
मर्त्यऽत्रा	मर्त्यलोके (सप्तम्यर्थे त्राप्रत्ययः)	मर्त्यलोक में
सुऽजाते	हे उच्चकुलोत्पन्ने!	हे ऊंचे कुल वाली

देवः	देवः	देवता
नः	अस्मान्	हम को
अत्र	अस्मिन् (काले)	इस (समय) में
सविता	सविता	सविता
दमूनाः	दानमनाः (यास्कः)	देनेमें मन लगाने वाला
अनागसः	पापरहितान्	पाप से रहित हुओं को
वोचति	कथयेत् (लिङर्थे लट्)	कहे
सूर्याय	सूर्य्याय	सूर्य्य के लिये

संस्कृतार्थः।

हे उच्चकुलोत्पन्ने ! उषोदेवि ! यदद्य मर्त्यलोके नरेभ्यो भागं विभजसि (तदस्मान् एतद्वरं देहि यत्) अस्मिन् (समये) दानमनाः सवितृदेवोऽस्मान् सूर्य्याय पापरहितान् कथयेत् ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे ऊंचे कुलवाली ! उषादेवी ! जो आज आप मर्त्यलोक में मनुष्यों के लिये भाग बांटती हो (सो हम को यह वर दो कि) इस (समय) दान में मन लगाए हुए सविता देवता हम को सूर्य्य के सामने पाप से रहित कहें ॥ ३ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

गृहंगृहमहनायात्यच्छा दिवेदि-
वेअधिनामादधाना । सिषासन्ती
द्योतनाशश्वदागा दग्रमग्रमिद्भ-
जतेवसूनाम् ।४।

गृहम्ऽगृहम्	गृहंगृहम्	घर घर को
अहना	उषाः (निघं०)	उषा

याति	आगच्छति (आङ्लोपः)	आती है
अच्छ	प्रति	की ओर
दिवेऽदिवे	प्रतिदिनम्	प्रतिदिन
अधि	अधिकम्	अधिक
नाम	रूपम् (आ०को०)	रूप को
दधाना	धारयन्ती	धारण करती हुई
सिसासन्ती	दातुमिच्छन्ती	देने की इच्छा करती हुई
द्योतना	प्रकाशवती	प्रकाश वाली
शश्वत्	नित्यम्	सदा
आ	आ+	–
अगात्	आ+अगात्, आगच्छति (लडर्थेलुङ्)	आती है

अग्रम्ऽअग्रम्	अग्रमग्रम्	आगे आगे
इत्	एव	ही
भजते	विभजति (उपसर्गलोपः)	बाँटती है
वसूनाम्	धनानि (द्वितीयार्थे षष्ठी)	धनों को

संस्कृतार्थः ।

उषाः प्रतिदिनम् अधिकं रूपं धारयन्ती (सती) प्रतिगृहमुपगच्छति, प्रकाशवती (सा) नित्यं दातुमिच्छन्ती (सती) आगच्छति,अग्रतोऽग्रतएव (च) धनानि विभजति ॥ ४ ॥

भावार्थः।

उषा प्रतिदिन अधिक रूप को धारण करती हुई प्रत्येक घर की ओर जाती है (वह) प्रकाशवाली नित्य देने की इच्छा करती हुई आती है (और) आगे से आगे धनों को बाँटती है ॥ ४ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

भगस्यस्वसावरुणस्यजामि

उषःसूनृतेप्रथमाजरस्व। पश्चासदघ्यायोअघस्यधाता जयेमतंदक्षिणयारथेन।५।

भगस्य	भगस्य	भग की
स्वसा	भगिनी	बहन
वरुणस्य	वरुणस्य	वरुण की
जामिः	दुहिता (आ०को०)	पुत्री
उषः	उषः !	हे उषा
सूनृते	हेदयाशीले ! (आ०को०)	हे दया वाली
प्रथमा	प्रथमा (सती)	पहिले
जरस्व	गृणीहि (निघं० ३।१४)	स्तुति की ध्वनि करो

पश्चा	पश्चात् (तकारलोपश्छान्दसः)	पीछे
सः	सः	वह
दघ्याः	गच्छतु (दध्यतिर्गत्यर्थः निघं० वचनव्यत्ययः)	जावे
यः	यः	जो
अघस्य	पापस्य	पाप के
धाता	धारयिता	धारण करने वाला
जयेम	जयेम	हम जीतें
तम्	तम्	उस को
दक्षिणया	उषसा (ऋ०१।१२३।१)	उषा से
रथेन	रथेन	रथ के द्वारा

संस्कृतार्थः ।

हे दयाशीले ! उषः ! भगस्य भगिनी, वरुणस्य

दुहिता (त्वम्) प्रथमा (सती) गृणीहि, यः पापस्य धारयिता (अस्ति) स पश्चाद्भवतु, तम् (वयम्) उषसा (प्रेरिताःसन्तः) रथेन जयेम ॥ ५॥

भावार्थः।

हे दयावाली ! उषा ! भग की बहन, (और) वरुणकी पुत्री आप (सबसे) पहले स्तुति की ध्वनि करो, जो पापके धारण करने वाला (है) वह पीछे रहे, उसको हम उषा से (प्रेरित होकर) रथ के द्वारा जीतें ॥ ५॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११।

उदीरतां सूनृता उत्पुरन्धीरुदग्नयः शुशुचानासो अस्थुः । स्पार्हा वसूनि तमसापगूळ्हाऽऽविष्कृण्वन्त्युषसो विभातीः । ६ ।

उत्	उत्+	–
ईरताम्	उत्+ईरताम्, उच्चर्यन्ताम् (ईरगतौ)	मुख से निकलें
सूनृताः	स्तुतिगीतानि (आ॰को॰)	स्तुति के गीत
उत्	उत्+(ईरताम्) उन्मुख्योभवन्तु	उन्मुख हों
परम्ऽधीः	वृद्धयः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	वृद्धियाँ
उत्	उत्+	–
अग्नयः	अग्नयः	अग्नियाँ
शुशुचानासः	ज्वलन्तः (शुचूदीप्तौ)	दहकती हुई
अस्थुः	उत्+अस्थुः, उत्तिष्ठन्तु (छान्दसेलुङ्)	ऊपर को उठें
स्पार्हा	स्पृहणीयानि (शेर्लोपः)	कामना करने के योग्यों को

वसू॑नि	धनानि	धनों को
तम॑सा	अन्धकारेण	अंधकार से
अप॑ऽगूळ्हा	अपगूढानि (,,)	छिपे हुओं को
आविः	आविः+	–
कृण्वन्ति	आविः+कृण्वन्ति, प्रकटीकुर्वन्ति	प्रकट करती हैं
उ॒षसः॑	उषसः	उषाएँ
वि॒ऽभा॒तीः	देदीप्यमानाः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	खूब चमकती हुईं

संस्कृतार्थः।

(इदानीम्) स्तुतिगीतानि उच्चर्यन्ताम्, बुद्धयः उन्मुख्योभवन्तु, ज्वलन्तोऽग्नयः (च) उत्तिष्ठन्तु, देदीप्यमाना उषसः अन्धकारेणाऽपगूढानि स्पृहणीयानि धनानि प्रकटीकुर्वन्ति ॥ ६ ॥

भावार्थः।

(अब) स्तुति के गीत मुख से निकलें, बुद्धियाँ उन्मुख हों (और) दहकती हुईं अग्नियाँ ऊपर को

उठें, खूब चमकती हुईं उषाएँ अंधकार से छिपे हुए कामना करने योग्य धनों को प्रकट करती हैं ॥६॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११

अपाऽन्यदेत्यभ्य१न्यदेति विषुरूपे अहनी सञ्चरेते । परिक्षितोस्तमो अन्या गुहाकरद्यौदुषाः शोशुचता रथेन । ७ ।

अप	अप+	–
अन्यत्	एकः (द्वन्द्वः)	एक (जोड़ा)
एति	अप+एति, अपगच्छति	हटता है
अभि	अभि+	—
अन्यत्	द्वितीयः (द्वन्द्वः)	दूसरा (जोड़ा)

ए॒ति	अभि+एति, आगच्छति	आता है
विषु॑ऽरूपे॰	विभिन्नरूपे	भिन्न२ रूप वाले
अह॑नी॰	अहोरात्रे (अत्रसम्बन्धाद् रात्रिरप्यहःशब्देनो-पचर्यते)	दिन (और) रात्री
सम्	सम्+	–
च॒र॒ते॰	सम्+चरेते, संचरतः (व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम्)	चलते हैं
प॒रि॒ऽक्षितो॑ः	परितःनिवसन्त्योः (क्षिनिवासे क्विपि सति तुगागमः)	चारों आर निवास करने वालों के
तमः॑	तमः	अंधेरे को
अ॒न्या	एका	एक ने
गुहा॑	गुहा+	–

अकः	गुहा+अकः, गुहायामकरोत् गोपितवती-त्यर्थः (लङर्थेलङ्)	छिपाया है
अद्यौत्	द्योतितवती	चमकी है
उषाः	उषाः	उषा
शोशुचता	देदीप्यमानेन	जगमगाते से
रथेन	रथेन	रथ से

संस्कृतार्थः ।

एकः(द्वन्द्वः) अपगच्छति, द्वितीयः (च) आगच्छति (एवम्) विभिन्नरूपेऽहोरात्रे संचरतः, (तयोः) एका परितो निवसन्त्योः (द्यावापृथिव्योः) तमः गोपितवती, देदीप्यमानेन रथेन(च) द्योतितवती ॥७॥

भापार्थः ।

एक (जोडा) हटता है (और)दूसरा आता है (इस प्रकार) भिन्न२ रूप वाले दिन (और) रात चलते हैं, एक ने चारों ओर निवास करने वाली (द्यौऔरपृथिवी)

के अंधेरे को छिपा दिया है (और) जगमगाते रथ से चमकी है ॥ ७ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः । ११।११। ११।११।

सदृशीरद्यसदृशीरिदुश्वो दीर्घं सचन्तेवरुणस्यधाम। अनवद्यास्त्रिंशतंयोजनान्ये कैकाक्रतुंपरियन्ति सद्यः । ८ ।

सऽदृशीः	सदृश्यः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	एक जैसी
अद्य	अद्य	आज
सऽदृशीः	सदृश्यः (,,)	एक जैसी
इत्	अपि	भी
ऊम्०	(पूरणः)	–

श्वः	श्वस्	कल
दीर्घम्	दीर्घकालम्	बहुत देर
सचन्ते	सेवन्ते	सेवन करती हैं
वरुणस्य	वरुणस्य	वरुण के
धाम	स्थानम्	स्थान को
अनवद्याः	दोषरहिताः	दोष से रहित
त्रिंशतम्	त्रिंशतम् ('कालाध्वनो'इति द्वितीया')	तीस तक
योजनानि	दिनानि (यावतिकालेरथोयुक्तः स्यात्तद्योजनम्, दिनमित्यर्थः)	दिन तक
एकाऽएका	एकैका (सत्यः)	एक २ (हुई २)
क्रतुम्	नियतस्थानम्	नियत स्थान को

परि	परि+	–
यन्ति	परि+यन्ति, परिगच्छन्ति	चारों ओर घूमती हैं
सद्यः	एकस्मिन् दिवसे	एक दिन में

संस्कृतार्थः।

(एताः) (उषसः) अद्य सदृश्यः, श्वोऽपि (च) सदृश्यः (सत्यः) वरुणस्य स्थानं दीर्घकालं सेवन्ते, दोषरहिताः (एताः) त्रिंशतं दिनानि (आकाशम्) परिगच्छन्ति, एकैकम् (च) नियतस्थानम् एकस्मिन् दिवसे (प्राप्नुवन्ति)॥ ८॥

भावार्थः।

(ये) आज एक जैसी (और) कल भी एक जैसी वरुण के स्थान में बहुत देर तक रहती हैं, दोष से रहित (ये) तीस दिन तक (आकाश) की परिक्रमा करती हैं (और) एक एक नियत स्थान को एक दिन में (पहुंच जाती हैं)॥ ८॥

उषादेवता त्रिष्टुप् छन्दः ।११।११।११।११

जानत्यह्नः प्रथमस्य नाम शुक्रा

कृष्णादजनिष्टश्वितीची। ऋतस्य योषानमिनातिधामाऽहरहर्निष्कृत माचरन्ती ॥ ९ ॥

जानती	जानती	जानती हुई
अह्नः	दिवसस्य	दिन के
प्रथमस्य	प्रथमस्य	पहिले के
नाम	रूपम्	रूप को
शुक्रा	दीप्ता	चमकीली
कृष्णात्	कृष्णवर्णात्	काले रंग वाले से
अजनिष्ट	प्रादुरभूत्	प्रकट हुई है
श्वितीची	श्वैत्यं प्राप्नुवन्ती श्वेताइत्यर्थः	श्वेत

ऋतस्य	ऋतस्य	ऋत के
योषा	युवतिः	युवति
न	न	नहीं
मिनाति	हिनस्ति (मीञ्हिंसायाम्)	नाश करती है
धाम	मर्य्यादाम्	मर्यादा को
अहःऽअहः	दिने दिने	प्रतिदिन
निःऽकृतम्	नियतंस्थानम् (भा० को०)	नियत स्थान को
आऽचरन्ती	प्राप्नुवन्ती	पहुंचती हुई

संस्कृतार्थः।

आद्यस्य दिवसस्य रूपं जानती (उषाः) कृष्णात् (अन्धकारात्) दीप्ता श्वेता (च) प्रादुरभूत्, (इयम्) युवतिः दिने दिने नियतं स्थानं प्राप्नुवन्ती (सती) ऋतस्य मर्य्यादां न हिनस्ति ॥ ९ ॥

भाषार्थः।

आदि में होने वाले दिन के रूप को जानती

हुई (उषा) काले (अन्धकार) से चमकती हुई (और) श्वेत उत्पन्न हुई है, (यह) युवति प्रतिदिन नियत स्थान को पहुंचती हुई ऋत की मर्य्यादा को उल्लंघन नहीं करती ॥ ९ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।१।११।११

कन्येवतन्वा३शाशदानाँ एषिदे-

विदेवमियक्षमाणम् । संस्मयमाना

युवतिःपुरस्ता दाविर्वक्षांसिकृणु-

षेविभाती ॥ १० ॥

कन्याऽइव	कन्येव	कन्या की न्याई
तन्वा	शरीरेण	शरीर के द्वारा
शाशदाना	अतिशयेन शातयन्ती, उत्तेजयन्ती स्पर्धा।(नि०४।२)	भड़काती हुई

एषि	गच्छसि	जाती हो
देवि	हे देवि !	हे देवी
देवम्	देवम्	देव को
इयक्षमाणम्	प्राप्तुमिच्छन्तम्	प्राप्त करने की इच्छा करते हुएको
सम्ऽस्मयमाना	संस्मयमाना	खूब मुस्कराती हुई
युवतिः	युवतिः	युवति
पुरस्तात्	पुरतः	आगे
आविः	आविः+	–
वक्षांसि	वक्षांसि	छातियों को
कृणुषे	आविः+कृणुषे, उद्घाटयसि	उघाड़ती हो
विऽभाती	विद्योतमाना	दमकती हुई

संस्कृतार्थः ।

हे देवि ! (त्वम्) कन्येव शरीरेणोत्तेजयन्ती (सती) प्राप्तुमिच्छन्तं देवम् (प्रति) गच्छसि, विद्योतमाना (च) युवतिः (त्वम्) संस्मयमाना (सती) वक्षांसि पुरतः उद्घाटयसि ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे देवी ! आप कन्या की न्याईं शरीर के द्वारा भड़काती हुई प्राप्त करने की कामना वाले देव के पास जाती हो (और) दमकती हुई युवति (आप) खूब मुस्कराती हुई छातियों को आगे से उघाड़ देती हो ॥ १० ॥

उषादेवता निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।११।१०।११।११

सुसङ्काशा मातृमृष्टेव योषा वि-स्तन्वं कृणुषे दृशे कम् । भद्रा त्वमुषो वितरं व्युच्छ न तत्ते अन्या उषसो नशन्त ॥ ११ ॥

सुऽसङ्काशा	सुरूपवती (काशृ दीप्तौ)	सुन्दर रूप वाली,
मातृमृष्टाऽइव	मात्रा स्वच्छीकृतेव	माता के द्वारा स्वच्छ की हुई की न्याईं
योषा	युवतिः	युवति
आविः	आविः+	—
तन्वम्	शरीरम्	शरीर को
कृणुषे	आविः+कृणुषे, प्रकटयसि	प्रकट करती हो
दृशे	दर्शनार्थम्	दर्शन के लिये
कम्	(पूरणः)	—
भद्रा	कल्याणरूपा	कल्याण रूप
त्वम्	त्वम्	तू
उषः	हे उषः !	हे उषा

विऽतरम्	विप्रकृष्टंयथा-स्यात्तथा (क्रियाविशेषणम्)	दूर तक
वि	वि+	-
उच्छ	वि+उच्छ, आविर्भव	खिलो
न	न	नहीं
तत्	तत्	उस को
ते	तव	तेरे
अन्याः	अन्याः	दूसरी
उषसः	उषसः	उषाएँ
नशन्त	प्राप्तवत्यः (नशतिर्व्याप्तिकर्मा निघ० , अडभाव)	पहुंची हैं

संस्कृतार्थः।

हे उषः ! मात्रा स्वच्छीकृता युवतिरिव सुरूपती (त्वं निज-) शरीरं दर्शयितुं प्रकटयसि, कल्याण-

रूपा (त्वम्) दूरदेशपर्यन्तमाविर्भव, अन्या उषसः तवैताम् (कान्तिम्) न प्राप्तवत्यः ॥ ११ ॥

भावार्थः ।

हे उषा ! माता के द्वारा स्वच्छ की हुई युवति की न्याईं सुन्दर रूपवती आप (अपने) शरीर को दिखाने के लिये प्रकट करती हो, (वह) कल्याण रूपा-आप दूर तक खिलो और उषाएँ आप की इस (कान्ति) को नहीं पहुंची हैं ॥ ११ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११

अश्वावतीर्गोमतीर्विश्ववारा यत-मानारश्मिभिःसूर्यस्य । पराचय-न्तिपुनराचयन्ति भद्रानामवहमा-नाउषासः ॥ १२ ॥

अश्वऽवतीः	अश्वैर्युक्ताः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	घोड़ों वाली *
गोऽमतीः	गोभिर्युक्ताः ”	गौओं वाली

विप्रवऽवाराः	सर्वैर्वरणीयाः	सब से वरने योग्य
यतमानाः	यतमानाः	यत्न करती हुई
रश्मिऽभिः	किरणैः	किरणों के साथ
सूर्य्यस्य	सूर्य्यस्य	सूर्य्य की
परा	परा+	–
च	(पूरणः)	–
यन्ति	परा+यन्ति	चली जाती हैं
पुनः	पुनः	फिर
आ	आ+	–
च	च	और
यन्ति	आ+यन्ति	आजाती हैं
भद्रा	कल्याणानि (शेर्लोपः)	कल्याण वालों को

नाम	रूपाणि (सुपामिति विभक्तेः लुः)	रूपों को
वह्माना:	धारयन्त्य:	धारण करती हुई
उषस:	उषस:	उषाएँ

संस्कृतार्थः।

अश्वैरुपेताः,गोभिर्युक्ताः,सर्वैर्वरणीयाः, सूर्य्यस्य रश्मिभिर्यतमानाः(च)उषसः कल्याणानि रूपाणि धारयन्त्यः परागच्छन्ति पुनरागच्छन्ति च ॥१२॥

भाषार्थः।

घोड़ों वाली, गौओं वाली, सब से वरने योग्य (और)सूर्य्य की किरणों के साथ स्पर्धा करती हुई उषाएँ कल्याण वाले रूपों को धारण करती हुई चली जाती हैं और फिर आजाती हैं ॥ १२ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

ऋतस्यरश्मिमनुयच्छमाना-

भद्रंभद्रंक्रतुमस्मासुधेहि। उषोनो

भद्रम्भद्रं क्रतुमस्मासु धेहि ...

अद्यसुहवाष्युच्छा ऽस्मासुरायोम-

घवत्सुचस्युः ॥ १३ ॥

ऋतस्य	ऋतस्य	ऋत की
रश्मिम्	सूत्रम्	डोरी को
अनुयच्छमाना	अनुवर्तमाना	अनुकूल चलती हुई
भद्रम्ऽभद्रम्	प्रतिकल्याणम्	प्रत्येक कल्याण को
क्रतुम्	कर्म	कर्म्म को
अस्मासु	अस्मासु	हम में
धेहि	धारय	धारण करो

उषः	हे उषः !	हे उषा
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
अद्य	अद्य	आज
सुऽहवा	सुखेनाऽऽहूयमाना	सुख से बुलाई जाने वाली
वि	वि +	–
उच्छ	वि + उच्छ, आवि. भव	खिलो
अस्मासु	अस्मासु	हम में
रायः	धनानि	धन
मघवत्ऽसु	धनवत्सु	धन वानों में
च	च	और
स्युः०	भवन्तु	हों

संस्कृतार्थः ।

हे उषः ! (त्वम्) ऋतस्य सूत्रमनुवर्तमाना(सती) अस्मासु प्रतिकल्याणंकर्म्म धारय,अद्य सुखेनाऽऽहूय-माना (सती) अस्मभ्यमाविर्भव,अस्मासु(अस्माकम्) धनवत्सु च धनानि (स्थिराणि) भवन्तु ॥ १३ ॥

भाषार्थः ।

हे उषा ! आप ऋत की डोरी के अनुकूल चलती हुई हम में प्रत्येक शुभ कर्म्म को धारण करें, आज आप सुख से बुलाई (जाकर) हमारे लिये खिलें, और हम में और (हमारे) धनियों में धन [स्थिर] हों ॥ १३ ॥

इतित्रयोविंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ० मं० १ सू० १२४

उषादेवता,दीर्घतमसःपुत्रःकक्षीवानृषिः ।

विनियोग ।

१—१३ । एतत्सूक्तं प्रातरनुवाकस्य उषस्येकतौ आश्विनशस्त्रे च विनियुक्तम् । (आ०४।१४।२)

सूक्त का भावार्थ ।

अग्निहोत्र के लिये अग्नियों के प्रदीप्त होने से, उषा के खिलने से और सूर्य के उदय होने से विस्तार के साथ प्रकाश फैल गया है,अब सवितादेवता हम दोपायों और चौपायों को अपने अपने काम में लगने के लिये प्रेरणा करते हैं। १। देवताओं के नियम को न तोड़ती हुई और मनुष्यों के कालविभाग को छिजाती हुई, लंबी रात्रिके अन्त में आने वाली,उषा खिल गई है,यह निरन्तर चमकने वाली पिछली उषाओं की मूर्ति है और आगे आने वालियों में पहली है। २। यह आकश की पुत्री ज्योति के वस्त्र पहने हुए अचानक सामने दीख पड़ी है, यह देवताओं के सृष्टिनियम पर ठीक ठीक चलती है और कभी भी दिशाओं का उलंघन नहीं करती है मानो ज्ञान वाली है। ३। यह ऐसी समीप दिखाई देती है जैसे उम घोड़ियों की*छाती, जैसे ऋषि अपनी अभीष्ट कामनाओं को प्रकट करता है ऐसे इस ने अपने शरीर के अंगों को प्रकट किया है, यह मक्खो की न्याई सोतों को जगाती है और आगे आने वालियों में†

---

* उन घोड़ियों की जो सामने वंधी हैं।

† लंबी उषा के बीतनेपर जो ६० घड़ीके दिन रात होते हैं उनकी उषाएँ आगे आनेवाली उषाएँ हैं।

सबसे अधिक ठैरने वाली है।४। किरणरूपी गौओं को उत्पन्न करने वाली उषा ने फैले हुए अन्तरिक्ष के पूर्वार्द्ध में ध्वजा को प्रकट कर दिया है, यह आकाश और पृथिवी रूपी माता और पिता की गोद को भरती हुई अत्यन्त दूर तक फैल गई है।५। देखने में बहुत बड़ी यह उषा न अपने को त्याग करती है और न बेगाने को, यह अपने निर्दोष शरीर से उत्तेजित करती हुई न छोटे से छिपती है न बड़े से।६। पश्चिम की ओर मुख किये हुए यह पुरुषों की ओर ऐसी उत्कण्ठा से जाती है जैसे बिना भाई वाली बहन, और ऐसे चलती है जैसे धनों के जीतने के लिये रथ पर चढ़ने वाला वीर, यह हंसती हुई ऐसे अपने रूप को दिखाती है जैसे अनुराग से भरी हुई और सुन्दर वस्त्र पहने हुए पत्नी अपने पति को।७। छोटी बहन * बड़ी के लिये स्थान को खाली करती है मानो उस को दिखा कर हटजाती है, फूलती हुई उषा मेले में जाने वाली स्त्रियों की न्याई सूर्य्य की किरणों से अपने अंगों को रंगती है।८। इन बहनों में जब पहली चली जाती है तो उसके स्थान में दूसरी नई आजाती है, ये नई उषाएँ पुरानियों की न्याई हमारे लिये शुभ दिनों के लाने वाली हो और धन के सहित हमारे लिये प्रकट।९। हे धनेश्वरी! उषा! जो दानशील हैं उनको जगाओ, जो कंजूस व्यवहारी मनुष्य हैं वे सोए पड़े रहें, हे धन की स्वामिनि! प्राणियोंकी आयुको क्षीण करने वाली आप हमारे धनिकों के लिये धन के साथ प्रकटें। हे दयाशीले! आप मुझ स्तुति करने वाले के लिये धन के साथ प्रकटें।१०। यह युवति पूर्व दिशा में उतरी है, और लाल रंग के बैलों को रथ में जोड़ती है, यह अब खिलेगी, खूब उजाला होगा और घर २ में अग्निहोत्र के लिये अग्नियाँ प्रदीप्त होंगी।११। हे उषा! आपके खिलने पर अन्न

*.छोटी बहन रात्रि और बड़ी उषा है।

के खोजी मनुष्य अन्न की चिन्ता में लगे हैं और पक्षी भी घोंसलों से उड़े हैं, हे देवि ! जो हवि देने वाले भक्तजन हैं उन को आप घर बैठे ही बहुत धन पहुंचाती हो ।१२। हे स्तुति के योग्य उषाओ ! प्रेम करती हुई आपकी मेरे स्तोत्र से स्तुति हो और आप बढ़ें, हे देवियो ! हम आप की रक्षा से सैंकड़ों और सहस्रों धन के भागी बनें । १३ ।

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।।११।११।११।११

उषाउच्छन्तीसमिधानेअग्ना उद्यन्सूर्यउर्वियाज्योतिरश्रेत् । देवोनोअत्रसवितान्वर्थंप्रासावीद्द्विपत्प्रचतुष्पदित्यै ॥ १ ॥

उषाः	उषसि (सुपांसुलुगिति विभक्तेः सुः)	उषा में
उच्छन्ती	आविर्भवन्त्याम् (,,)	फूटने पर
समिधाने	प्रदीप्यमाने	प्रदीप्त होनेपर

अग्नौ	अग्नौ	अग्नि में
उत्ऽयन्	उद्यति (विभक्तेः सुः)	उदय होने पर
सूर्यः	सूर्ये	सूर्य में
उर्विया	विस्तीर्णतया (विभक्तेर्डियाजादेशः)	विस्तारके साथ
ज्योतिः	प्रकाशः	प्रकाश
अश्रेत्	व्याप्तवानस्ति	फैलगया है
देवः	देवः	देवता ने
नः	अस्मान्	हम को
अत्र	अस्मिन् (लोके)	इस (लोक) में
सविता	सविता	सविता
न	अधुना (भा० को०)	अब

अर्थम्	कार्य्यम् [प्रति]	कार्य्य [की ओर]
प्र	प्र +	–
असावीत्	प्र + असावीत्, प्रेरयति (लडर्थेलुङ्)	प्रेरण करता है
द्विऽपत्	द्विपदः (विभक्तेर्लुक्)	दोपायों को
प्र	प्र + (असावीत्) प्रेरयति (लडर्थेलुङ्)	प्रेरण करता है
चतुःऽपत्	चतुष्पदः (विभक्तेर्लुक्)	चौपायों को
इत्यै	गमनाय	जाने के लिये

संस्कृतार्थः ।

अग्नौ प्रदीप्यमाने, उषसि आविर्भवन्त्याम्, सूर्ये (च) उद्यति, (सति) विस्तीर्णतया प्रकाशो व्याप्तवानस्ति, अधुना सवितृदेवः अस्मिन् (लोके) अस्मान् द्विपदः चतुष्पदः (च) कार्य्यं प्रति गमनाय प्रेरयति। १ ।

भाषार्थः ।

अग्नि के प्रदीप्त होने पर, उषा के फूटने पर (और) सूर्य्य के उदय होने पर विस्तार के साथ प्रकाश फैल गया है, अब सवितादेव इस (लोक) में हम दो पायों को (और) चौपायों को कार्य्य-की ओर जाने के लिये प्रेरण करते हैं ॥ १ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अमिनतीदैव्यानिव्रतानि प्रमि-नतीमनुष्यायुगानि । ईयुषीणामुप-माशश्वतीना मायतीनांप्रथमोषा व्यद्यौत् ॥ २ ॥

अमिनती	अहिंसन्ती	नाश करती हुई
दैव्यानि	देवसम्बन्धीनि	देवसंबंधियों को
व्रतानि	व्रतानि	नियमों को

प्रऽमिनती	क्षीणयन्ती	छिजाती हुई
मनुष्या	मनुष्याणाम् (विभक्तेरात्वम्)	मनुष्यों के
युगानि	युगानि	युगों को
ईयुषीणाम्	गतवतीनाम्	बीती हुइयों की
उपमा	उपमा	मूर्ति
शश्वतीनाम्	निरन्तरवर्तिनीनाम्	निरन्तर होने वालियों की.
आऽयतीनाम्	अगामिनीनाम्	आने वालियों की
प्रथमा	प्रथमा	पहली
उषाः	उषाः	उषा
वि	वि +	—

अद्यौत्	वि + अद्यौत्, विद्योतितवती	खिल गई है

संस्कृतार्थः।

देवसम्बन्धीनि व्रतानि अहिंसन्ती, मनुष्याणां युगानि क्षीणयन्ती, गतवतीनां निरन्तरवर्त्तिनीनाम् (उषसाम्) उपमा, आगामिनीनाम् (च) प्रथमा उषाः विद्योतितवती ॥ २ ॥

भापार्थः।

देवताओं के नियमों को न तोड़ती हुई, मनुष्यों के युगों को छिजाती हुई, बीती हुई निरन्तर होने वाली (उषाओं) की मूर्ति (और) आने वालियों में पहली उषा खिल गई है ॥ २ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११

एषादि॒वोदु॑हि॒ताप्रत्य॑दर्शि ज्यो

ति॒र्वसा॑नासम॒नापुरस्ता॑त्। ऋ॒त-

स्य॒पन्था॒मन्वे॑तिसा॒धु प्र॑जान॒तीव॒

नदिशो॑मिनाति॥ ३॥

एषा	एषा	यह
दिवः	दिवः	द्यौ की
दुहिता	दुहिता	पुत्री
प्रति	प्रति +	–
अदर्शि	प्रति + अदर्शि, दृष्टाऽभूत्	दीखपड़ी है
ज्योतिः	ज्योतिः	ज्योति को
वसाना	परिदधाना	पहने हुए
समना	सद्यः (सा० भा०)	तत्काल
पुरस्तात्	पुरस्तात्	सामने
ऋतस्य	ऋतस्य	ऋत के
पन्थाम्	मार्गम्	मार्ग को

अनु	अनु	पीछे
एति	गच्छति	जाती है
साधु	सम्यक्	ठीक २
प्रजानती ऽइव	प्रकर्षेण जानतीव	मानो खूब जानती हुई
न	न	नहीं
दिशः	दिशः	दिशाओं को
मिनाति	हिनस्ति	नाश करती है

संस्कृतार्थः।

ज्योतिःपरिदधाना एषा दिवोदुहिता सद्यः पुरस्ताद् दृष्टाऽभूत् (एषा) सम्यक्तया ऋतस्यमार्गमनुसरति, प्रकर्षेणजानती:इव (च) दिशो न हिनस्ति॥२॥

भापार्थः।

ज्योति के वस्त्र पहने हुए यह द्यौ की पुत्री अचानक सामने दीख पड़ी है, (यह) ठीक ठीक ऋत

के मार्ग पर चलती है, (और) खूब जानती हुई मानो दिशाओं को नहीं विनाश करती है ॥३॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

उपो॑ अदर्शि शुन्ध्युवो॒ न वक्षो॑ नो॒धाइ॑वा॒विर॑कृत प्रि॒याणि॑। अ॒द्म॒सन्न स॒स॒तो बो॒धय॑न्ती शश्वत्त॒माग॒ात्पुन॑रे॒युषी॑णाम् ॥ ४ ॥

उपो॑	समीपे (उ इति पूरणः)	समीप
अदर्शि	(दृष्टा) अभूत्	दिखी है
शुन्ध्युवः	वडवायाः (ऋ०१।५०।९)	घोड़ी की
न	इव	की न्याईं
वक्षः	वक्षः	छाती

नोधाःऽइव	ऋषिरिव (निरु० ४।१६)	ऋषि की न्याईं
आविः	आविः +	–
अकृत	आविः + अकृत, प्रकटितवती	प्रकट किया है
प्रियाणि	प्रियाणि	प्रियों को
अद्मऽसत्	अन्नसादिनी (निरु० ४।१६)	अन्न पर बैठने वाली
न	इव	की न्याईं
ससतः	स्वपतः	सोते हुओं को
बोधयन्ती	बोधयन्ती	जगाती हुई
शश्वत्ऽतमा	निरन्तरतमा	सब से अधिक निरन्तर (चमकने वाली)
आ	आ +	–
अगात्	आ + अगात्, आगतवती	आई है,

पुनः	पुनः	फिर
आऽईयुषो-याम्	आगामिनीनाम् (मध्ये)	आने वालियों के (वीच)

संस्कृतार्थः।

(उषाः) वडवानां वक्ष इव समीपे दृष्टाऽभूत्, ऋषिरिव (च) प्रियाणि प्रकटितवती, पुनरागामिनीनाम् (उषसां मध्ये) निरन्तरतमा (इयमुषाः) मक्षिका इव स्वपतः (मनुष्यान्) प्रबोधयन्ती (सती) पुनरागतवती ॥ ४ ॥

भापार्थः ।

(उषा) घोड़ियों की छाती की न्याई समीप में दिखी है (और) उसने ऋषि की न्याई प्रियों को प्रकट किया है, फिर आने वाली (उषाओं) में सब से अधिक निरन्तर (चमकने वाली यह उषा) मक्खी की न्याई सोते हुए (मनुष्यों) को जमाती हुई फिर आई है ॥ ४ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

पूर्वे अर्धे रजसो अप्त्यस्य गवां जनित्र्यकृत प्रकेतुम् । व्युप्रथते वितरं वरीय ओभापृणन्ती पित्रोरुपस्था ॥५॥

पूर्वे	पूर्वे	पूर्व में
अर्धे	अर्धे	आधे में
रजसः	अन्तरिक्षस्य	अन्तरिक्ष के
अप्त्यस्य	व्यापकस्य (निपातनात्साधुः)	व्यापक के
गवाम्	गवाम्	गौओं के
जनित्री	जनयित्री (अन्तर्भावितण्यर्थः)	उत्पन्न करने वाली ने
अकृत	प्र + अकृत, प्रकटितवती	प्रकट किया है

प्र	प्र +	–
केतुम्	ध्वजम्	ध्वजा को
वि	वि +	–
उषम्०	(पूरणः)	–
प्रथते	वि + प्रथते, विस्तृताऽभवत् (लङर्थे लट्)	फैल गई है
विऽतरम्	दूरम् (क्रियाविशेषणम्)	दूर तक
वरीयः	उरुतरम् (,,)	अत्यन्त बहुत
आ	आ +	–
उभा	उभयोः (विभक्तेरात्वम्)	दोनों की
पृणन्ती	आ + पृणन्ती, पूरयन्ती	भरती हुई
पित्रोः	पित्रोः	पिता (और) माता का

उपऽस्था	उत्सङ्गम् (,,)	गोद को

संस्कृतार्थः ।

गवामुत्पादयित्री (उषाः)व्यापकस्य अन्तरिक्षस्य पूर्वार्धे ध्वजं प्रकटितवती, (सा) उभयोः पित्रोरुत्सङ्गं पूरयन्ती [सती] उरुतरं दूरं विस्तृताऽभवत् । ५ ।

भावार्थः ।

गौओं के उत्पन्न करने वाली उषा ने व्यापक अन्तरिक्ष के पूर्वार्द्ध में ध्वजा को प्रकट किया है,वह पिता (और) माता दोनों को गोद को भरती हुई बहुत दूर तक फैल गई है ॥ ५ ॥

उषादेवता त्रिष्टुपूछन्दः ।११।११।११।११

एवेदेषापुरुतमादृशेकं नाजामिं नपरिवृणक्तिजामिम् । अरेपसातन्वा३शाशदाना नार्भादीषतेनमहो विभाती ॥ ६ ॥

एव	इत्थम्	इस प्रकार
इत्	(पूरणः)	–
एषा	एषा	यह
पुरुऽतमा	विपुलतमा	अत्यन्त बड़ी
दृशे	दर्शने	देखने में
कम्	(पूरणः)	–
न	न	नहीं
अजामिम्	अबन्धुम्	बेगाने को
न	न	नहीं
परि	परि +	–
वृणक्ति	परि + वृणक्ति, परिवर्जयति	त्याग करती है
जामिम्	बन्धुम्	संबंधी को

अरेपसा	अपापेन	पापहीन से
तन्वा	शरीरेण	शरीर से
शाशदाना	अतिशयेन शातयन्ती, उत्तेजयन्तीत्यर्थः (निघं०४।३)	उत्तेजित करती हुई
न	न	नहीं
अर्भात्	अल्पात्	छोटे से
ईषते	गच्छति, तिरोभवतीत्यर्थः (ईष गतौ)	छिपती है
न	न	नहीं
महः	महतः	बड़े से
विभाती	विद्योतमाना	खूब चमकती हुई

संस्कृतार्थः।

इत्थंदर्शने विपुलतमा एषा (उषाः) नाऽबन्धुं न-(च) बन्धुं परिवर्जयति, पापरहितेन शरीरेणोत्तेजयन्ती विद्योतमाना (च सा) नाऽल्पात् न-[च] महतस्तिरोभवति। ६।

भापार्थः।

इस प्रकार देखने में अत्यन्त बड़ी यह (उषा) न अपने को [और] न बेगाने को त्याग करती है, पाप रहित शरीर से उत्तेजित करती हुई [और] खूब चमकती हुई न छोटे से (और) न बड़े से छिपती है। ६।

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अभ्रातेवपुंसएतिप्रतीची गर्तारुगिवसनयेधनानाम्। जायेवपत्य-उशतीसुवासा उषाहस्रेवनिरिणीतेअप्सः॥ ७॥

अभ्रातांऽइव	भ्रातृरहितेव	भाई से रहित की न्याईं
पुंसः	पुरुषान्	पुरुषों को
एति	गच्छति	जाती है
प्रतीची	पश्चिमाभिमुखी	पश्चिम की ओर मुख किए हुए
गर्तऽआरुगिव	रथाऽऽरूढइव (यास्कः)	रथ पर चढ़े हुए की न्याईं
सनये	प्राप्तये	प्राप्ति के लिये
धनानाम्	धनानाम्	धनों की
जायाऽइव	जायेव	स्त्री की न्याईं
पत्ये	पत्ये	पति के लिये
उशती	कामयमाना	कामना करती हुई
सुऽवासाः	शोभनवस्त्रा	सुन्दर वस्त्रों वाली

उषाः	उषाः	उषा
हस्राऽइव	हसनेव	हंसने वाली की न्याईं
नि	नि +	–
रिणीते	नि + रिणीते, दर्शयति	दिखाती है
अप्सः	रूपम् (निघं०३।७)	रूप को

संस्कृतार्थः ।

उषाः भ्रातृरहितेव पश्चिमाभिमुखी सती पुरुषान् प्रति गच्छति,धनप्राप्तये रथारूढइव (च जयन्ती प्रचलति,) (सा) पतिं कामयमाना शोभनवस्त्रा जायाइव हसन्तीव रूपं दर्शयति । ७ ।

भाषार्थः ।

उषा पश्चिम की ओर मुख किये हुए बिना भाई वाली बहिन की न्याईं पुरुषों की ओर जाती है(और) धनों की प्राप्ति के लिये रथपर चढने वाले की न्याईं (विजय करती हुई चलती है), (वह)पति की कामना करती हुई सुन्दर वस्त्र पहनने वाली स्त्री की न्याईं मानो हंसती हुई रूप को दिखाती है । ७ ।

एति	अप+एति, अपसरति	हट जाती है
अस्याः	एनाम् (कर्मणिषष्ठी)	इस को
प्रतिच-च्याऽइव	दर्शयित्वेव	मानो दिखाकर
विऽउच्छ-न्ती	आविर्भवन्ती	प्रकट होती हुई
रश्मिभिः	किरणैः	किरणों के द्वारा
सूर्य्यस्य	सूर्य्यस्य	सूर्य की
अञ्जि	रङ्गम्	रंग को
अङ्क्ते	अनक्ति	लगाती है
समनगाःऽइव	मेलागामिन्य-इव	मेले में जानेवा-लियों की न्याईं

आ:	नार्य्यः	स्त्रियाँ

संस्कृतार्थः ।

(रात्रिरूपा) भगिनी (उषोरूपायै) ज्येष्ठायै भगिन्यै स्थानं रिक्तीकरोति (स्वयं च) एनां दर्शयित्वेवाऽपसरति, (उषाश्च) आविर्भवन्ती (सती) सूर्य्यस्य किरणैः रङ्गमनक्ति यथा मेलागामिन्यो नार्य्यः (रङ्गमञ्जन्ति) ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

(रात्रि रूप) बहन (उषारूप) बड़ी बहन के लिये स्थान को छोड़ देती है (और आप) इसको मानो दिखाकर हट जाती है, (उषा) प्रकट होती हुई सूर्य्य की किरणों से रंग लगाती है, जैसे मेले में जाने वाली स्त्रियाँ (रंग लगाती हैं) ॥८॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

आसांपूर्वासामहसुस्वसॄणा

मपरापूर्वामभ्येतिपश्चात् । ताःप्र-

तन्वन्नव्यसीर्नूनमस्मे रेवदुच्छन्तु सुदिना उषासः ॥ ९ ॥

आसाम्	आसाम्	इन के
पूर्वासाम्	पूर्वासाम्	पहलियों के
अहऽसु	अहःसु, प्रतिदिन-मित्यर्थः (विसर्गलोपश्छान्दसः)	प्रतिदिन
स्वसॄणाम्	भगिनीनाम्	बहनो के
अपरा	अन्या	दूसरी
पूर्वाम्	पूर्वाम्	पहली को
अभि	अभि+	–
एति	अभि+एति, प्राप्नोति	प्राप्त होती है

पश्चात्	पश्चात्	पीछे
ताः	ताः	वे
प्रत्नऽवत्	पुरातन्य इव	पहलियों की न्याईं
नव्यसीः	नवीनाः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	नवीन
नूनम्	अवश्यम्	अवश्य
अस्मे०	अस्मभ्यम् (पञ्चम्याःशेआदेशः)	हमारे लिये
रेवत्	धनयुक्तंयथा-स्यात्तथा	धन से युक्त होकर
उच्छन्तु	आविर्भवन्तु	प्रकट हों
सुऽदिनाः	शुभदिनाः	शुभ दिनों वालीं
उषसः	उषसः	उषाएँ

संस्कृतार्थः ।

आसां पूर्वासां भगिनीनाम् अपरा प्रत्यहं पूर्वा-

मनुगच्छति, ता नवीनाः शुभदिना उषसः पुरातन्य-
इवाऽवश्यमस्मभ्यं धनयुक्ताः सत्य आविर्भवन्तु । ९।

भाषार्थः।

इन पहली बहनों में से पूर्व के पीछे अगली प्रति-
दिन जाती है, वे नई शुभ दिनों वाली उषाएँ पह-
लियों की न्याई अवश्य हमारे लिये धन से युक्त हो
कर प्रकटें ।९।

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११

प्रबोधयोषःपृणतोमघोन्य बुध्य-
मानाःपणयःससन्तु। रेवदुच्छमघव-
द्भ्योमघोनि रेवत्स्तोत्रेसूनृतेजार-
यन्ती ॥ १० ॥

प्र	प्र+	–
बोधय	प्र+बोधय	जगाओ

उषः	हे उषः !	हे उषा
पृणतः	दातॄन् (पृणातिर्दानकर्म्मा निघं० ३।२०)	दानियों को
मघोनि	हे धनवति !	हे धन वाली
अबुध्यमानाः	अजाग्रतः	न जागते हुए
पणयः	वणिजः (यास्कः)	व्यवहारी
ससन्तु	स्वपन्तु	सोवें
रेवत्	धनयुक्तंयथा- स्यात्तथा	धनसे युक्त होकर
उच्छ	आविर्भव	खिलो
मघवत्ऽभ्यः	धनवद्भ्यः	धनवानों के लिये
मघोनि	हे धनवति!	हे धन वाली

रेवत्	धनयुक्तंयथा-स्यात्तथा	धन से युक्त होकर
स्तोत्रे	स्तोत्रे	स्तोता के लिये
सूनृते	हे दयाशीले !	हे दयावाली
जरयन्ती	क्षीणयन्ती	क्षीण करती हुई

संस्कृतार्थः ।

हे धनवति ! उषः ! (त्वम्) दानिनः प्रबोधय, (कृपणाः) वणिजः (च) अजाग्रतः (सन्तः) स्वपन्तु, हे धनवति ! हे दयाशीले ! (सर्वान् प्राणिनः) क्षीणयन्ती (त्वम्) धनवद्भ्योधनयुक्ता सती स्तोत्रे (च) धनयुक्ता सती आविर्भव । १० ।

भाषार्थः ।

हे धनवाली उषा ! आप दानियों को जगाओ , (कंजूस) व्यवहारी न जागते हुए सोए रहें,हे धनवाली ! हे दयावाली ! (सब प्राणियों को) क्षीण करती हुई आप धनवानों के लिये धन से युक्त होकर (और) स्तोता के लिये धन से युक्त होकर खिलें । १० ।

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अवेयमश्वैद्युवतिःपुरस्ताद्

युङ्क्तेगवामरुणानामनीकम्। विनून-

मुच्छादसतिप्रकेतु र्गृहंगृहमुपति-

ष्ठातेअग्निः ।११।

अव	अव +	–
इयम्	इयम्	यह
अश्वैत्	अव+अश्वैत्, अवरूढवती	उतरी है
युवतिः	युवतिः	युवति
पुरस्तात्	पूर्वस्यांदिशि	पूर्व दिशा में
युङ्क्ते	योजयति	जोड़ता है

गवाम्	अनडुहाम्	बैलों के
अरुणानाम्	अरुणवर्णानाम्	लाल रंग वालों के
अनीकम्	समूहम्	समूह को
वि	वि+	
ननम्	इदानीम्	अब
उच्छात्	वि+उच्छात् आविर्भविष्यति (लेटयाडागमः)	खिलेगी
असति	प्र+असति, प्रकर्षेण भविष्यति (ऋ०६।२३।९)	खूब होगा
प्र	प्र+	--
केतुः	प्रकाशः	प्रकाश
गृहम्ऽगृहम्	गृहंगृहम्	प्रत्येक घर में

उप	उप +	–
तिष्ठाते	उप + तिष्ठाते, उपस्थास्यते	उपस्थित होगी
अग्निः	अग्निः	अग्नि

संस्कृतार्थः ।

इयं युवतिः पूर्वस्यांदिशि अवरूढवती, अरुणवर्णानामनडुहां समूहम्[च] योजयति [सा]इदानीम् आविर्भविष्यति,प्रकाशः प्रकर्षेण भविष्यति, प्रतिगृहम् [च] अग्निः उपस्थास्यते ॥ ११ ॥

भावार्थः।

यह युवति पूर्वदिशा में उतरी है (और) लाल रंग के बैलों को जोड़ती है [वह] अब खिलेगी खूब प्रकाश होगा (और) प्रत्येक घर में अग्नि उपस्थित होगी ॥ ११ ॥

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

उत्तेवयश्चिद्वसतेरपप्तन् नरश्चयेपितभाजोव्युष्टौ । अमासते

वहसिभूरिवाम मुषोदेविदाशुषे

मर्त्याय । १२ ।

उत्	उत् +	
ते	तव	तेरे
वयः	पक्षिणः	पक्षी
चित्	अपि	भी
वसतेः	नीडात्	घोंसले से
अपप्तन्	उत्+अपप्तन्, उड्डीनवन्तः	उड़े हैं
नरः	मनुष्याः	मनुष्य
च	च	और
ये	ये	जो
पितुऽभाजः	अन्नभाजः (पितुरित्यन्ननाम, निघं०,२।७)	अन्न के भाग

विऽउष्टौ	आविर्भावे	खिलने पर
अमा	गृहे (निघं० ,३।४)	घर में
सते	वर्त्तमानाय	रहनेवाले के लिये
वहसि	प्रापयसि	पहुंचाती हो
भूरि	प्रभूतम्	बहुत को
वामम्	वननीयम्(धनम्)	धन को
उषः	हे उषः !	हे उषा
देवि	हे देवि !	हे देवी
दाशुषे	(हविः) दत्तवते	(हवि) देने वाले के लिये
मर्त्याय	मनुष्याय	मनुष्य के लिये

संस्कृतार्थः ।

हे उषोदेवि ! तवाऽविर्भावे [सति] पक्षिणोऽपि

[स्वस्व] नीडाद् उड्डीनवन्तः, मनुष्याश्च येऽन्नभाजः [सन्ति तेऽपि स्वस्वकर्म्मणि प्रवृत्ताः,] [त्वं हविः-] दत्तवते गृहस्थाय मनुष्याय प्रभूतं धनं प्रापयसि ।१२।

भाषार्थः ।

हे उषादेवी ! आपके खिलने पर पक्षी भी [अपने २] घोंसले से उड़े हैं, और जो मनुष्य अन्न के भागी [हैं वे भी अपने २ काम में लग गए हैं] आप [हवि] देनेवाले गृहस्थ मनुष्य के लिये बहुत धन पहुंचाती हो । १२ ।

उषादेवता त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११।

अस्तोढ्वंस्तोम्याब्रह्मणामे ऽवी-
वृधध्वमुशतीरुषासः । युष्माकंदेवी-
रवसासनेम सहस्रिणंचशतिनंच
वाजम् ॥ १३ ॥

अस्तो॑ढ्वम्	स्तुताभवत	आपकी स्तुति हो
स्तो॒म्या॒:	हे स्तुत्यर्हाः !	हे स्तुति के योग्यो
ब्रह्म॑णा	स्तोत्रेण	स्तोत्र से
मे॒	मम	मेरे
अवी॑वृधध्वम्	प्रवृद्धाभवत	बढो
उ॒श॒तीः	कामयमानाः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	कामना करती हुईं
उ॒ष॒स॒:	हे उषसः !	हे उषाओ
यु॒ष्माक॑म्	युष्माकम्	आप के
दे॒वीः	हे देव्यः ! (पूर्वसवर्णदीर्घः)	हे देवियो
अव॑सा	रक्षया	रक्षा से
स॒ने॒म॒	सम्भजेम	हम भागी बनें

स॒हस्रिण॑म्	सहस्रसङ्ख्याकम्	हजार को
च॒	(पूरणः)	–
श॒तिन॑म्	शतसङ्ख्याकम्	सौ को
च॒	च	और
वाज॑म्	धनम् (सा०भा०)	धन को

संस्कृतार्थः ।

हे स्तुत्यर्हाः ! देव्यः ! उषसः ! कामयमानाः (यूयम्) मत्स्तोत्रेण स्तुताभवत प्रवृद्धाभवत(च,) [वयम्] युष्मदीयया रक्षया शतं सहस्रं च धनं सम्भजेम । १३,।

भाषार्थः ।

हे स्तुति के योग्य देवियो ! हे उषाओ ! कामना करती हुई आपकी मेरे स्तोत्र से स्तुति हो [और] आप बढ़ें, हम आपकी रक्षा से सैंकड़ों और हजारों धनों के भागी बनें । १३ ।

इति चतुर्विंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ०मं०१ सू०१२५।

दानं देवता, कक्षीवानृषिः।

विनियोगोलैङ्गिकः।

सूक्त का भाषार्थ।

दानी पुरुष प्रातःकाल में आकर सवेरे सवेरे विद्वान को धन देता है, और वह उसको लेकर रत्न छोड़ता है, वह उस धन से अपनी सन्तान का पालन करता है आयु को बढ़ाता है और वीर पुत्रों से घिरा हुआ खूब हृष्ट पुष्ट होता है। १। हे प्रातःकाल में यज्ञ कराने के लिये आने वाले विद्वान! जो आप हुए आप को पक्षी की न्याईं धन की फांसी में फंसाता है, वह सुन्दर गौओं, बहुत सुवर्ण और सुन्दर घोड़ों का स्वामी बनता है और इन्द्र उसको बड़ा सामर्थ्य और बल देते हैं।२। मैं यज्ञ कराने वाला आज सवेरे ही शुभ कर्म करने वाले यज्ञ के पुत्र * की कामना करता हुआ धनसे भरे हुए † रथ को लेकर आया हूं हे यजमान! वीरों के राजा इन्द्र को सोमलता की डंडी का रस पिला कर मद युक्त कर और स्तुति के गीतों से उन को उत्तेजित कर।३। जो यज्ञ करता है या करने की इच्छा करता है उस के लिये सुख की नदियाँ बहती हैं, जो दान देता है या देने की इच्छा करता है उस के यश को फैलाती हुई चारों ओर से घी की धाराएँ उस को प्राप्त होती हैं ‡।४। जो देता है वह पूज्य होकर स्वर्ग की पीठ

---

* यज्ञ का पुत्र वह है, जो यज्ञ की परि[...] पुत्र पिता के वंश को चलाता है।

† धन से भरा हुआ रथ शुभ कर्म व[...]

‡ अर्थात उस [...] वस्तु की व[...]

ऋ०सं० ७१,७२ अङ्कयोः शुद्धयशुद्धिपत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्
३१९९	९	जसा)	जैसा)
३२००	२२	कक	कूक
३२०६	७	यवाक्तुः	युवाक्तुः
३२११	१७	लुक)	लुक्)
३२१२	१५	(क्विप)	(क्विप्)
३२१३	१६	पातं	पात्रं
३२१६	११	किसा	किसी
३२२०	२	गोभर्य	गोभिर्यु
,,	६	दुह्यः,	दुह्युः,
३२२५	९	णत्रोऽ	णोऽ
३२२६	१२	भात	प्रभात
,,	१३	ओं के	पाओं के
३२२८	९	का नव्त्रे	को नव्वे
३२३२	१३	लटय	लेटय
३२३६	४	दू न्	द्यून्
३२३८	३	अस्य	अस्य
३२३९	१०	दरः	दुरः
३२४१	१५	भुर्	भुर्
३२४३	१७	इन्दु	इन्दु
३२४६	२०	स्यात	स्यात्
३२४७	४	सुऽ	सुऽ
३२४९	१६	यास	यसि
३२५३	४	मनन्तः	मनन्तैः
३२६२	१५	वाल का	वाले क
३२७६	१३	भुर	भुर्
३२७८	९	सान	सान
३२७९	४	नक्ता	नक्ता
३२८५	१६	भवत्)	ऽभवत्)
३२९४	५	सरिः	सरिः

विज्ञापन।

इस अंक के साथ सातवाँ साल आरंभ होगया है, जिन स्वाध्यायी पंडितों की सूचना आएगी उनका नाम सातवें साल के रजिष्टर में लिखा जाएगा, जिनकी नहीं आएगी उन के नाम अगला अंक नहीं जाएगा। पिछले अंक डाक महसूल भेजने से भेजे जाएँगे।

मुन्शी जयराम
मैनेजर ऋग्वेद संहिता,
फ़ीरोज़पुर छावनी।

अंक ७५-७६] [आश्विन १९६९.

ऋग्वेद संहिता

(वैदिक जीवन व्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलतान निवासी पं० शङ्करदत्तशास्त्री की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने सम्पादन किया।

लाहौर

पञ्जाब एकानोमीकल यन्त्रालय में प्रिण्टर लाला लालमन के अधिकार से छपा।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २)

पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)

७० अंकों का मूल्य १३।)

पर चढ़ता है, सचमुच वह देवताओं में मिलजाता है, उसके लिये नदियाँ घो को बहाती हैं, उस के लिये यह दक्षिणा * सदा वृद्धि करने वाली होती है ।५। ये नाना प्रकार के भोग † दक्षिणा देने वालों के हैं, आकाश में जो अनेक सूर्यलोक हैं उनको दक्षिणा देने वाले पाते हैं, दक्षिणा देने वाले लंबी आयु को भोगते हैं और दक्षिणा देनेवाले अमृत के भागी बनते हैं ।६। दक्षिणा देनेवाले दुःख और पाप को न प्राप्त हों, नियम के सच्चे और भजनशील पुरुष क्षीणता को न प्राप्त हों, कोई दूसरा उनका कोट ‡ बने, सब शोक न देने वाले स्वार्थी को प्राप्त हों ।७।

दानं देवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

प्रातारत्नंप्रातरित्वादधाति तंचिकित्वान्प्रतिगृह्यानिधत्ते। तेनप्रजांवर्धयमानआयू रायस्पोषेण सचतेसुवीरः॥ १॥

---

* जो उस ने यज्ञ में ऋत्विजों को दी है ।

† जो हम इस लोक में धनियों के हां देखते हैं ।

‡ जिस में दुःख और पाप के तीर लगें और यह स्वयं भीतर सुरक्षित रहे ।

प्रातः०	प्रभाते	सवेरे सवेरे
रत्नम्	रमणीयंधनम्	रमणीय धन को
प्रातःऽइत्वा	प्रातरागत्य	प्रातः काल में आकर
दधाति	ददाति	देता है
तम्	तम्	उस को
चिकित्वान्	विद्वान्	विद्वान
प्रतिऽगृह्य	स्वीकृत्य	स्वीकार करके
नि	नि+	--
धत्ते	नि+धत्ते, स्थापयति	रखता है
तेन	तेन	उस से
प्रऽजाम्	सन्ततिम्	सन्तान को
वर्धयमानः	वर्धयमानः	बढ़ाता हुआ

आयुः	आयुः	आयु को
रायः	धनस्य	धन की
पोषेण	पुष्ट्या	पुष्टि से
सचते	सङ्गच्छते	युक्त होता है
सुऽवीरः	सुवीरैर्युक्तः	खूब वीरों से युक्त

संस्कृतार्थः ।

(दानशीलःपुरुषः) प्रातरागत्य प्रभाते (एव) रमणीयं धनं ददाति, विद्वान् तम् (धनम्) स्वीकृत्य (स्वपार्श्वे) स्थापयति, (सः) तेन (धनेन) सन्ततिम् आयुः (च) वर्धयन् (सन्) सुवीरः (भूत्वा) धनस्य पुष्ट्या सङ्गच्छते ॥ १ ॥

भावार्थः ।

(दानी पुरुष) प्रातः काल में आकर सवेरे सवेरे रमणीय धन को देता है, विद्वान् उसको स्वीकार करके (अपने पास) रखता है, (वह) उस (धन) से सन्तान (और) आयु को बढ़ाता हुआ खूब वीरों वाला (होकर) धन की पुष्टि से युक्त होता है ॥१॥

दानंदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।१११११।११११

सुगुरसत्सुहिरण्यःस्वश्वो बृह-
दस्मैवयइन्द्रोदधातियस्त्वायन्तं
वसुनाप्रातरित्वो मुक्षीजयेवपदिमु-
त्सिनाति। २।

सुऽगुः	शोभनाभिर्गोभि-रुपेतः	सुन्दर गौओं से युक्त
असत्	भवति (लेडघडागमः)	होता है
सुऽहिरण्यः	प्रभूतेन हिरण्येन युक्तः	बहुत स्वर्णसे युक्त
सुऽअश्वः	शोभनैरश्वैः सहितः	सुन्दर घोड़ोंसे युक्त
बृहत्	बृहत्	बहुत को

अस्मै	अस्मै	इस के लिये
वयः	सामर्थ्यम् (आ०को०)	सामर्थ्य को
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
दधाति	ददाति	देता है
यः	यः	जो
त्वा	त्वाम्	तुझ को
आऽयन्तम्	आगच्छन्तम्	आते हुए को
वसुना	धनेन	धन से
प्रातःऽइत्वः	हेप्रातरागामिन्!	हे प्रातः काल में आने वाला
मुक्षीजयाऽइव	मुच्यमाना सती (बन्धनम्)जयतीति मुक्षीजा रज्जुपाशः,तेन इव	रज्जुपाश से जैसे

पदिम्	पक्षिणम्	पक्षी को
उत्ऽसि नाति	उत्कृष्टतया बध्नाति	खूब बांधता है

संस्कृतार्थः ।

हे प्रातरागन्तः (विद्वन् !) (सः) शोभनाभिर्गोभिरुपेतः, प्रभूतेन हिरण्येन युक्तः, शोभनैरश्वैः सहितः (च) भवति, इन्द्रः (च) तस्मै बृहत् सामर्थ्यं ददाति, यः आगच्छन्तं त्वां 'रज्जुपाशेन पक्षिणमिव' धनेनोत्कृष्टतया बध्नाति ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे प्रातः काल में आने वाले (विद्वान्!)(वह) सुन्दर गौओं से युक्त, बहुत सुवर्ण से युक्त (और) सुन्दर घोड़ों वाला होता है (और) उसके लिये इन्द्र बहुत सामर्थ्य को देते हैं जो आते हुए तुझको 'रज्जुपाश से पक्षी की न्याईं' धन से खूब बांधता है ॥ २ ॥

दानंदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

आयमद्य सुकृतंप्रातरिच्छन्निन्-

ष्टेःपुत्रंवसुमतारथेन। अंशोःसुतंपाययमत्सरस्य क्षयद्वीरंवर्धयसूनृताभिः ॥ २ ॥

आयम्	प्राप्तोऽस्मि (अयगतौ)	प्राप्त हुआ हूं
अद्य	अद्य	आज
सुऽकृतम्	सुकर्म्माणम् (क्विप्)	शुभ कर्म्म करने वाले को
प्रातः	प्रातःकाले	प्रातः काल में
इच्छन्	कामयमानः	कामना करताहुआ
इष्टेः	यज्ञस्य	यज्ञ के
पुत्रम्	पुत्रम्	पुत्र को
वसुऽमता	धनवता	धन वाले से

रथेन	रथेन	रथ से
अंशोः	सोमकाण्डस्य	सोम की डंडी के
सुतम्	निष्पीडितम् (रसम्)	निचोड़े हुए (रस) को
पायय	पायय	पिला
मत्सरस्य	मदकारकस्य	मद करने वाले की
क्षयत्ऽवीरम्	वीराणामीशितारम् (क्षयतिरैश्वर्य कर्म्मा निघं०२।२०)	वीरों के राजा को
वर्धय	वर्धय	बढ़ा
सूनृताभिः	स्तुतिगीतैः (आ० को०)	स्तुति के गीतों से

संस्कृतार्थः।

(अहम्) अद्य प्रातःकाले सुकर्म्माणं यज्ञस्य पुत्रं कामयमानः (सन्)धनवता रथेन आगतोऽस्मि,(हे यज-

मान ! त्वम्) वीराणामीशितारम् (इन्द्रम्) मद्-कारकस्य सोमकाण्डस्य निष्पीडितम् (रसम्) पायय, स्तुतिगीतैः (च) वर्धय ॥ ३ ॥

भावार्थः ।

(मैं) आज प्रातः कालमें शुभकर्म्म करने वाले यज्ञ के पुत्र की कामना करता हुआ धन वाले रथ के साथ आया हूं, (हे यजमान ! तू) वीरों के राजा (इन्द्र) को मदकारक सोम की डंडी के निचोड़े हुए रस को पिला (और) स्तुति के गीतों से बढ़ा ॥ ३ ॥

दानंदेवता जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

उपक्षरन्तिसिन्धवोमयोभुव ईजानंचयक्ष्यमाणंचधेनवः । पृणान्तंचपपुरिंचश्रवस्यवो घृतस्यधारा उपयन्तिविश्वतः ॥ ४ ॥

भावार्थः ।

सुखके देने वालीं गौ रूप नदियाँ यजन करते हुए और यजन करने की इच्छा वाले के पास जाकर वहती हैं,(और) यश की इच्छा करती हुईं घृत की धाराएँ दान करते हुए और दान करने की इच्छा वाले को चारों ओर से प्राप्त होती हैं ॥ ४ ॥

दानंदेवता जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

नाकस्यपृष्ठेअधितिष्ठतिश्रितो
यःपृणातिसहदेवेषुगच्छति। तस्मा-
आपोघृतमर्षन्तिसिन्धव स्तस्मा-
इयंदक्षिणापिन्वतेसदा ॥ ५ ॥

नाकस्य	स्वर्गस्य	स्वर्ग की
पृष्ठे	पृष्ठे	पीठ पर

अधि	अधि+	–
तिष्ठति	अधि + तिष्ठति	बैठता है
श्रितः	सत्कृतः	सत्कार किया हुआ
यः	यः	जो
पृणाति	ददाति (निघं०३।२०)	दान करता है
सः	सः	वह
ह	खलु	सच मुच
देवेषु	देवेषु (द्वितीयार्थे सप्तमी)	देवताओं में
गच्छति	प्राप्नोति	पहुंच जाता है
तस्मै	तस्मै	उस के लिये
आपः	आपः	जल

उप	उप+	–
क्षरन्ति	उप + क्षरन्ति, उपेत्य स्रवन्ति	पास जाकर बहती हैं
सिन्धवः	नद्यः	नदियाँ
मयःऽभुवः	सुखस्यभावयित्र्यः	सुख के देने वालीं
ईजानम्	यजमानम्	यजन करते हुए को
च	(पूरणः)	–
यक्ष्यमाणम्	यक्ष्यमाणम्	यजन करने की इच्छा वाले को
च	च	और
धेनवः	गावः	गौएँ
पृणन्तम्	ददानम् (पृणातिर्दानकर्म्मा निघं०३।२०)	दान करते हुए को

च	(पूरणः)	–
पपुरिम्	दास्यमानम्	दान करने की इच्छा वाले को
च	च	और
श्रवस्यवः	यशोऽभिलाषिण्यः	यश के चाहने वाली
घृतस्य	घृतस्य	घृत की
धाराः	धाराः	धाराएँ
उप	उप+	–
यन्ति	उप+यन्ति, प्राप्नुवन्ति	प्राप्त होती हैं
विश्वतः	सर्वतः	सब ओर से

संस्कृतार्थः ।

सुखस्य भावयित्र्यो गोरूपा नद्यः यजमानं यक्ष्यमाणं च उपेत्य स्रवन्ति, यशोऽभिलाषिण्यो घृतस्य धाराः(च) ददानं दास्यमानं च सर्वतः प्राप्नुवन्ति॥४॥

भाषार्थः ।

सुखके देने वालीं गौ रूप नदियाँ यजन करते हुए और यजन करने की इच्छा वाले के पास जाकर वहती हैं,(और) यश की इच्छा करती हुई घृत की धाराएँ दान करते हुए और दान करने की इच्छा वाले को चारों ओर से प्राप्त होती हैं॥ ४ ॥

दानंदेवता जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

नाकस्यपृष्ठेअधितिष्ठतिश्रितो

यःपृणातिसहदेवेषुगच्छति। तस्मा-

आपोघृतमर्षन्तिसिन्धव स्तस्मा-

इयंदक्षिणापिन्वतेसदा ॥ ५ ॥

नाकस्य	स्वर्गस्य	स्वर्ग की
पृष्ठे	पृष्ठे	पीठ पर

अधि	अधि+	-
तिष्ठति	अधि + तिष्ठति	बैठता है
श्रितः	सत्कृतः	सत्कार किया हुआ
यः	यः	जो
पृणाति	ददाति (निघं०३।२०)	दान करता है
सः	सः	वह
ह	खलु	सच मुच
देवेषु	देवेषु (द्वितीयार्थे सप्तमी)	देवताओं में
गच्छति	प्राप्नोति	पहुंच जाता है
तस्मै	तस्मै	उस के लिये
आपः	आपः	जल

भावार्थः ।

सुखके देने वाली गौ रूप नदियाँ यजन करते हुए और यजन करने की इच्छा वाले के पास जाकर बहती हैं,(और) यश की इच्छा करती हुई घृत की धाराएँ दान करते हुए और दान करने की इच्छा वाले को चारों ओर से प्राप्त होती हैं॥ ४॥

दानंदेवता जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

नाकस्यपृष्ठेअधितिष्ठतिश्रितो

यःपृणातिसहदेवेषुगच्छति। तस्मा-

आपोघृतमर्षन्तिसिन्धव स्तस्मा-

इयंदक्षिणापिन्वतेसदा ॥ ५ ॥

नाकस्य	स्वर्गस्य	स्वर्ग की
पृष्ठे	पृष्ठे	पीठ पर

की पीठ पर बैठता है, (वह) सच मुच देवताओं में पहुंच जाता है, उस के लिये नदीरूप जल घृत को बहाते हैं (और) उस के लिये यह दक्षिणा सदा बढ़ती है ॥ ५ ॥

दानं देवता निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।११।१०।११।११

दक्षिणावतामिदिमानि चित्रा दक्षिणावतां दिवि सूर्यासः । दक्षिणावन्तो अमृतं भजन्ते दक्षिणावन्तः प्रतिरन्त आयुः ॥ ६ ॥

दक्षिणाऽवताम्	दानवताम्	दानियों के
इत्	एव	ही
इमानि	इमानि	ये

घृतम्	घृतम्	घी को
अर्षन्ति	स्रावयन्ति	बहाती हैं
सिन्धवः	नदीरूपाः	नदीरूप
तस्मै	तस्मै	उस के लिये
इयम्	इयम्	यह
दक्षिणा	दक्षिणा	दक्षिणा
पिन्वते	वर्धते	बढ़ती है
सदा	सदा	सदा

संस्कृतार्थः ।

यो बुद्राति स सत्कृतः (सन्) स्वर्गस्य पृष्ठम् अधितिष्ठति, (सः) खलु देवेषु प्राप्नोति, तस्मै नदीरूपाआपोघृतं स्रावयन्ति, तस्मै इयं दक्षिणा सदा वर्धते ॥ ५ ॥

भावार्थः ।

जो दान करता है वह सत्कार किया हुआ स्वर्ग

की पीठ पर बैठता है, (वह) सच मुच देवताओं में पहुंच जाता है, उस के लिये नदीरूप जल घृत को बहाते हैं (और) उस के लिये यह दक्षिणा सदा बढ़ती है ॥ ५ ॥

दानं देवता निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।११।१०।११।११

दक्षि॑णावता॒मिदि॒मानि॑ चि॒त्रा दक्षि॑णावतां दि॒वि सूर्या॑सः । दक्षि॑णावन्तो अ॒मृतं॑ भजन्ते॒ दक्षि॑णावन्तः॒ प्रति॑रन्त॒ आयुः॑ ॥ ६ ॥

दक्षि॑णा-ऽवताम्	दानवताम्	दानियोंके
इत्	एव	ही
इ॒मानि॑	इमानि	ये

चित्रा	विचित्राणि (धनानि) (शेर्लोपः)	नाना प्रकारके (धन)
दक्षिणाऽवताम्	दानवताम्	दानियों के
दिवि	दिवि	द्यौ में
सूर्यासः	सूर्याः (जसोऽसुगागमः)	सूर्य
दक्षिणाऽवन्तः	दानवन्तः	दानी
अमृतम्	अमृतम्	अमृत को
भजन्ते	सेवन्ते	सेवन करते हैं
दक्षिणाऽवन्तः	दानवन्तः	दानी
प्र	प्र +	–

तिरन्ते	प्र + तिरन्ते,प्रव र्धयन्ति	वढ़ाते हैं
आयुः	आयुः	आयु को

संस्कृतार्थः ।

दानिनामिमानिविचित्राणि (धनानि,)दानिनाम् एव) द्युलोके सूर्य्याः, दानिनोऽमृत सेवन्ते, दानिनः (च स्वकीयम्) आयुः प्रवर्धयन्ति ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

दानियों के ये नाना प्रकार के (धन हैं,) दानियों के (ही) द्यौ में सूर्य्य (हैं,)दानी अमृत को सेवन करते हैं (और) दानी (अपनी) आयु को वढ़ाते हैं ॥६ ॥

दानंदेवता त्रिष्टुप्छन्दः।११।११।११।११

मापृणन्तोदुरितमेनआरन् मा-

जारिषुःसूरयःसुव्रतासः। अन्यस्ते-

षांपरिधिरस्तुकश्चिद्पृणन्तमभि संयन्तुशोकाः ।७।

मा	मा	मत
पृणन्तः	ददानाः	दान करते हुए
दुःऽइतम्	दुःखम्	दुःख को
एनः	पापम्	पाप को
आ	आ+	–
अरन्	आ+अरन्,प्राप्नुवन्तु (लोडर्थे लट्)	प्राप्त हों
मा	मा	मत
जारिषुः	जीर्णाभवन्तु (लोडर्थेलुङघडभावः)	क्षीण हों
सूरयः	स्तोतारः	स्तोता

सु॒ऽव्र॒तास॑:	सुव्रतः	नियमों में दृढ़
अ॒न्यः	अन्यः	दूसरा
तेषा॑म्	तेषाम्	उनका
प॒रि॒ऽधिः	परिधिः	कोट
अ॒स्तु	भवतु	हो
कः	कः+चित्	कोई
चि॒त्	+चित्	–
अपृ॒णन्त॑म्	दानरहितम्	दान से रहित को
अ॒भि	प्रति	की ओर
सम्	सम्+	–
य॒न्तु	सम्+यन्तु,सम्यग् गच्छन्तु	सब के सब जावें
शोका॑:	शोकाः	शोक

संस्कृतार्थः ।

दानिनो दुःखं पापम् (च) न प्राप्नुवन्तु, सुव्रताः स्तोतारो जीर्णा न भवन्तु, अन्यः कश्चित् तेषां परिधिर्भवतु शोकाः (च) दानरहितं प्रति सम्यग् गच्छन्तु ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

दानी दुःख (और) पाप को न प्राप्त हों (और) नियमों में दृढ़ स्तोता लोग क्षीण न हों, उन का कोई दूसरा कोटरूप हो (और) शोक सब दानहीन की ओर जावें ॥ ७ ॥

इति पञ्चविंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ०मं०१ सू० १२६।

आदितः पञ्चानां भावयव्योदेवता, षष्ठयाः सप्तम्याश्च जायापतीदेवते कक्षीवानृषिः।

विनियोगोलैङ्गिकः।

सूक्त का भावार्थ।

मैं सिन्धु के तट पर रहने वाले अजेय राजा भावयव्य की स्तुति में बुद्धिद्वारा तीव्र स्तोत्रों को भेट करता हूं जिस ने यश की कामना से मेरे लिये सहस्र यज्ञ किये ॥१॥ उस बलवान राजा की प्रार्थना से मुझ कक्षीवान ने सौ सोने के हार, सौ सधे हुए घोड़े और सौ गौएँ एक ही दिन में ग्रहण किये, इसका द्युलोक में ऐसा यश फैला है जो कभी क्षीण न हो।२। मेरे पास राजा स्वनय* के दिये हुए पिंगल वर्ण के घोड़े और दस रथ जिन में स्त्रियाँ बैठी हैं खड़े हैं, उनके पीछे साठ हजार गौओं का झुंड आरहा है, ये कक्षीवान को जवानी के दिन बीतने पर मिले हैं।३। दस रथों में जुड़े हुए मेरे चालीस लाल रंग के घोड़ों की कतार हजार गौओंके आगे चलती है, पज्रवंशी कक्षीवान के पुत्र मद के टपकाने वाले सुनहरी सिंगार से युक्त घोड़ों को उज्ज्वल करते हैं।४। हे पज्रो! तुम जो भ्रातृभाव रखते हुए (और दर्शपौर्णमासादि इष्टियों के लिये) शकट से युक्त हुए २, कुटुम्ब वाली स्त्रियों की न्याईं कीर्ति की इच्छा करते हो, मैं तुम्हारे लिये पूर्वदान की न्याईं तीन जुड़े हुए रथ और आर्यों के रखने योग्य आठ गौओं को लाया हूं ।५। जो भोग के योग्य खूब चारों ओर से ग्रहण

---

* स्वनय,भावयव्य के पुत्र का नाम है।

की हुई मेरी पत्नी जनी हुई नकुली की न्याईं अत्यन्त चिमटती है ,वह बहुत निषेक वाली मुझे सैकड़ों सुखों को देती है † ।६। हे पति ! मुझ को अत्यन्त समीप से स्पर्श करो मुझ को बाला न समझो, क्योंकि मैं गंधार की भेड की न्याईं सब स्थानों में रोमवाली हूं ।७।

भावयव्योदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

अमन्दान्त्स्तोमान्प्रभरेमनीषा सिन्धावधिक्षियतोभाव्यस्य। योमे सहस्रममिमीतसवा नतूर्तोराजाश्रवइच्छमानः ॥ १ ॥

अमन्दान्	तीव्रान्	तीव्रों को
स्तोमान्	स्तवान्	स्तोत्रों को

---

†छठे और सातवें मन्त्र में पति और पत्नी का संवाद है जो पूर्व समय से चला आता है, देखो वृहद्देवता० ३।१५ (जायापत्योः सम्प्रवादोद्दृचेन) कक्षीवान यहां पर अपने बुढ़ापे के सुख के सम्बन्ध में इसको पढ़ते प्रतीत होते हैं, देखो ऋ०१।५१।१३। जिस में बूढे कक्षीवान को युवति वृचया के मिलने की कथा है, सातवाँ मंत्र वृचया का कथन और छठा कक्षीवान का होसकता है।

प्र	प्र+	–
भरे	प्र+भरे, अर्पयामि	भेट करता हूं
मनीषा	बुद्धया (विभक्तेः सुः)	बुद्धि से
सिन्धौ	सिन्धुतटे	सिन्धु के तट पर
अधि	अधि+	–
क्षियतः	अधि+क्षियतः, निवसतः (क्षिनिवासे)	रहने वाले के
भाव्यस्य	भावयव्यस्य	भावयव्य के
यः	यः	जिस ने
मे	मह्यम्	मेरे लिये
सहस्रम्	सहस्रम्	हजार को
अमिमीत	कृतवान्	किया है

स्तवान्	यज्ञान्	यज्ञों को
अतूर्तः	जेतुमशक्यः	न जीते जानेवाला
राजा	राजा	राजा
श्रवः	यशः	यश को
इच्छमानः	कामयमानः (व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम्)	कामना करता हुआ

(संस्कृतार्थः।)

(अहम्) सिन्धुतटे निवसतो भावयव्यस्य (स्तुतौ) तीव्रान् स्तवान् बुद्ध्या अर्पयामि, यो जेतुमशक्यो राजा यशः कामयमानः (सन्) मदर्थं सहस्रं यज्ञान् कृतवान् ॥ १ ॥

(भावार्थः।)

मैं सिन्धु के तट पर रहने वाले (भावयव्य) की (स्तुति में) तीव्र स्तोत्रों को बुद्धिद्वारा भेट करता हूं, जिस राजा ने यश की कामना करते हुए मेरे लिये सहस्र यज्ञ किये हैं ॥ १॥

दानंदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

शतंराज्ञोनाधमानस्यनिष्कान्
शतमश्वान्प्रयतान्त्सद्यआदम्।श-
तंकक्षीवाँअसुरस्यगोनांदिविश्रवोऽ-
जरमाततान ॥ २ ॥

शतम्	शतम्	सौ को
राज्ञः	राज्ञः	राजा के
नाधमानस्य	याचमानस्य	प्रार्थना करतेहुए क
निष्कान्	स्वर्णहारान्	सोने के हारों को
शतम्	शतम्	सौ को
अश्वान्	अश्वान्	घोड़ों को

प्रऽयतान्	वशीभूतान्	सधे हुओं को
सद्यः	एकस्मिन्नेवदिने (आ०को०)	एकही दिन में
आदम्	आत्तवानस्मि	मैंने ग्रहण किया है
शतम्	शतम्	सौ को
कक्षीवान्	कक्षीवान्	कक्षीवान्
असुरस्य	प्राणवतः	बलवान की
गोनाम्	गवाम् (नुडागमश्छान्दसः)	गौओं के
दिवि	द्युलोके	द्युलोक में
श्रवः	यशः	यश को
अजरम्	अक्षीणम्	न क्षीण होने वाले को
आ	आ+	–
ततान	आ+ततान, विस्तारितवान्	फैलाया है

संस्कृतार्थः ।

(अहम्) कक्षीवान् प्रार्थयमानस्य प्राणवतो राज्ञः शतं स्वर्णहारान्,शतं वशीभूतानश्वान्, गवां शतम् (च) सद्योगृहीतवानस्मि (यः) द्युलोके अक्षीणंयशो विस्तारितवान् ॥ २ ॥

भाषार्थः।

मुझ कक्षीवान ने प्रार्थना करते हुए बलवान राजा के सौ सोने के हारों को, सौ सधे हुए घोड़ों को (और) सौ गौओं को ग्रहण किया है (जिस राजा ने) द्युलोक में क्षीण न होने वाले यश को फैलाया है ॥ २ ॥

भावयव्योदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

उपमाश्यावाःस्वनयेनदत्ता

वधूमन्तोदशरथासोअस्थुः । षष्टिः

सहस्रमनुगव्यमागात् सनत्कक्षी-

वाँअभिपित्वेअह्नाम् ॥ २ ॥

उप	उप +	—
मा	माम्	मुझ को
श्यावाः	कृष्णपीतवर्णाः (अश्वाः)	काले(और)पीले रंगके (घोड़े)
स्वनयेन	(राज्ञा)स्वनयेन	(राजा)स्वनय ने
दत्ताः	दत्ताः	दिये हुए
वधूऽमन्तः	स्त्रीभिर्युक्ताः	स्त्रियों से युक्त
दश	दश	दस
रथासः	रथाः (जसोऽसुगागमः)	रथ
अस्थुः	उप+अस्थुः, उप-स्थितवन्तः	समीप ठैरे हैं
षष्टिः	षष्टिः	साठ
सहस्रम्	सहस्रम्	हजार

अनु	अनु	पीछे २
गव्यम्	गोसमूहः (सा० भा०)	गौएँ
आ	आ+	–
अगात्	आ+अगात्, आगतवान्	आई हैं
सनत्	प्राप्तवान् (लेट्यडागमः)	पाया है
कक्षीवान्	कक्षीवान्	कक्षीवान ने
अभिऽपित्वे	अत्यये	बीतने पर
अह्नाम्	दिवसानाम्	दिनों के

संस्कृतार्थः।

(राज्ञा) स्वनयेन दत्ताः कृष्णपीतवर्णाः (अश्वाः) स्त्रीभिर्युक्ताः दश रथाः (च) मामुपस्थितवन्तः, षष्टिसहस्रं गावः (अपि) अन्वागतवत्यः (एतत् सर्वम्) कक्षीवान् दिवसानामत्यये प्राप्तवान् ॥ ३ ॥

भाषार्थः।

(राजा) स्वनय के दिये हुए काले पीले रंग के घोड़े (और) स्त्रियों के सहित दसरथ मेरे पास उपस्थित हैं, साठ हजार गौएँ (भी) पीछे आई हैं, (इन सब को) कक्षीवान ने दिनों के बीतने पर पाया है॥ ३॥

भावयव्योदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।१११११११११

चत्वारिंशद्दशरथस्यशोणाः स-
हस्रस्याऽग्रेश्रेणिंनयन्ति। मदच्युतः
कृशनावतोअत्यान् कक्षीवन्तउद-
मृक्षन्तपज्राः॥ ४॥

चत्वारिंशत्	चत्वारिंशत्	चालीस
दशऽरथस्य	दशरथाः सन्ति यस्य तथोक्तस्य	दसरथों वाले के
शोणाः	सिन्दूरवर्णाः (अश्वाः)	सिंदूरी रंगके(घोड़े)

सहस्रस्य	सहस्रस्य	सहस्र के
अग्रे	अग्रे	आगे
श्रेणिम्	श्रेणिम्	कतार को
नयन्ति	नयन्ति	ले चलते हैं
मदऽच्युतः	मदस्य च्यावयितॄन् (क्विप्)	मदके टपकाने वालों को
कृशनऽवतः	स्वर्णयुक्तान्	स्वर्ण वालों को
अत्यान्	अश्वान् (निघं० १।१४)	घोड़ों को
कक्षीवन्तः	कक्षीवतः पुत्राः	कक्षीवानके पुत्र
उत्	उत्+	–
अमृक्षन्त	उत्+अमृक्षन्त, उत्कृष्टतया मार्जयन्ति (लङर्थेलङ्)	उज्ज्वल करते हैं
पज्राः	पज्रवंशीयाः	पज्रवंशी

संस्कृतार्थः।

दशरथोपेतस्य (मम) सिन्दूरवर्णाश्चत्वारिंशत् (अश्वाः) (गवाम्) सहस्रस्य श्रेणिम् अग्रे नयन्ति, मदस्य च्यावयितॄन् स्वर्णयुक्तान् (चैतान्) अश्वान् पज्रवंशीयाः कक्षीवतःपुत्राः संमार्जयन्ति ॥ ४ ॥

भावार्थः।

(मुझ) दस रथों वाले के संदूरी रंग के चालीस (घोड़े) हजार (गौओं की) कतार को आगे ले चलते हैं, मद के टपकाने वाले (और) सोने से युक्त (इन) घोड़ों को पज्रवंशी कक्षीवान के पुत्र। उज्ज्वल करते हैं ॥ ४ ॥

भावयव्योदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।११।११।११।११

पूर्वामनप्रयतिमाददे वस्त्रीन्यु-

ताँअष्टावरिधायसोगाः । सुबन्ध-

वोयेविश्याइवव्रा अनस्वन्तःश्रवऐ-

षन्तपज्राः ॥ ५ ॥

पूर्वाम्	पूर्वाम्	पहली को
अनु	अनु-(सूत्य)	अनुसार
प्रऽयतिम्	प्रदानम्	भेट को
आ	आ+	–
ददे	आ+ददे,आनीत-वानस्मि	में लाया हूं
वः	युष्मभ्यम्	तुम्हारे लिये
त्रीन्	त्रीन्	तीनों को
युक्तान्	युक्तान्	जुड़े हुओं को
अष्टौ	अष्टौ	आठों को
अरिऽधायसः	आर्य्यधारणयोग्याः (आ० को०)	आर्य्यों के रखने के योग्यों को
गाः	गाः	गौओं को

सुऽबन्धव:	सुबन्धुयुक्ताः	अच्छे बन्धुओंवाले
ये	ये	जिन्होंने
विश्याःऽइव	कुटुम्बिन्य इव (आ० को०)	कुटुम्ब वालियों की न्याईं
व्राः	स्त्रियः	स्त्रियाँ
अनस्वन्तः	अनः शकटं तद्वन्तः	शकटसे युक्तहुए२
श्रवः	यशः	यश को
ऐषन्त	इच्छन्ति (लडर्थे लङ्)	इच्छा करते हैं
पज्राः	पज्राः	पज्रवंशी

संस्कृतार्थः ।

(हे पज्रा !,) (अहम्) युष्मदर्थं पूर्वप्रदानमनुसृत्य त्रीन् युक्तान् (रथान्) आर्य्यधारणयोग्या अष्टौ गाः (च) आनीतवानस्मि, ये सुबन्धवः पज्राः (इष्टचर्थम्) शकटवन्तः (सन्तः) कुटुम्बिन्यः स्त्रिय इव यश-इच्छन्ति ॥ ५ ॥

भाषार्थः।

हे पज्रो ! मैं तुम्हारे लिये पहले दान के अनुसार तीन जुड़े हुए (रथों) को (और) आर्य्यों के रखने योग्य आठ गौओं को लाया हूं जो अच्छे वन्धुओं वाले पज्रवंशी (इष्टि के लिये) शकट से युक्त हुए२ कुटुम्बवाली स्त्रियोंकी न्याईं यश की इच्छा करते हैं ॥ ५ ॥

जायापतीदेवते, भुरिगनुष्टुप्छन्दः । ९।८।८

आगधितापरिगधिता याकशीकेवजङ्गहे । ददातिमह्यंयादुरी याशूनांभोज्याशता । ६ ।

आऽगधिता	सम्यग्गृहीता (गध्य गृह्णातेरिति यास्कः)	खूब ग्रहण की हुई
परिऽगधिता	परितोगृहीता	चारों ओर से ग्रहण की हुई
या	या	जो

कशीकाऽइव	प्रसूतवत्सा नकुलीव	जनी हुई नकुली की न्याई
जङ्गहे	अत्यन्तम् आलिङ्गति	अत्यन्त चिमट जाती है
ददाति	ददाति	देती है
मह्यम्	मह्यम्	मेरे लिये
यादुरी	बहुनिषेकयुक्ता (यादुरित्युदकनाम निघं०१।१२)	बहुत निषेकवाली
याशूनाम्	भोगानाम् (सा०भा०)	भोगों के
भोज्या	भोगयोग्या	भोग के योग्य
शता	शतानि	सैंकड़ों को

संस्कृतार्थः।

या भोगयोग्या (मम पत्नी) सम्यक् परितोषिता सती सूतवत्सा नकुलीव (माम्) अत्यन्तमालिङ्गति,(सा) बहुनिषेक युक्ता मह्यं भोगानां शतानि ददाति ॥ ६ ॥

भावार्थः ।

जो भोग के योग्य चारों ओर से खूब ग्रहण की हुई (मेरी पत्नी) जनी हुई नकुली की न्याईं अत्यन्त चिमटती है, वह बहुत निषेक वाली मुझे सैंकड़ों भोगों को देती है ॥ ६ ॥

जायापतीदेवते, अनुष्टुप्छन्दः ।८।८।८।८

उपोपमेपरामृश मामेदभ्राणि मन्यथाः । सर्वाहमस्मिरोमशा ग-न्धारीणामिवाविका । ७ ।

उप॑ऽउप	अतिसामीप्येन	अत्यन्त समीप से
मे	माम् (कर्मणिषष्ठी)	मुझ को
परा॑	परा+	–
मृश	परा+मृश,सम्यक् स्पृश	खूब स्पर्श करो

मा	मा	मत
मे	मम	मेरे
दभ्राणि	अल्पानि	अल्प
मन्यथाः	मन्यस्व	समझो
सर्वा	सर्वस्थानेषु	सब स्थानों में
अहम्	अहम्	मैं
अस्मि	अस्मि	हूं
रोमशा	रोमयुक्ता	रोम वाली
गन्धारीणामिव	गन्धारसम्बन्धिनीव	जैसे गंधार की
अविका	मेषी	भेड

संस्कृतार्थः।

(हेपते!) (त्वम्) माम् अतिसामीप्येन सम्यक स्पृश,

मम अल्पानि (रोमाणि) न मन्यस्व, (यतः) अहं गन्धारसम्बन्धिनी मेषीव सर्वस्थानेषु रोमशाऽस्मि ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

(हे पति !) आप मुझ को अत्यन्त समीप से स्पर्श करो मेरे अल्प (रोम) न समझो (क्योंकि) मैं गंधार की भेड़ की न्याईं सब स्थानों में रोम वाली हूं ॥ ७ ॥

इतिषड्विंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ० मं० १ सू० १२७

अग्निर्देवता, दिवोदासपुत्रः परुच्छेप ऋषिः ।

विनियोग :-

१ । दशरात्रस्य षष्ठेऽहनि प्रातःसवने प्रस्थितयाज्यानां पुरस्ताद् अन्याऋचःकृत्वा प्राकृताभिश्च सह षट्स्व्यं तत्राग्नीध्रस्यैषा प्रथमा (आ० सू० ८।१।२)

शेषाणां लैङ्गिकः ।

सूक्त का भाषार्थ ।

मैं जानता हूं कि अग्नि देवताओं के बुलाने वाले हैं, दानशील और धनवान हैं, बल के पुत्र हैं, जीवमात्र के जानने वाले हैं, ऋषि की न्याई जीवमात्र के जानने वाले हैं, जो देव देवताओं पर अत्यन्त कृपा करते हुए शुभ यज्ञ के प्रवर्तक होकर घी से उठी हुई ज्वाला की अपनी ज्वाला द्वारा कामना करते हैं हमारे होमे हुए घी की (कामना करते हैं) ।१। हे विप्र! आप जो सबसे अधिक पूजनीय, और अङ्गिरा-वंशियों के बड़े हो, ऐसे आपको हम यजमान मंत्रों द्वारा बुलाते हैं, हे तेज वाले! ऋषियों के देखे हुए मंत्रों से आपको (बुलाते हैं) जो आप ज्वाला रूप केशों वाले, कामनाओं के पूर्ण करने वाले, मनुष्यों के लिये देवताओं के बुलाने वाले और आकाश की न्याई व्यापक हो, ऐसे आप को ये प्रजाएँ अत्यंत सावधानी से धारण करें, प्रेरणा के लिये प्रजाएँ आपको धारण करें ॥२॥ तेज युक्त उत्कट बल से चमकते हुए सचमुच वही अग्नि द्रोह करने वालों के नाशक हैं, कुल्हाड़े की न्याई द्रोह करने वालों के नाशक हैं, जिन के स्पर्श से दृढ़ और स्थिर भी वृक्षों की न्याई छिन्नभिन्न होजाता है, जो (अग्नि) सब को जीतते हुए डटे रहते हैं (और

शत्रु को) पीठ नहीं दिखाते, धनुर्धारी योधा की न्याईं (डटे रहते हैं) पीठ नहीं दिखाते।३। इस यथार्थ जानने वाले (यजमान) के दृढ़ (शत्रु) भी अनुकूल हो जाते हैं जो रक्षा के लिये खूब प्रदीप्त काष्ठों से हवि देता है, (जो) रक्षा के लिये अग्नि को हवि देता है, जो अग्नि अपनी ज्वाला से बहुत पदार्थों में घुस कर उनको वृक्षों की न्याईं फाट डालते हैं, (और) कठिन अन्नों को भी बल से पृथक् परमाणु वाला कर देते हैं, कठिन (पदार्थों को भी) बल से (पृथक् परमाणु वाला करदेते हैं) ॥ ४ ॥ हम हवि के अन्न को इस अग्नि में चारों ओर से डालते हैं, जो रात्रि में दिन से भी अधिक अच्छे दिखाई देते हैं, प्राणियों को दिन से भी अधिक अच्छे दिखाई देते हैं, जैसा पुत्र के लिये पिता दृढ़ शरण पकड़ने योग्य है वैसे अग्नि का जीवन (हमारे लिये दृढ़ शरण पकड़ने योग्य है), ये कभी बूढ़े न होने वाली अग्नियें दिये हुए और न दिये हुए अन्न को भक्षण करती है, ये कभी न बूढ़े होने वालीं भक्षण करती हैं ।५। मरुद्गणों के से खोंखाट से जलने वाले अग्निदेव जहां मनुष्य खेती का काम करते हैं वहां और जो बंजर भूमि है वहां भी पूजनेयोग्य हैं, योग्यता के कारण यज्ञ के ध्वज रूप वह हमारी हवियों को ग्रहण करके खाते हैं, इसलिये सब मनुष्य इस आनन्दस्वरूप और आनन्ददायक अग्नि के मार्ग को पकड़ें, जैसे कल्याण के लिये (आजीविका का मार्ग पकड़ते हैं इस तरह अग्नि के) मार्ग को (पकड़ें) ।६। जब आकाश की ओर मुख उठाए हुए भृगुवंशियों ने कीर्तन और नमस्कार दोनों प्रकार से अग्नि की स्तुति की, मन्थन करते हुए और हवि देते हुए (स्तुति की,) जो अग्नि पवित्र हैं धनों के धारण करने वाले और स्वामी हैं, तब बुद्धिमान अग्नि ने तृप्तिपर्यन्त दिये हुए पदार्थों को स्वीकार किया, बुद्धिमान (अग्नि) ने पूर्ण-

रूप से स्वीकार किया। ७। हे अग्नि! आप जो सब प्रजाओं के नाथ हैं, सब के समान-(इष्टदेव) हैं और घरों के रक्षक हैं, ऐसे आप को हम धारण * करने के लिये बुलाते हैं, (देवताओं के पास हमारी) पुकार को ले जाने वाले सच्चे (आपको) हम धारण करने के लिये (बुलाते हैं,) मनुष्यों के अतिथि आपको (हम बुलाते हैं) पिता समान जिस आप के मुख से सचमुच ये मर्त्य और अमर्त्य बल को (प्राप्त करते हैं,) और देवताओं में हवियाँ और बल (पहुंचता है)।८। हे अग्नि! आप जो बल के कारण खूब दमन करने वाले और सबसे अधिक बलवान हो, आप देवताओं की सेवा के लिये उत्पन्न हुए हो, मानो देवताओं की सेवा के लिये धनरूप हो, आप का मद सब से अधिक बल वाला है और (आप की) बुद्धि सब से अधिक यश वाली है, इसीलिये मनुष्य आप की सेवा करते हैं, हे जरारहित! चाकरों की न्याईं (सेवा करते हैं) ।९। हे आर्य्यगण! आपकी (वाणी) पूज्य अग्नि के लिये उठे, जो बल से दमन करने वाले, प्रातःकाल में जागने वाले, और पशु देने वाले की न्याईं उपकारी हैं, (आप का) स्तोत्र अग्नि के लिये (उठे) क्योंकि सब जगह हवि लिये हुए यजमान इस अग्नि को लक्ष रख कर ही पुकारते हैं, जैसे बड़े आदमियों के सामने भाट स्तुति करता है, वा बड़ों के (आगे) पुकारने वाला दौड़ता चलता है। १०। हे अग्नि! देवताओं के साथ रहने वाले वह आप हमारे अत्यन्त समीप दीखते हुए हितबुद्धि से धनों को लाकर दें, हित बुद्धि से बड़े बड़े धनों को (लाकर दें), हे सब से अधिक बलवान! आप हम को महान करें, जिस से हम इस पृथिवी को खूब देखें और भोगें, हे धनवाले! आप जो बल के कारण भयंकर जैसे हो, ऐसे आप हमारे लिये बड़ी वीरता को मथन करें। ११।

---

* अर्थात आप सदा हमारे पास रह कर हमारी रक्षा करें और हम को कभी न छोड़ें, इसलिये बुलाते हैं।

अग्निर्देवता अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१३।८

अग्निं होतारं मन्ये दास्वन्तं वसुं सूनुं सहसो जातवेदसं विप्रं न जातवेदसम् । य ऊर्ध्वया स्वध्वरो देवो देवाच्या कृपा । घृतस्य विभ्राष्टिमनु वष्टि शोचिषा जुह्वानस्य सर्पिषः ॥१॥

अग्निम्	अग्निम्	अग्नि को
होतारम्	आह्वातारम्	बुलाने वाले को
मन्ये	जानामि	समझता हूं
दास्वन्तम्	दानशीलम्	देने वाले को
वसुम्	धनवन्तम् (भा०को०)	धन वाले को

सूनुम्	पुत्रम्	पुत्र को
सहसः	बलस्य	बल के
जातऽवेदसम्	जातानांवेदितारम्	उत्पन्नहुओं के जानने वाले को
विप्रम्	ऋषिम्	ऋषि को
न	इव	जैसे
जातऽवेदसम्	जातप्रज्ञम्	जीवमात्र के जानने वाले को
यः	यः	जो
ऊर्ध्वया	उत्कृष्टया	महान से
सुऽअध्वरः	शोभनयज्ञस्यप्रवर्तकः	सुन्दर यज्ञ का प्रवर्तक
देवः	देवः	देव

देवाच्या	देवान्प्रतिगच्छन्त्या (भञ्जूगतौ)	देवताओं की ओर जाने वाली से
कृपा	कृपया (सुपामितिविभक्तेर्लुक्)	कृपा से
घृतस्य	घृतस्य	घी की
विऽभ्राष्टिम्	अर्चिषम्	लाट को
अनु	अनु-(सृत्य)	अनुसरण करके
वष्टि	कामयते	कामना करता है
शोचिषा	ज्वालया	ज्वाला से
आऽजुह्वानस्य	समन्ताद्हूयमानस्य	चारों ओर से होमे जाते हुए के
सर्पिषः	विलीनस्य	पिघले हुए के

संस्कृतार्थः।

अहं जातानां वेदितारम्,ऋषिमिव जातप्रज्ञं,बल-

अग्ने	हे दीप्तिमन् !	हे दीप्ति वाले
मन्मऽभिः	मन्त्रैः	मंत्रों से
परिज्मानम्ऽइव	परितोगन्तारमिव	जैसे चारों ओर से चलने वाले को
द्याम्	द्याम्	द्यौ को
होतारम्	होतारम्	होता को
चर्षणीनाम्	मनुष्याणाम्	मनुष्यों के
शोचिःऽकेशम्	ज्वालारूपकेश-युक्तम्	ज्वाला रूपी बालों वाले को
वृषणम्	(कामानाम्) वर्षितारम्	(कामनाओं के) बरसानेवाले को
यम्	यम्	जिस को
इमाः	इमाः	ये

विशः	प्रजाः	प्रजाएँ
प्र	प्र +	–
अवन्तु	प्र+अवन्तु भृशं रक्षन्तु	खूब रक्षा करें
ऊतये	प्रेरणाय	प्रेरण के लिये
विशः	प्रजाः	प्रजाएँ

संस्कृतार्थः ।

हे मेधाविन् ! दीप्तिमन् (अग्ने) ! अङ्गिरोवंशीयानां ज्येष्ठं पूज्यतमम (च) त्वां यजमानाः (वयम्) मन्त्रैराह्वयामः, (वयं त्वाम्) ऋषिदृष्टैर्मन्त्रैः (आह्वयामः,)यं ज्वालारूपकेशयुक्तम्(कामानाम्) वर्षितारं मनुष्याणां होतारं द्यामिव परितोगन्तारम (च त्वाम्) इमाःप्रजाः प्रकर्षेण रक्षन्तु, (इमाः) प्रजाः प्रेरणाय रक्षन्तु ॥ २ ॥

भावार्थ ।

हे बुद्धिमान् और दीप्ति वाले (अग्नि)! अंगिरावंशियों के बड़े (और) सब से अधिक पूजनीय आप को हम यजमान मन्त्रों से बुलाते हैं, (हम आपको) ऋषियों के देखे हुए मन्त्रों से (बुलाते हैं,) जिस ज्वाला

स्य पुत्रम् (च) अग्निं धनवन्तं दानशीलम् (देवानाम्) आह्वातारम् (च) जानामि, यः शोभनस्य यज्ञस्य प्रवर्तको देवः देवान्प्रति गच्छन्त्या उत्कृष्टया कृपया सर्वतोहूयमानस्य विलीनस्य घृतस्य अर्चिषम् (निज–) ज्वालया अनु--(सृत्य) कामयते ॥ १ ॥

भावार्थः ।

में उत्पन्न हुओं के जानने वाले, ऋषि की न्याईं जीवमात्र के जानने वाले (और) बलके पुत्र अग्नि को धनवान दानशील (और) देवताओं के बुलाने वाला समझता हूं, जो सुन्दर यज्ञके प्रवर्तक (और) देवता, देवताओं की ओर जाने वाली महान कृपा से चारो ओर से होमे हुए पिघले हुए घी की लाट को अपनी ज्वाला द्वारा अनुसरण (करके) कामना करते हैं ॥१॥

अग्निर्देवता अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

यजिष्ठंत्वायजमानाहुवेम ज्ये-

ष्ठमङ्गिरसांविप्रसन्मभि विप्रेभिः

शुक्रमन्मभिः । परिज्मानमिवद्यां

होतारं॑चर्षणी॒नाम्। शो॒चिष्के॑शं॒वृष॑णं॒
यमि॒मा वि॒शः॑ प्राव॑न्तुज॒तये॒विशः॑॥२॥

यजि॑ष्ठम्	पूज्यतमम्	सब से अधिक पूजनीय को
त्वा॒	त्वाम्	तुझ को
यज॑मानाः	यजमानाः	यजमान
हु॒वे॒म	आह्वयामः (लडर्थे लिङ्)	हम बुलाते हैं
ज्ये॑ष्ठम्	ज्येष्ठम्	बड़े को
अङ्गि॑रसाम्	अङ्गिरोवंशीयानाम् (मध्ये)	अङ्गिरा वंशियों में
वि॒प्र॒	हे मेधाविन् !	हे बुद्धिमान
मन्म॑ऽभिः	मन्त्रैः	मन्त्रों से
वि॒प्रे॑भिः	ऋषिदृष्टैः	ऋषियोंके देखे हुओं से

शुक्र	हे दीप्तिमन्!	हे दीप्ति वाले
मन्मऽभिः	मन्त्रैः	मंत्रों से
परिज्मानम्ऽइव	परितोगन्तारमिव	जैसे चारों ओर से चलने वाले को
द्याम्	द्याम्	द्यौ को
होतारम्	होतारम्	होता को
चर्षणीनाम्	मनुष्याणाम्	मनुष्यों के
शोचिःऽकेशम्	ज्वालारूपकेशयुक्तम्	ज्वाला रूपी बालों वाले को
वृषणम्	(कामानाम्) वर्षितारम्	(कामनाओं के) बरसानेवाले को
यम्	यम्	जिस को
इमाः	इमाः	ये

विशः	प्रजाः	प्रजाएँ
प्र	प्र+	–
अवन्तु	प्र+अवन्तु भृशं रक्षन्तु	खूब रक्षा करें
ऊतये	प्रेरणाय	प्रेरण के लिये
विशः	प्रजाः	प्रजाएँ

संस्कृतार्थः ।

हे मेधाविन् ! दीप्तिमन् (अग्ने) ! अङ्गिरोवंशीयानां ज्येष्ठं पूज्यतमम् (च) त्वां यजमानाः (वयम्) मन्त्रैराह्वयामः, (वयं त्वाम्) ऋषिदृष्टैर्मन्त्रैः (आह्वयामः,)यं ज्वालारूपकेशयुक्तम्(कामानाम्) वर्षितारं मनुष्याणां होतारं द्यामिव परितोगन्तारम् (च त्वाम्) इमाःप्रजाः प्रकर्षेण रक्षन्तु, (इमाः) प्रजाः प्रेरणाय रक्षन्तु ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

हे बुद्धिमान् और दीप्ति वाले (अग्नि)! अंगिरावंशियों के बड़े (और) सब से अधिक पूजनीय आप को हम यजमान मन्त्रों से बुलाते हैं, (हम आपको) ऋषियों के देखे हुए मन्त्रों से (बुलाते हैं,) जिस ज्वाला

रूपी बालों वाले, (कामनाओंके) बरसाने वाले, मनुष्यों के होता (और) आकाश की न्याई चारों ओर जाने वाले (आप)को ये प्रजाएँ खूब रक्षा से धारण करें (ये)प्रजाएँ प्रेरणाके लिये (खूब रक्षासे धारण करें)।२।

अग्निर्देवता अत्यष्टिश्छन्दः।१२।११।८।८।८।१२।८

सह्रिपुरूचिदोजसाविरुक्मता दीद्यानोभवतिद्रुहन्तरः परशुर्नद्रुहन्तरः। वीळुचिद्यस्यसमृतौ श्रुवद्वनेवयत्स्थिरम्। निष्षहमाणोयमते नायते धन्वासहानायते॥ ३ ॥

सः	सः	वह
ह्रि	एव	ही

पुरु	बहु	बहुत
चित्	खलु	सच मुच
ओजसा	बलेन	बल से
विरुक्मता	विरोचमानेन	चमकते हुए से
दीद्यानः	ज्वलन्	दहकता हुआ
भवति	भवति	होता है
द्रुहम्ऽतरः	द्रोहंकुर्वतां नाशयिता (सा० भा०)	द्रोह करने वालों के नाश करने वाला
परशुः	कठारः	कुल्हाड़ा
न	इव	की न्याईं
द्रुहम्ऽतरः	द्रोहंकर्वतां नाशयिता	द्रोह करने वालों के नाशकरनेवाला
वीळु	दृढम्	दृढ़

चित्	अपि	भी
यस्य	यस्य	जिस के,
सम्ऽऋतौ	सङ्गतौ	संगति में
श्रुवत्	शीर्येत (सा० मा०)	छिन्न भिन्न हो जावे
वनाऽइव	वृक्षाणीव (शेलोपः)	वृक्षों की न्याईं
यत्	यत्	जो
स्थिरम्	स्थिरम्	स्थिर
निःऽसहमानः	निश्शेषेणाभिभवन्	सब को जीतता हुआ
यमते	स्थिराभवति	डट जाता है
न	न	नहीं
अयते	पलायते (उपसर्गलोपः)	पीठ दिखाता है

धन्वऽसहा	धनुषासहतेऽभिव- तीतिधन्वसहा धानुष्को योधा	धनुर्धारी योधा
न	न	नहीं
ऋयते	पलायते	पीठ दिखाता है

संस्कृतार्थः ।

स एव खलु (अग्निः) बहु रोचमानेन बलेन ज्वलन् (सन्) द्रोहं कुर्वतां नाशको भवति, कुठार इव द्रोहं कुर्वतां नाशकः (भवति,) यस्य संस्पर्शे दृढमपि यत् स्थिरम् (तदपि) वृक्षाणीव शीर्येत, स निश्शेषेणाऽभिभवन् (सन्) स्थिरीभवति, न (च) पलायते, धानुष्को योधा (इव) न पलायते ॥३॥

भाषार्थः ।

सच मुच बहुत प्रदीप्त बल से दहकते हुए वही (अग्नि) द्रोह करने वालों के नाशक हैं, कुल्हाडे का न्याईं द्रोह करने वालों के नाशक (हैं,) जिनके स्पर्श से जो दृढ़ और स्थिर भी (है वह भी) वृक्षों की न्याईं छिन्न भिन्न होजावे, जो सब को जीतते (हुए) डट जाते हैं (और) पीठ नहीं दिखाते, धनुष वाले योधा का (न्याईं) पीठ नहीं दिखाते ॥ ३ ॥

द्रुः	अनु+द्रुः, अनुकूलानि भवन्ति (आ०को०)	अनुकूल होजाते हैं
यथा	यथार्थम्	यथार्थ
विदे	जानते	जानने वाले के लिये
तेजिष्ठाभिः	अतिप्रदीप्तैः	अत्यन्त प्रदीप्तों से
अरणिऽभिः	यज्ञीयकाष्ठैः	यज्ञकेयोग्य काष्ठों से
दाष्टि	हविर्ददाति (आ० को०)	हवि देता है
अवसे	रक्षायै	रक्षा के लिये
अग्नये	अग्नये	अग्नि के लिये
दाष्टि	हविर्ददाति	हवि देता है
अवसे	रक्षायै	रक्षा के लिये
प्र	प्र+	–

यः	यः	जो
पुरूणि	वहूनि	वहुतों को
गाहते	प्र+गाहते अत्यन्तं प्रविशति	अत्यन्त घुसता है
तक्षत्	खण्डयति	टुकड़े २ करता है
वनाऽइव	वृक्षाणीव	वृक्षों की न्याई
शोचिषा	ज्वालया	ज्वाला से
स्थिरा	कठिनानि (शेर्लोपः)	कठिनों को
चित्	अपि	भी
अन्ना	अन्नानि (,,)	अन्नों कों
नि	नि+	–
रिणाति	नि+रिणाति, पृथक्करोति	अलग २ करता है

ओजसा	बलेन	बल से
नि	नि +	–
स्थिराणि	कठिनानि	कठिनों को
चित्	अपि	भी
ओजसा	बलेन	बल से

संस्कृतार्थः।

अस्मै यथार्थं ज्ञानिने दृढान्यपि अनुकूलानि भवन्ति, योरक्षणाय अत्यन्तं प्रदीप्तैर्यज्ञीयकाष्ठैर्हविर्ददाति, (यः) अग्नये रक्षायै हविर्ददाति, यः (अग्निः) बहूनि (वस्तूनि) अत्यन्तं प्रविशति, ज्वालया वनानीव (च) खण्डयति, स्थिराण्यपि अन्नानि बलेन अत्यन्तं वियोजयति, बलेन स्थिराण्यपि अत्यन्तम् (वियोजयति) ॥ ४ ॥

भावार्थः।

इस यथार्थ जाननेवाले के लिये दृढ़ भी वश में होजाते हैं,जो सहायता के लिये अत्यन्त प्रदीप्त यज्ञ-

के काष्ठों से हवि देता है,(जो) अग्नि के लिये रक्षा के निमित्त हवि देता है, जो (अग्नि) बहुत(पदार्थोंमें) अत्यन्त घुसकर उनको ऐसे काट डालते हैं जैसे ज्वाला से वृक्षों को, (जो) कठिन अन्नों को भी बल से अलग अलग २ कर देते हैं (जो) कठिनों को भी बल से (अलग अलग कर देते) हैं ॥ ४ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः॥१२।१२।८।८।८।१२।८

तमस्यपृक्षमुपरासुधीमहि नक्तं यःसुदर्शतरोदिवातराद प्रायुषेदिवातरात्। आदस्यायुर्ग्रभणावद् वीळु शर्म्मनसूनवे । भक्तमभक्तमवोव्यन्तोअजरा अग्नयोव्यन्तोअजराः ॥५॥

तम	तम्	उस को

अस्य	अस्मै (चतुर्थ्यर्थे षष्ठी)	इस के लिये
पृक्षम्	अन्नम् (निघं० २।७)	अन्न को
उपरासु	दिक्षु (निघं० १।८)	दिशाओं में
धीमहि	धारयामः	हम धारणकरते हैं
नक्तम्	रात्रौ	रात्रि में
यः	यः	जो
सदृशऽतरः	अधिकंसुदर्शनीयः	अधिक सुदर्शनीय
दिवाऽतरात्	दिनादपि	दिन से भी
अप्रऽआयुषे	प्रगतमायुर्यस्याऽसौ प्रायुः,नप्रायुरप्रायुस्तस्मै प्राणिजातायेत्यर्थः	प्राणियों के लिये।

दिवाऽतरात्	दिनादपि	दिन से भी
आत्	अपि च (आ०को०)	और
अस्य	अस्य	इस का
आयुः	जीवनम्	जीवन
ग्रभणाऽवत्	अवलम्बनयोग्यम्	सहारा पकड़ने योग्य
वीळु	दृढम्	दृढ़
शर्म	शरणम्	शरण
न	इव	की न्याईं
सूनवे	पुत्राय	पुत्र के लिये
भक्तम्	अर्पितम्	दिये हुए को
अभक्तम्	अनर्पितम्	न दिये हुए को

अवः	अन्नम् (निघं० २।७)	अन्न को
व्यन्तः	भक्षयन्तः (वीखादने)	भक्षण करते हुए
अजराः	जरारहिताः	बुढापे से रहित
अग्नयः	अग्नयः	अग्नियाँ
व्यन्तः	भक्षयन्तः	भक्षण करते हुए
अजराः	जरारहिताः	बुढापे से रहित

संस्कृतार्थः।

(वयम्) अस्मै (अग्नये) तत् (प्रसिद्धं हविर्लक्षणम्) अन्नम् (सर्वासु) दिक्षुधारयामः,यः (अग्निः) दिनादपि रात्रौ अधिकं सुदर्शनीयः (अस्ति,) प्राणिजाताय दिनादपि (अधिकं सुदर्शनीयोऽस्ति), अपिच अस्य जीवनं 'पुत्राय(पितुः)दृढंशरणमिव'(अस्माभिः) अवलम्बनीयम्, जरारहिताः (एते) अग्नयः अर्पितम् अनर्पितम् (च) अन्नं भक्षयन्तः (वर्तन्ते), (एते) जरा रहिताः भक्षयन्तः (वर्तन्ते)॥ ५ ॥

भाषार्थः।

हम इस (अग्नि) के लिये उस (प्रसिद्ध हविके) अन्नको (सब) दिशाओं में धारण करते हैं, जो (अग्नि) रात्रि में दिनसे भी अधिक दर्शनीय (हैं,) प्राणियों के लिये दिनसे भी (अधिक दर्शनीय हैं) और इसका जीवन (हमारे लिये) सहारा पकड़ने योग्य (है) जैसे पुत्रके लिये (पिताकी) दृढ़ शरण, जरासे रहित (ये) अग्नियाँ दिये हुए (और) न दिये हुए अन्नको खाती (रहती हैं) जरा से रहित ये खाती (रहती हैं) ॥५॥

अग्निर्देवता, अतिधृतिश्छन्दः। १२।१२।७।८।८।१२।७।७

स हि शर्धो न मारुतं तुविष्वणिरप्नस्वतीषूर्वरास्विष्टनि रार्तनास्विष्टनिः। आदद्धव्यान्याददिर्यज्ञस्य केतुरर्हणा। अध स्मास्य हर्षतो हृषीवतो विश्वे जुषन्त पन्थां नरः शुभे न पन्थाम् ॥ ६ ॥

सः	सः	वह
हि	खलु	सच मुच
शर्धः	गणः	गण
न	इव	की न्याईं
मारुतम्	मरुत्सम्बन्धी	मरुत संबंधी
तुविऽस्वनिः	प्रभूतशब्दः	बहुत शब्द करने वाला
अप्नस्वतीषु	कर्मयुक्तासु (अप्न इति कर्मनाम निघं०२।१)	कर्म वालियों में
उर्वरासु	शस्यभूमिषु	खेती की भूमियों में
इष्टनिः	यष्टव्यः (यजेरौणादिकोनिक्-प्रत्ययस्तुगागमश्च)	पूजा करने योग्य
आर्तनासु	अनुर्वरासुभूमिषु	बंजर भूमियों में

इष्टनिः	यष्टव्यः	पूजा करने योग्य
आदत्	भक्षयति (लडर्थे लङ्)	खाता है
हव्यानि	हव्यानि	हवियों को
आऽददिः	ग्रहीता	लेने वाला
यज्ञस्य	यज्ञस्य	यज्ञ का
केतुः	ध्वजरूपः	ध्वजा रूप
अर्हणा	योग्यतया	योग्यता से
अध	अतः	इस लिये
स्म	(पूरणः)	—
अस्य	अस्य	इस के
हर्षतः	हर्षयतः (णलोप	हर्ष देने वाले के

हृषीवतः	हर्षयुक्तस्य (सा० भा०)	हर्षित के
विश्वे	सर्वे	सब
जुषन्त	सेवन्ताम् (लोडर्थे लङ्यडभावः)	सेवन करें
पन्थाम्	मार्गम्	रस्ते को
नरः	मनुष्याः	मनुष्य
शुभे	शुभाऽर्थम्	शुभ के लिये
न	इव	जैसे
पन्थाम्	मार्गम्	रस्ते को

संस्कृतार्थः ।

मारुतोगण इव प्रभूतध्वनियुक्तः स खलु कर्म्मयुक्तासु शस्यभूमिषु यष्टव्यः,अनुर्वरासु[च]यष्टव्यः (अस्ति,) योग्यतया यज्ञस्य प्रज्ञापकः (सः) हव्यानि गृहीत्वा भक्षयति,अतो हृष्यतो हर्षयतः(च) अस्यमार्गं सर्वेजनाःसेवन्ताम्, यथा शुभार्थं(मार्गम् सेवन्ते तथाऽस्य) मार्गम् (सेवन्ताम्) ॥ ६ ॥

भाषार्थः॥

सच मुच मरुद्गण की न्याईं बहुत ध्वनिसे युक्त वह कर्म्म वाले खेतों में पूजने योग्य,(और) बंजर भूमियों में पूजने योग्य (हैं,) योग्यता के कारण यज्ञ के ध्वजरूप वह (हमारी) हवियों को ग्रहण करके खाते हैं, इसलिये (स्वय) हर्षित (और भक्तको)हर्ष देने वाले इस (अग्नि) के मार्ग को सब मनुष्य सेवन करें, जैसे शुभके लिये (मार्ग को सेवन करते हैं)वैसे इसके मार्ग को (सेवन करें) ॥ ६ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः।१२।१२।८।७।८।१२।८

द्विताय॒दीं॑की॒स्तासो॑अ॒भिद्य॑वो न॒मस्य॑न्त॒उप॒वो॑च॑न्त॒भृग॑वो म॒थ्न॑न्तो॒दा॒शा॒भृग॑वः। अ॒ग्निरी॑शे॒वसू॑नां शु॒चि॒र्यो॑ध॒र्णि॑रे॒षाम्।प्रि॒याँ अ॒पि॒धीँ॑र्वनिषी॒ष्टमे॑धि॒र आ॒वनि॑षी॒ष्टमे॑धि॒रः ॥७॥

द्विता	द्विधा (निघं० ४।२)	दो प्रकार
यत्	यदा (विभक्तेर्लुक्)	जब
ईम्	एनम्	इस को
कीस्तासः	कीर्तनं कुर्वन्तः	कीर्तन करते हुए
अभिऽद्यवः	द्युलोकाभिमुखाः	द्युलोक की ओर मुख वाले
नमस्यन्तः	नमस्कुर्वन्तः	नमस्कार करते हुए
उपवोचन्त	उपेत्य स्तुतवन्तः	समीप जाकर स्तुति की
भृगवः	भृगवः	भृगुवंशियों ने
मथ्नन्तः	मथ्नन्तः (मन्थलोडने, क्रैयादिकः)	मथन करते हुए
दाशा	(हविः) ददानाः (दाश्दाने, विभक्तेरात्वम्)	(हवि को) देते हुए

भृगवः	भृगवः	भृगुवंशी
अग्निः	अग्निः	अग्नि
ईशे	ईश्वरोऽस्ति ('लोपस्तः'-इतितलोपः)	स्वामी है
वसूनाम्	धनानाम्	धनों का
शुचिः	स्वच्छः	उज्ज्वल
यः	यः	जो
धर्णिः	धारयिता	धारण करने वाला
एषाम्	एषाम्	इन के
प्रियान्	प्रियान्	प्यारों को
अपिऽधीन्	तृप्तिपर्य्यन्तं दत्तान् (आ० को०)	तृप्तिपर्यंत दिये हुओं को

वनिषीष्ट	स्वीकृतवान्	स्वीकार किया
मेधिरः	मेधावान् (अस्त्यर्थे इरच्)	बुद्धिमान ने
आ	आ+	–
वनिषीष्ट	आ+वनिषीष्ट, पूर्णतया स्वीकृतवान्	पूर्णता से स्वीकार किया
मेधिरः	मेधावान्	बुद्धिमान ने

संस्कृतार्थः ।

यदा द्युलोकाभिमुखाः भृगवः कीर्तनं कुर्वन्तो नमस्कुर्वन्तः (च) एनम् (अग्निम्) उपेत्य द्विधास्तुतवन्तः, मन्थनं कुर्वन्तः हविर्ददामाः भृगवः (स्तुतवन्तः,) यः अग्निः शुचिः, एषांधनानां धारयिता, ईश्वरः (च) अस्ति (तदा) मेधावी (अग्निः) तृप्तिपर्य्यन्तं दत्तान् प्रियान् (पदार्थान्) स्वीकृतवान्, मेधावी (अग्निः) पूर्णतया स्वीकृतवान् ॥७॥

भावार्थः ।

जब आकाशकी ओर मुख किये हुए भृगुवंशियों

ने कीर्त्तन करते हुए (और) नमस्कार करते हुए इस (अग्नि) के पास जाकर दो प्रकार से,स्तुतिकी, मन्थन करते हुए(और) हवि देते हुए (स्तुति की,) जो अग्नि पवित्र,इन धनों के धारण करने वाले(और) स्वामी हैं, (तब) बुद्धिमान् (अग्नि)ने तृप्ति पर्य्यन्त दिये हुए (पदार्थों) को स्वीकार किया, बुद्धिमान (अग्नि) ने पूर्णता से स्वीकार किया ॥ ७ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।११।८।७।८।१२।८

विश्वासांत्वाविशांपतिंहवामहे सर्वासांसमानंदम्पतिंभुजे सत्यगिर्वाहसंभुजे । अतिथिंमानुषाणां पितुर्नयस्यासया । अमीचविश्वे अमृतासआवयो हव्यादेवेष्वावयः ॥ ८ ॥

विश्वासाम्	सर्वासाम्	सब के
त्वा	त्वाम्	तुझ को
विशाम्	प्रजानाम्	प्रजाओं के
पतिम्	स्वामिनम्	स्वामी को
हवामहे	आह्वयामः	हम बुलाते हैं
सर्वासाम्	सर्वासाम्	सब के
समानम्	समानम्	समान को
दम्ऽपतिम्	गृहस्य पालकम्	घर की रक्षा करने वाले को
भुजे	धारणार्थम् (आ० को०)	धारण करने के लिये
सत्यऽगिर्वाहसम्	सत्याऽऽवाहनस्य वोढारम्	सच्चे आवाहन के लेजाने वाले को
भुजे	धारणार्थम्	धारण करने के लिये

अतिथिम्	अतिथिम्	अतिथिको
मानुषाणाम्	मनुष्याणाम्	मनुष्यों के
पितुः	पितुः	पिता के
न	इव	की न्याईं
यस्य	यस्य	जिस के
आसया	मुखेन	मुख से
अमी०	अमी	ये
च	च	और
विश्वे	सर्वे	सब
अमृतासः	मरणरहिताः (असोऽसुगागमः)	मरण से रहित
आ	खलु	सच मुच

वयः	वलम्	वल को
हृव्या	हव्यानि (शेर्लोपः)	हविएँ
दे॒वेषु	देवेषु	देवताओं में
आ	च (भा० को०)	और
वयः	वलम्	वल

संस्कृतार्थः।

(हे अग्ने ! वयम्) सर्वासां प्रजानां स्वामिनं. *सर्वासां समानम् (इष्टदेवम्) गृहस्यपालकम् (च) त्वां* धारणार्थमाह्वयामः, सत्याऽऽवाहनस्य वोढारम् (त्वाम्) धारणार्थम् (आह्वयामः,) मनुष्याणामतिथिम् (त्वा-माह्वयामः) पितुरिव यस्य (तव) मुखेन अमी (मर्त्याः) सर्वे अमर्त्याः (च) वलं खलु (प्राप्नुवन्ति,) देवेषु ह-व्यानि वलं च (प्राप्नोति) ॥ ८ ॥

भापार्थः।

(हे अग्नि!) हम सब प्रजाओं के स्वामी, सब के समान (इष्टदेव) (और) घर के पालक आपको

धारण करने के लिये बुलाते हैं, सच्चे आवाहन के ले जाने वाले (आप)को धारण करने के लिये (बुलाते हैं) मनुष्यों के अतिथि(आप)को (बुलाते हैं) पिता की न्याईं जिस (आप) के मुख से ये मर्त्य (और) सब अमर्त्य बल को प्राप्त करते हैं [और] देवताओं में हवियाँ और बल (पहुंचता है) ॥ ९ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

त्वमग्नेसहसासहन्तमः शुष्मिन्तमोजायसेदेवतातये रयिर्नदेवतातये । शुष्मिन्तमोहितेमदो द्युम्निन्तमउतक्रतुः । अधस्मातेपरिचरन्त्यजर श्रुष्टीवानोनाजर ।९।

त्वम	त्वम्	तू

अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि!
सहसा	बलेन	बल से
सहन्ऽतमः	अतिशयेनाऽभि-भविता (सहेरौणादिकः कनिन्)	खूब दबानेवाला
शुष्मिन्ऽतमः	बलवत्तमः	सब से अधिक बल वाला
जायसे	प्रादुर्भवसि	प्रकट होते हो
देवऽतातये	देवान् सेवितुम् (भा० को०)	देवताओं की सेवा करने के लिये
रयिः	धनम्	धन
न	इव	की न्याईं
देवऽतातये	देवान् सेवितुम्	देवताओं की सेवा करने के लिये

शुष्मिन्ऽतमः	बलवत्तमः	सब से अधिक बल वाला
हि	खलु	सच मुच
ते	तव	तेरा
मदः	मदः	मद
द्युम्निन्ऽतमः	यशस्वितमम्	सबसे अधिक यश वाला
उत	च	और
क्रतुः	ज्ञानम्	ज्ञान
अध	अतः	इस लिये
स्म	(पूरणः)	–
ते	त्वाम् (द्वितीयार्थे षष्ठी)	तुझ को
परि	परि+	–

चरन्ति	परि+चरन्ति	सेवा करते हैं
अजर	हे जरारहित !	हे बुढ़ापे से रहित
श्रुष्टीऽवानः	शीघ्रतायुक्ताः (श्रुष्टीतिक्षिप्रनाम निघं० ४।३ तस्मात् 'छन्दसीवनिपौ' इतिवनिप् प्रत्ययः)	शीघ्रकारी
न	इव	की न्याईं
अजर	हे जरारहित !	हे बुढ़ापे से रहित

संस्कृतार्थः।

हे अग्ने ! बलेनाऽत्यन्तमभिभविता बलवत्तमः [च] त्वं देवान् सेवितुं प्रादुर्भवसि, धनमिव देवान सेवितम् [प्रादुर्भवसि] तव मदो बलवत्तमो ज्ञानं च यशस्वितमं खलु, अतो हे अजर ! [मनुष्याः] त्वां परिचरन्ति, हे जरारहित ! शीघ्रतायुक्ताः [परिचारकाः] इव (परिचरन्ति) ॥ ९ ॥

भाषार्थः।

हे अग्नि ! बल के कारण खूब दबाने वाले

(और) सब से अधिक बलवान आप देवताओं की सेवा के लिये उत्पन्न होते हो, धन की न्याईं देवताओं की सेवा के लिये (उत्पन्न होते हो) सचमुच आपका मद सब से अधिक बलवाला (और) ज्ञान सब से अधिक यशवाला (है,) इसलिये हे अजर! मनुष्य आपकी सेवा करते हैं, हे जरारहित! शीघ्रकारी (नौकरों) की न्याईं (सेवा करते हैं) ॥ ९ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।११।११।८।७।८।११।७

प्रवो॒मह्रे॒ सह॑सा॒सह॑स्वत उष॒र्बु॑धे॑पशु॒षे नाग्नये॒ स्तोमो॑ बभूत्व॒ग्नये॑। प्रति॒यदीं॑ ह॒विष्मा॒न् विश्वा॑सु॒ क्षासु॒ जोगु॑वे । अग्रे॑ रे॒भो न ज॑रत ऋ॒षूणां॒ जूर्णि॒र्होत॑ ऋ॒षूणा॑म् ॥ १० ॥

प्र	प्र-(भवतु) उद्-गच्छतु	उठे
वः	युष्माकम्	आप का
मंहे	पूज्याय (क्विप्)	पूज्य के लिये
सहसा	बलेन	बल से
सहस्वते	अभिभावयित्रे	जीतने वाले के लिये
उषःऽबुधे	उषः काले प्रबुद्धाय	उषा काल में जागे हुएके लिये
पशुऽसे	पशुप्रदात्रे (आ० को०)	पशु देने वाले के लिये
न	इव	की न्याईं
अग्नये	अग्नये	अग्नि के लिये
स्तोमः	स्तोत्रम्	स्तोत्र .
बभूतु	प्र+बभूतु,उद्गच्छतु	उठे

अग्नये	अग्नये	अग्नि के लिये
प्रति	अभिलक्ष्य	लक्ष रख कर
यत्	यत्	जो
ईम्	एनम्	इस को
हविष्मान्	हविर्युक्तः	हवि से युक्त
विश्वासु	सर्वासु	सब में
क्षासु	भूमिभागेषु (क्षेति भूमि नाम निघं० १।१)	भूमि के भागों में
जोगुवे	अत्यन्तं शब्दयति (गुङ शब्दे यङ्लुगन्तादस्माल्लडर्थे लिट्यु घडादेशः)	खूब पुकारता है
अग्रे	अग्रे	आगे
रेभः	वन्दी (सा० भा०)	भाट

	यथा	जैसे
ते	स्तौति (निघं०३।१४)	स्तुति करता है
णाम्	महताम् (आ०को०)	बड़ों के
ण:	धावन्	दौड़ता हुआ
ता	आह्वाता	पुकारने वाला
षूणाम्	महताम्	बड़ों के

संस्कृतार्थः ।

(हे आर्याः !) युष्मदीया (वाणी) पूज्याय, बलेना-
भावयित्रे, उषःकाले प्रवृद्धाय, पशुप्रदात्र इव
कारिणेच) अग्नये उद्गच्छतु, स्तोत्रम् अग्नये
गच्छतु, यदेनमभिलक्ष्य सर्वेषु भूमिभागेषु हवि-
: (यजमानः) अत्यन्तं शब्दयति यथा मह-
मग्रे वन्दीस्तौति (यथा) महताम् (अग्रे) आह्वाता
वन् (गच्छति) ॥ १० ॥

भावार्थः ।

(हे आर्य्य लोगो!) आपकी (वाणी) पूज्य; बल से

जीतने वाले, प्रातःकाल में जागने वाले (और) पशु देने वाले की न्याईं (उपकारी) अग्नि के लिये उठे, स्तोत्र अग्नि के लिये उठे, क्योंकि सब स्थानों में इस (अग्नि) को लक्ष रख कर हवि से युक्त (यजमान) खूब पुकारता है, जैसे बड़े आदमियों के आगे भाट स्तुति करता है (जसे) बड़ों के (आगे) पुकारने वाला दौड़ता हुआ [चलता है] ॥ १० ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः।१२।१२।८।८।८।१२।८

सनोनेदिष्ठंदद्दृशानआभराग्ने देवेभिःसचनाःसुचेतुना महोरायः सुचेतुना। महिशविष्ठनस्कृधि संचक्षेभुजेअस्यै। महिस्तोतृभ्योमघवन्त्सुवीर्यंमथीरुग्रोनशवसा ॥ ११ ॥

सः	सः	वह
नः	अस्माकम्	हमारे
नेदिष्ठम्	अतिसमीपम्	अत्यन्त समीप
ददृशानः	दृश्यमानः	दीखता हुआ
आ	आ+	–
भर	आ+भर, आहर (हस्य भत्वम्)	लाओ
अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि
देवेभिः	देवैः	देवताओं के साथ
सऽचनाः	सहचरः	सहचारी
सुऽचेतुना	हितबुद्ध्या (औणादिकउप्रत्ययः)	हित बुद्धि से
महः	महान्ति	महानों को

राय:	धनानि	धनों को
सुऽचेतुना	हितबुद्धया	हितबुद्धि से
महि	महद्यथास्या· स्तथा (क्रियाविशेषणम्)	महान
शविष्ठ	हे बलवत्तम!	हे सब से अधि बल वाले
नः	अस्मान्	हम को
कृधि	कुरु	करो
सम्ऽचक्षे	सम्यग् द्रष्टुम् (चष्टिरीक्षण कर्मा निघं॰ ३।११)	खूब देखने के निमित्त
भुजे	भोगाय	भोग के लिये
अस्यै	अस्याः (षष्ठ्यर्थे चतुर्थी)	इस के
महि	महत्	महान को

स्तोतृऽभ्यः	स्तोतृभ्यः	स्तोताओं के लिये
मघवन्	हे धनवन्!	हे धन वाले
सुऽवीर्यम्	शौर्यम्	वीरता को
मथीः	मथ (लोडर्थेलङ्यडभावः)	मथो
उग्रः	भयङ्करः	भयानक
न	इव	की न्याईं
शवसा	बलेन	बल से

संस्कृतार्थः।

हे अग्ने ! देवेभिः सहचरणशीलः सः [त्वम्] अस्मदतिसमीपे दृश्यमानः (सन्) हितबुद्ध्या (धनानि)आहर, हितबुद्ध्या महान्ति धनानि(आहार) हे बलवत्तम ! अस्मानस्यै [पृथिव्यै] सम्यग्द्रष्टुं भोगाय (च) महतःकुरु, हे धनवन् ! बलेन भयङ्करः इव (त्वम्) स्तोतृभ्यो महच्छौर्यं मथ ॥ ११ ॥

भाषार्थः ।

हे अग्नि! देवताओंके साथ रहने वाले वह (आप) हमारे अत्यन्त समीप दीखते हुए हित बुद्धि से (धनों को) लाकर दें, हित बुद्धि से बड़े २ धनों को (लाकर दें,)हे सबसे अधिक बल वाले! इस(पृथिवी) को खूब देखने के लिये (और) भोगने के लिये हम को (आप) महान करें, हे धनवाले! बल से भयंकर की न्याईं आप स्तुति करने वालों के लिये बड़ी वीरता को मथें ॥ ११ ॥

इति सप्तविंशत्युत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ०मं०१ सू०१२८।

अग्निर्देवता परुच्छेपऋषिः।

विनियोगः-

१-८। एतत्सूक्तं पृष्ठयस्य षष्ठेऽहनि आज्यशस्त्रत्वेन विनियुक्तम् (आ० ८।१।९)

सूक्त का भाषार्थ।

यह अत्यन्त पूज्य अग्नि भक्तोंके व्रत को निभानेके लिये मनुष्य-द्वारा अरणि से उत्पन्न हुए हैं, अपने व्रत को निभाने के लिये उत्पन्न हुए हैं, जो इनकी मित्रता चाहता है उसके लिये इन के चारों ओर कान हैं, जो यश की इच्छा करता है उस के लिये यह धनरूप हैं, यह अबाधित होता बन कर पूजा के स्थान में बैठते हैं, चारों ओर से घिरे हुए पूजा के स्थान में बैठते हैं ।१। यज्ञ के साधक उस अग्नि की हम दैवी नियम के अनुकूल चलने से, हवियों से और नमस्कारों से टहल करते हैं, हवि लेकर देवताओं की सेवा करने से हम अग्नि की टहल करते हैं,यह उनकी कैसी अद्भुत कृपा है कि हमारी हवियों की भेट उन की जरावस्था को रोकती है, इसी देव को मातरिश्वा वायु दूर से मनु के लिये लाए थे, दूर से मनु के लिये चमकाया था* ।२। अग्निरूप वीर्यवान बैल बार बार निगलता हुआ और धाड़ता हुआ अपनी गति से पृथिवी के सब स्थानों में फैल जाता है, वीर्य्य को धारण

* वायु द्वारा वृक्षों की परस्पर रगड़ से पर्वतों और वनों में अग्नि को देख सब से पहले मनु अग्नि को ग्राम में लाएथे, अगले मंत्र में स्पष्ट वन की अग्नि का वर्णन है।

करता हुआ और धाड़ता हुआ फैल जाता है, सौ नेत्रों से देखता हुआ वनों में दौड़ता हुआ नीचे मैदानों को और ऊंचे पर्वतों को अपना घर बनाता है । ३ । अत्यन्त बुद्धिमान घर घर के पुरोहित वह अग्निदेव कुटिलतारहित यज्ञ की ओर ध्यानसे दृष्टि करते हैं, वह बुद्धिसे यज्ञ की ओर दृष्टि करते हैं, जो उनसे प्रार्थना करता है उस को वह बुद्धि द्वारा सब जड़ चेतन का ज्ञान कराते हैं, इसीलिये यह घी खाने वाले अतिथि उत्पन्न हुए हैं, हवियों के लेजाने वाले बुद्धिमान उत्पन्न हुए हैं । ४। जब हम प्रेमपूर्वक यज्ञ करके खाने योग्य हवियों द्वारा अग्नि-का बल बढ़ाते हैं,जैसे प्रचण्ड वायु वनकी अग्निका बल बढ़ाते हैंऔर जैसे भोजन द्वारा भूखे का बल बढ़ाते हैं, तब वह सच मुच दान को प्रेरण करते हैं और धनों के बल द्वारा कुटिलता करने वाले के पाप-से हमारी रक्षा करते हैं, कुटिलता करने वाले के कुकर्म से और झूठे कलंक से हमारी रक्षा करतेहैं । ५। महान अग्निदेव जो विश्वरूप हैं और सबके स्वामी हैं,अपने दहिने हाथ में धनको लिये हुएहैं और परोपकारी की न्याईं मुक्त हस्त से छोड़ते हैं, यश,की कामना करने वाले की न्याईं खुले हाथों से छोड़ते हैं, सब प्रार्थना करने वालों के लिये देवताओं में हवि लेजाते हैं, सब शुभ कर्म करने वालों के लिये यथेच्छ धन देते हैं, वह उनके लिये धनके द्वारों को खोल-देते हैं । ६। अग्नि देव मनुष्यों की मंडली में जयशील राजा की न्याईं अत्यन्त सुखदायक होकर यज्ञों के लिये स्थापन किये गए हैं, यज्ञों में प्रजा के प्यारे राजाकी न्याईं स्थापन किये गए हैं, जो मनुष्य स्तुति के साथ देवताओं को हवि देते हैं अग्नि उन हवियों के

---

[१] जो यज्ञ लोक दिखाने के लिये वा किसी कुटिल मनोरथ से किया जाता है अग्नि उस की ओर दृष्टि नहीं करते, वह यज्ञ देवताओं को नहीं पहुंचता और निष्फल होता है।

स्वामी हैं,वह हमें वरुणके दण्ड से बचाएँगे, उस महान देव के दण्ड से बचाएँगे। ७। धन को धारण करने वाले, सबके ईश्वर, अत्यन्त चेत वाले, देवताओं के बुलाने वाले प्यारे अग्नि को मनुष्य पूजते हैं और उनके पास पहुंचे हैं, हवियों को लेजाने वाले के पास पहुंचे हैं, सबके जीवन रूप, सम्पूर्ण धनों के स्वामी,पूजनीय,बुद्धिमान, होता, और सुन्दर अग्नि को देवता भी रक्षा के लिये प्राप्त हुए हैं, मनोहर अग्नि को धन की कामना वाले देवताभी स्तुतियों-द्वारा प्राप्त हुए हैं ॥ ८ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

अयंजायतमनुषोधरीमणि होतायजिष्ठउशिजामनुव्रत मग्निः स्वमनुव्रतम् । विश्वश्रुष्टिःसखीयतेरयिरिवश्रवस्यते। अदब्धोहोता निषददिळस्पदे परिवीतइळस्पदे।१।

अयम्	अयम्	यह

जायत	अजायत (अडभावः)	उत्पन्न हुआ है
मनुषः	मनुष्यात् (मनेर्बाहुलकादुसिप्रत्ययः)	मनुष्य से
धर्मणि	धारके	धारणकरनेवाले में
होता	होता	होता
यजिष्ठः	पूज्यतमः	सबसे अधिक पूजने योग्य
उशिजाम्	भक्तानाम् (वशकान्तौ)	भ द
अनु	अनु	अनुकूल
व्रतम्	व्रतम्	नियम को
अग्निः	अग्निः	अग्नि
स्वम्	निजम्	अपने को

अनु	अनु	अनुकल
व्रतम्	व्रतम्	नियम को
विश्वऽश्रुष्टिः	सर्वत्र कर्णयुक्तः	सब ओर कानों वाला
सखिऽयते	सखित्वमिच्छते	मित्रता की इच्छा करते हुए के लिये
रयिःऽइव	धनमिव	धन की न्याई
श्रवस्यते	यशइच्छते	यश की इच्छा करते हुए के लिये
अदब्धः	अहिंसितः	न हिंसा किया हुआ
होता	होता	होता
नि	नि+	–
सदत्	नि+सदत्,निषीदति (लडर्थे लङच डभावः)	बैठता है
इळः	पूजायाः (क्विप्)	पूजा के
पदे	स्थाने	स्थान में

परिऽवीतः	परिगतः (वीगतौ)	घिरा हुआ
इळः	पूजायाः	पूजा के
पदे	स्थाने	स्थान में

संस्कृतार्थः।

अयं होता पूज्यतमः (चाऽग्निः) धारके (अरणिद्वये) भक्तानां व्रतानुकूलं मनुष्यादुत्पन्नोऽभूत्, निजव्रतानुकूलम् (उत्पन्नोऽभूत्) (अयम्) मित्रतां कामयमानाय सर्वत्रकर्णयुक्तः, यशःकामयमानाय (च) धनमिव (अस्ति) (अयम्) अहिंसितो होता पूजायाः स्थाने निषीदति, पूजायाःस्थाने परिवृतः (निषीदति) ॥ १ ॥

भापार्थः।

यह होता (और) अत्यन्त पूज्य (अग्नि) अरणियों में भक्तों के नियम के अनुकूल मनुष्य से (उत्पन्न हुए हैं) अपने नियम के अनुकूल (उत्पन्न हुए हैं) (यह) मित्रता की कामना करने वाले के लिये सब ओर कानों वाले (हैं) (और) यशकी कामना करने वाले के लिये धनकी न्याई (हैं) (यह) न पीड़ित होने

वाले होता (बनकर) पूजा के स्थान में बैठते हैं, चारों ओर से घिरे हुए पूजा के स्थान में (बैठते हैं) ॥ १ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२

तंयज्ञसाधमपिवातयामस्यृतस्य पथानमसाहविष्मता देवताताहविष्मता। सनऊर्जामपाभृत्ययाकृपानजूर्यति । यंमातरिश्वामनवे परावतोदेवंभाःपरावतः ।२।

तम्	तम्	उस को
यज्ञऽसाधम्	यज्ञस्य साधकम् (क्विप्)	यज्ञ के सिद्ध करने वाले को
अपि	अपि+	–

वातयामसि	अपि+वातयामसि उपेत्य शुश्रूषामहे (वातसेवने,चौरादिकः मसइकारागमः)	हम समीप से सेवा करते हैं
ऋतस्य	ऋतस्य	ऋत के
पथा	मार्गेण	मार्ग से
नमसा	नमस्कारेण	नमस्कार से
हविष्मता	हविर्युक्तेन	हवि वाली से
देवताता	देवानां परिचरणेन (विमकेरात्वम)	देवताओं की सेवा से
हविष्मता	हविर्युक्तेन	हवि वाली से
सः	सः	वह
नः	अस्माकम्	हमारे
ऊर्जाम्	(हवीरूपाणाम्) अन्नानाम्	(हवीरूप) अन्नों के

उपऽआभृति	उपाहरणे (उपाऽऽङ्पसृष्टाद् हरतेःक्तिन्,हस्य भत्वं सुपामिति सप्तम्यालुक्)	भेट करने में
अया	अनया (वर्णलोपश्छान्दसः)	इस से
कृपा	कृपया (सुपामितितृतीयायालुक्)	कृपा से
न	न	नहीं
जूर्यति	जीर्णो भवति	जीर्ण होता है
यम्	यम्	जिस को
मातरिश्वा	मातरिश्वा	मातरिश्वा
मनवे	मनवे	मनु के लिये
पराऽवतः	दूरात् (निघं०३२६)	दूर से
देवम्	देवम्	देव को

भा:०	भापितवान्	चमकाया
पराऽवतः	दूरात्	दूर से

संस्कृतार्थः ।

(वयम्) तं यज्ञसाधकम् (अग्निम्) ऋतस्य मार्गेण हविर्युक्तेन नमस्कारेण(च) उपेत्य शुश्रूषामहे, हविर्युक्तया देवानां सेवया (शुश्रूषामहे,) सोऽस्मदीयानाम्(हवीरूपाणाम्)अन्नानामुपहारे अनया कृपया जीर्णो न भवति, यंदेवं मातरिश्वा मनवे दूरात् (आहृतवान्) (मनवे) दूराद् भापितवान् ॥ २ ॥

भापार्थः ।

हम यज्ञके सिद्ध करने वाले उस (अग्नि) को ऋतके मार्ग से (और) हवि से युक्त नमस्कार से पास जाकर शुश्रूषा करते हैं, हवि को लेकर देवताओं की सेवा द्वारा (शुश्रूपा करते हैं,) वह हमारे (हविरूप) अन्नों की भेट देने पर इस (अद्भुत) कृपा से जीर्ण नहीं होते, जिस देव को मनु के लिये मातरिश्वा दूर से (लाए,) (मनु के लिये) दूर से चमकाया ॥ २ ॥

ऋ०सं० ७३-७४ अङ्कयोः शुद्धयशुद्धिपत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्
३२९६	१६	सुनो	सुनो
३३०१	१२	(देवः)	(देवैः)
३३०३	१६	(चतुर्थ्यै	(चतुर्थ्यर्थे
३३०९	३	एते	एते
३३११	१७	(पर्व	(पूर्व
३३१३	५	धौत्	धौत्
३३१७	८	यह	ये
३३१९	७	एनम्	एनम्
३३३०	५	(दस्यति	(दस्यति
३३३१	१४	न्त्य	न्त्यु
३३३२	१४	शुशु	शुशु
३३३८	१२	नम,	नम्,
३३४९	१५	मन	मनु
३३५४	१८	प्रकट	प्रकटै
३३५६	९	देवता ने	देवता
,,	१३	न	नु
३३५७	१६	विस्ता	विस्तौ
३३५८	१२	नाश	नाशन
३३६०	१५	पुर	पुर
३३६१	४	प्रति	प्रति
३३६३	७	रेय	रेयु
३३६४	१७	वता	वती
३३६५	२	युपो·	युपो·
३३६६	५	पूर्वे	पूर्वे
३३६७	१८	का	की
३३६८	१०	को	मदो·
३३६९	१२	पार	
३३७४	७	स्वरे	स्वरौ
,,	११	लङ)	लङ्)
३३७९	१०	रेवद्	रेवद्दु
,,	११	सूनते	सूनृते
,,	१२	यन्ता	यन्ती
३३८२	१०	युवतिः	युवतिः
,,	१२	जोड़ता	जोड़ती
३३८३	५	ननम्	मनम्
३३८४	१०	पितु	पितु
३३९०	२०	हाकर	होकर

अंक ७७-७८] [कार्तिक १९६९

ऋग्वेद संहिता

(वैदिकजीवनव्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद
टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर
व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलतानिवासी पं० शङ्करदत्तशास्त्री
की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने
सम्पादन किया।

लाहौर
पञ्जाब एकानोमीकल यन्त्रालय में मिस्टर लाला
सालमन के अधिकार से छपा।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २)
पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)
७८ अंकों का मूल्य १४॥)

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

एवेनसद्यःपर्य्येतिपार्थिवं मुहुर्गी-

रेतोवृषभःकनिक्रद द्दधद्रेतःकनिक्र-

दत्। शतंचक्षाणोअक्षभि र्देवोवनेषु

तुर्वणिः। सदोदधानउपरेषुसानुष्व-

ग्निःपरेषुसानुषु ॥ २ ॥

एवेन	गमनेन	गति से
सद्यः	सद्यः	तत्काल
परि	परि+	—
एति	पार + एति, व्याप्नोति	फैल जाता है
पार्थिवम्	पृथिवीसम्बन्धि	पृथिवीसम्बन्धी को

मुहुःऽगीः	पुनःपुनर्गिरतीति तथोक्तः	वार२ निगलने वाला
रेतः	वीर्य्यवान् (मतुपोलुक्)	वीर्य्यवान
वृषभः	वृषभः	बैल
कनिक्रदत्	शब्दयन्	शब्द करता हुआ
दधत्	धारयन्	धारण करता हुआ
रेतः	वीर्य्यम्	वीर्य्य को
कनिक्रदत्	शब्दयन्	शब्द करता हुआ
शतम्	शतेन (विभक्तेः सुः)	सौ से
चक्षाणः	पश्यन् (चष्टिरीक्षणकर्म्मा निघं० ३।११)	देखता हुआ
अक्षऽभिः	नेत्रैः	नेत्रों से
देवः	देवः	देव

वनेषु	वनेषु	वनों में
तुर्वणिः	शीघ्रगामी (निघं०४।३)	शीघ्र चलने वाला
सदः	स्थानम्	स्थान को
दधानः	धारयन्	धरण करता हुआ
उपरेषु	अधोवर्तिषु	नीचे वालों में
सानुषु	भूपृष्ठेषु	मैदानों में
अग्निः	अग्निः	अग्नि
परेषु	उच्चेषु	ऊंचों में
सानुषु	शिखरेषु	शिखरों में

संस्कृतार्थः ।

पुनःपुनर्निगरणशीलः शब्दयन् वीर्य्यवान् वृषभः (निज-) गत्या सद्यः पार्थिवम् (स्थानम्) व्याप्नोति, वीर्य्यधारयन् शब्दयन् (व्याप्नोति)

शतेननेत्रैःपश्यन् वनेषु शीघ्रगामी देवोऽग्निः अधोवर्तिषु भूपृष्ठेषु समुच्छ्रितेषु शिखरेषु (च) स्थानं धारयन् (व्याप्नोति) ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

बार २ निगलने वाला धाड़ता हुआ वीर्यवान बैल (अपनी) गतिसे पृथिवी के स्थानों में फैल जाता-है, वीर्य को धारण करता हुआ धाड़ता हुआ (फैल-जाताहै)सौ नेत्रोंसे देखते हुए,बनों में शीघ्र चलने वाले अग्निदेव नीचे मैदानोंमें(और)ऊंचे शिखरोंमें स्थान को धारण करते हुए (फैलजाते हैं) ॥ ३ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

स सुक्रतुः पुरोहितो दमेदमेऽग्नि-र्यज्ञस्याऽध्वरस्यचेतति क्रत्वायज्ञ-स्यचेतति । क्रत्वावेधाइषूयते वि-श्वाजातानिपस्पशे । यतोघृतश्री-रतिथिरजायत वह्निर्वेधाअजायत ।४।

सः	सः	वह
सुऽक्रतः	अति मेधावी	अत्यन्त बुद्धिमान
पुरऽहितः	पुरोहितः	पुरोहित
दमेऽदमे	गृहे गृहे	घर घर में
अग्निः	अग्निः	अग्नि
यज्ञस्य	यज्ञम् (कर्म्मणि षष्ठी)	यज्ञ को
अध्वरस्य	अकुटिलम् (,,)	कुटिलता से रहित को
चेतति	(ध्यानेन) पश्यति	(ध्यानसे) देखता है
क्रत्वा	बुद्ध्या	बुद्धि से
यज्ञस्य	यज्ञम् (,,)	यज्ञ को
चेतति	पश्यति	देखता है

क्रत्वा	बुद्ध्या	बुद्धि से
वेधाः	मेधावी (निघं०३।१५)	बुद्धिमान
इषुऽयते	प्रार्थयमानाय	प्रार्थना करते हुए के लिये
विश्वा	विश्वानि (शेर्लोपः)	सब को
जातानि	उत्पन्नानि	उत्पन्न हुओं को
पस्पशे	स्पर्शयति (अन्तर्भावितण्यर्थालडर्थे लिट्)	स्पर्श कराता है
यतः	यतः	जिस से
घृतऽश्रीः	घृतं सेवमानः	घृत को सेवन करता हुआ
अतिथिः	अतिथिः	अतिथि
अजायत	अजायत	उत्पन्न हुआ है
वह्निः	(हविषाम्) वोढा	(हवियोंके)लेजाने वाला

वेधाः	मेधावी	बुद्धिमान
अजायत	अजायत	उत्पन्न हुआ है

संस्कृतार्थः।

अतीवमेधावी गृहेगृहेपुरोहितः सोऽग्निः कौटिल्यरहितं यज्ञम् (ध्यानेन) पश्यति, बुद्ध्या यज्ञं पश्यति, (सः) मेधावी प्रार्थयमानाय विश्वानि जातानि बुद्ध्या स्पर्शयति, यतः घृतंसेवमानः (हविषाम्) वोढा, बुद्धिमानतिथिः प्रादुरभूत् ॥ ४ ॥

भावार्थः।

अत्यन्त बुद्धिमान, घर घरमें पुरोहित वह अग्नि कुटिलता से रहित यज्ञ को (ध्यान से) देखते हैं, बुद्धि से यज्ञ को देखते हैं, वह मेधावी प्रार्थना करने वाले के लिये सब उत्पन्नमात्र को बुद्धि द्वारा स्पर्श कराते हैं, जिस से घी को सेवन करने वाले (हवियों के) पहुंचाने वाले बुद्धिमान अतिथि उत्पन्न हुए हैं ॥ ४ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः १।२।१२।८।८।७।१२।८

क्रत्वा॒यद॑स्य॒त॑वि॑षीषु॒ पृञ्च॒तेग्ने॑-

रवेणमरुतांनभोज्येषिरायनभोज्या।

सहिष्मादानमिन्वति वसूनांचम-

ज्मना। सनस्त्रासतेदुरितादभि-

ह्रुतःशंसादघादभिह्रुतः ।५।

क्रत्वा	यज्ञेन	यज्ञ से
यत्	यदा	जब
अस्य	अस्य	इस के
तविषीषु	बलेषु (निघं०२।९)	बलों में
पृञ्चते	मिश्रयन्ति (पृचीसम्पर्के)	मिलाते हैं
अग्नेः	अग्नेः	[illegible]

अवेन	प्रेम्णा (आ०को०)	प्रेम से
मरुताम्	मरुताम्	मरुतों के
न	इव	की न्याईं
भोज्या	भक्ष्याणि [हवींषि] (शेलोप:)	भक्षण करने योग्य [हवियाँ]
इषिराय	इच्छायुक्ताय (निघं० ४।३)	कामना वाले के लिये
न	इव	की न्याईं
भोज्या	भक्ष्याणि	भक्षण करने योग्य
सः	सः	वह
हि	खलु	सचमुच
स्म	[पूरणः]	—
दानम्	दानम्	दान को

इन्वति	प्रेरयति	प्रेरण करता है
वसूनाम्	धनानाम्	धनों के
च	[पूरणः]	—
मज्मना	बलेन (निघं० २।९)	बल से
सः	सः	वह
नः	अस्मान्	हम को
त्रासते	त्रायते (यस्य सत्वं छान्दसम्)	रक्षा करता है
दुःऽहृतात्	पापात्	पाप से
अभिऽह्रुतः	कुटिलस्य (आ०को०)	कुटिल के
प्रंसात्	परिवादात्	कलंक से
अघात्	कुकर्मणः	कुकर्म से
अभिऽह्रुतः	कुटिलस्य	कुटिल के

संस्कृतार्थः ।

यदा मनुष्याः अस्याग्नेः वलेषु प्रीत्या यज्ञेन मरुताम् [बलम्] इव भोज्यानि [हवींषि] मिश्रयन्ति, यथा इच्छायुक्ताय भोज्यानि (दीयन्ते,) स दानं खलु प्रेरयति, धनानां बलेन (च) अस्मान् कुटिलस्य पापात् कुटिलस्य कुकर्मणः परिवादात् [च] त्रायते ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

जब मनुष्य इस अग्नि के बलों में प्रेम से यज्ञ-द्वारा मरुतोंके (बल) की न्याईं खाने योग्य (हवियाँ) मिलाते हैं, जैसे कामना करनेवाले के लिये भोजन (दिये जाते हैं,) तब वह सचमुच दान को प्रेरण करते हैं, हम को कुटिलता करने वाले के पाप से कुटिलता करने वाले के कुकर्म से (और) कलंक से बचाते हैं ॥ ५ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

विश्वोविहाया अरतिर्वसुर्दधे हस्ते दक्षिणे तरणिर्न शिश्रथ च्छ्रव-स्यया न शिश्रथत्। विश्वस्मा इदिषु-

ऊहिषे	आ+ऊहिषे, नयति (लड्र्थे लिटि वचनव्यत्ययः)	ले जाता है
विश्वस्मै	सर्वस्मै	सब के लिये
इत्	एव	ही
सुऽकृते	सुकर्मणे	शुभ कर्म करने वाले के लिये
वारम्	वरणीयम् (धनम्)	बरनेयोग्य(धन)को
ऋण्वति	प्रापयति (निघं०२।१४ गति कर्मा)	प्राप्त कराता है
अग्निः	अग्निः	अग्नि
द्वारा	द्वाराणि (शेश्छंदसि)	द्वारों को
वि	वि +	—
ऋण्वति	वि + ऋण्वति, समुद्घाटयति	चौड़े खोल देता है

संस्कृतार्थः ।

विश्वात्मको महेश्वरोऽग्निर्दक्षिणेहस्ते धनं

भारयति, परोपकारीव (च) त्यजति यथा (धनी) यशइच्छया त्यजति, सर्वस्मै एव प्रार्थयमानाय देवेषु हव्यं नयति, सर्वस्मै सुकर्मणे वरणीयम् (धनम्) प्रापयति, द्वाराणि (च) समुद्घाटयति ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

सब के रूप, महान ईश्वर अग्नि दहिने हाथ में धन को धारण करते हैं, (और) परोपकारी की न्याई छोड़ते हैं, जैसे (धनी) यश की इच्छासे छोड़ता है, वह सब प्रार्थना करने वालों के लिये देवताओं में हवि लेजाते हैं, सब सुकर्म करने वालों के लिये बरने योग्य (धन)को प्राप्त कराते हैं (और) द्वारों को चौड़ा खोल देते हैं ॥ ६ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

समानुषेवृजनेशंतमोहितोऽग्नि-

र्यज्ञेषुजेन्योनविश्पतिः प्रियोयज्ञेषु

विश्पतिःसहव्यामानुषाणा मिळा

कृतानिपत्यते। सनस्त्रासतेवरुण-

°१ मू०१२८।०३ (३५०१)

स्यधूर्तेर्मन्द्योद्देवस्यधूर्तेः ॥ ७ ॥

सः	सः	वह
मानुषे	मनुष्यसम्बन्धिनि	मनुष्य संबंधी में
वृजने	प्राचीरे (भा॰ पो॰)	घेरे में
शम्ऽतमः	अत्यन्तं सुखरूपः	अत्यन्त सुखरूप
हितः	स्थापितः	स्थापन किया गया
अग्निः	अग्निः	अग्नि
यज्ञेषु	यज्ञेषु	यज्ञों में
जेन्यः	जयशीलः	जीतने वाला
न	इव	की न्याईं
विश्पतिः	राजा	राजा

प्रियः	प्रियः	प्यारा
यज्ञेषु	यज्ञेषु	यज्ञों में
विश्पतिः	राजा	राजा
सः	सः	वह
हव्या	हव्यानि (शेलोपः)	हवियों को
मानुषाणाम्	मनुष्याणाम्	मनुष्यों की
इळा	स्तुत्या सह	स्तुति के साथ
कृतानि	कृतानि	की हुइयों को
पत्यते	ईष्टे (निघं०२।२१)	स्वामी है
सः	सः	वह
नः	अस्मान्	हम को

त्रासते	त्रायते (यद्व्यत्ययः)	रक्षा करता है
वरुणस्य	वरुणस्य	वरुण की
धूर्तेः	हिंसातः	हिंसा से
महः	महतः	महान की
देवस्य	देवस्य	देव की
धूर्तेः	हिंसातः	हिंसा से

संस्कृतार्थः ।

सोऽग्निर्मनुष्यसम्बन्धिनि प्राचीरे जयशीलोराजेव अत्यन्तं सुखरूपः (सन्) यज्ञेषुस्थापितः, यज्ञेषुप्रियोराजेव (स्थापितः,)सः स्तुत्या सह कृतानि मनुष्याणां हव्यानि ईष्टे, सोऽस्मान् वरुणस्य हिंसातः त्रायते, महतो देवस्य हिंसातः(त्रायते) ॥७॥

भावार्थः ।

वह अग्नि मनुष्यों के घेरे में जयशील राजा की न्याई अत्यन्त सुखरूप हुए २ यज्ञों में स्थापन

किये गए हैं, यज्ञों में प्रिय राजा की न्याईं स्थापन किये गए हैं, वह स्तुति के साथ की हुई मनुष्यों की हवियों के स्वामी हैं, वह हमें वरुण की हिंसा से बचाते हैं, महान देवता की हिंसा से बचाते हैं ॥ ७ ॥

अग्निर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८।

अग्निंहोतारमीळतेवसुधितिं प्रियंचेतिष्ठमरतिंन्यॆरिरे हव्यवाहं न्यॆरिरे। विश्वायुंविश्ववेदसं होतारंयजतंकविम्। देवासोरण्वमवसेवसूयवो गीर्भीरण्वंवसूयवः ॥ ८ ॥

अग्निम्	अग्निम्	अग्नि को
होतारम्	होतारम्	होता को

ईळते	पूजयन्ति	पूजते हैं
वसुऽधितिम्	धनस्यधारयि- तारम्	धन के धारण करने वाले को
प्रियम्	प्रियम्	प्यारे को
चेतिष्ठम्	अतिचेतनाशीलम् (चेतृ छन्दा दिष्ठनितृलोपः)	अत्यन्त चेतन को
अरतिम्	ईश्वरम्	ईश्वर को
नि	नि+	–
एरिरे	नि+एरिरे,समीपं प्राप्तवन्तः,	समीप पहुंचे हैं
हव्यऽवाहम्	हविषां वोढारम्	हवियोंके लेजाने वाले को
नि	नि+	–
एरिरे	नि+एरिरे समीपंप्राप्तवन्ता (ईरगतौ)	समीप पहुंचे हैं

विश्वऽ आयुम्	सर्वेषां जीवन-रूपम्	सब के जीवन रूप को
विश्वऽ-वेदसम्	सर्वधनोपेतम्	सम्पूर्ण धनों वाले को
होतारम्	होतारम्	होता को
यजतम्	यजनीयम्	यजन करने योग्य को
कविम्	मेधाविनम्	बुद्धिमान को
देवासः	देवाः (जसोऽसुगागमः)	देवता
रण्वम्	रमणीयम्	रमणीय को
अवसे	रक्षाऽर्थम्	रक्षा के लिये
वसुऽयवः	धनकामाः	धन की कामना वाले
गीःऽभिः	स्तुतिभिः	स्तुतियों से

रण्वम्	रमणीयम्	रमणीय को
वसुऽयवः	धनकामाः	धनकी कामना वाले

संस्कृतार्थः ।

(मनुष्याः) होतारं धनस्यधारयितारं प्रियम् अत्यन्तंचेतनाशीलम् (विश्वस्य)स्वामिनम् (च)अग्निं पूजयन्ति,(तत्-)समीपम(च)प्राप्तवन्तः,हविषोवोढारं नितरांप्राप्तवन्तः,सर्वेषांजीवनरूपं सर्वधनोपेतं होतारं यजनीयं मेधाविनं रमणीयम्(चाऽग्निम्) धनकामाः देवाःरक्षार्थम् (समीपं प्राप्तवन्तः,) धनकामाः (देवाः) रमणीयम् (अग्निम्) स्तुत्या [प्राप्तवन्तः] ॥८॥

भावार्थः ।

[मनुष्य] होता, धनके धारण करने वाले, प्यारे, अत्यन्त चेतन [और सब के] स्वामी अग्नि को पूजते हैं, [और उसके] समीप पहुंचे हैं, हवियों के लेजाने वाले [के समीप पहुंचे हैं,] सब के जीवन रूप, सब धनों वाले,होता,यजन करने योग्य, बुद्धिमान (और) रमणीय (अग्नि)को धनकी कामना वाले देवता रक्षा के लिये[समीप पहुंचे हैं] धन का कामना वालेदेवता स्तुतियों से समीप पहुंचे हैं ॥८॥

इत्यष्टाविंशत्युत्तरशततमं सूक्तम्।

ऋ०मं०१ सू०१२९।

इन्द्रोदेवता, परुच्छेपऋषिः।

विनियोगः-

१-११। एतत्सूक्त वृत्रारात्रस्य पष्ठेऽइनि मरुत्वतीयशस्त्रे
विनियुक्तम्। (आ० ८।११४)

सूक्त का भावार्थ।

हे बल वाले इन्द्र! आप हमारी पूजा को ग्रहण करने के लिये जिस अपने रथ को आगे बढ़ाते हो, हे दोष रहित! जिस को आप आगे बढ़ाते हो, उस को तत्काल हमारी रक्षा में नियुक्त करो, और आपकी इच्छा हो कि हमारा बल बढ़े, हे दोषरहित और शीघ्रकारी! आप हम कवियों की वाणी को बुद्धिमानों की वाणी की न्याईं सुनो। १। हे इन्द्र! जो आप युद्ध की ललकारके समय वीरों से स्तुति किये जाकर बलयुक्त किये जाने योग्य हो, जय के लिये शूरवीरों से बलयुक्त किये जाने योग्य हो, जो आप शूरवीरों के साथ प्रकाश के जीतने वाले हो और बुद्धिमानों को यज्ञ के लिये प्रेरण करते हो,उस बलवान आप को ऐश्वर्यवान आराधन करते हैं जैसे युद्ध के लिये वेगवान घोड़े को। २। हे वीर! गरजने वाले धर्मरूप बादल को आप ही फुलाते हो, आप ही प्रत्येक विरोधी मनुष्य को हटाते हो, विरोधी मनुष्य का परित्याग करते हो, हे इन्द्र! मैं उस प्रसिद्ध स्तोत्र को आपके लिये उच्चारण करता हूं, स्वयं यश वाले रुद्र के लिये मित्र और वरुण के लिये और धौ के लिये

---

२ "शूरवीरों के साथ प्रकाश के जीतने वाले" अर्थात इस तामसी दस्युओं के देश में सतोगुणी आर्यजाति की सभ्यता का प्रकाश फैलाने वाले।

उच्चारण करता हूं, अत्यन्त दयालु वरुण के लिये विख्यात स्तोत्र को उच्चारण करता हूं । ३ । हे आर्य्यगण! आप की रक्षा के लिये हम अपनेसखा सब के जीवनरूप और प्रबल सहायक इन्द्र की कामना करते हैं, युद्ध में प्रबल सहायक इन्द्र की कामना करते हैं, हे इन्द्र! आप सब युद्धों में रक्षा के लिये हमें स्तोत्र उच्चारण करने के लिये प्रेरण करो, आप से शत्रु नहीं बच सकता जिस को आप घेर लेते हो, जिन सब शत्रुओं को आप घेर लेते हो । ४ । हे उग्र! प्रत्येक शत्रु के घमंड को नीचा करो, जलती हुई लकड़ियों से मानो नीचा करो और हम को अपनी रक्षाओं से पहले की न्याईं रस्ता दिखाओ, हे शूर! आप निष्पाप जाने गए हो, इसलिये अगवैया बनकर मनुष्य के सब पापों को दूर करके उस की रक्षा करते हो,वह आप हमारे समीप ठैर कर हमारे नेता बनो । ५ । जो बलवान सोम सब से बुलाने योग्य इन्द्र की न्याईं स्तोत्र को प्रेरण करता है, राक्षसों के मारने वाले स्तोत्र को प्रेरण करता है, मैं उस से यह प्रार्थना करूं कि वह निन्दक की दुष्टबुद्धि को वध करने के शस्त्रों द्वारा हम से दूर हटावे और पाप की प्रशंसा करने वाला अत्यन्त नीचे गिरे और अणु की न्याईं नष्ट हो ।६। हे धनवान इन्द्र! हम ध्यान युक्तवाणी द्वारा यह वर माँगे, धन और बड़ी वीरताको माँगें,रमणीय और बड़ी वीरता वाले धन को माँगें, कठिनता से मनाने योग्य इन्द्र को सुन्दर स्तोत्रों से और हवियों द्वारा प्रसन्न करें, पूजने योग्य को प्रबल पुकारों से प्रसन्न करें ।७। हे आर्य्यगण! जो इन्द्र यश की इच्छा से हमारे और आपके समान रक्षक हैं,वह दुष्ट चित्त वाले विरोधियों को दूर हटाने में तत्पर हों, दुष्ट चित्त वालों के चीर डालनेमें तत्पर हों, जो वज्र राक्षसों ने हमारी ओर फेंका है वह स्वयं उन्हीं को मारनेके लिये लौटे,हम तक न पहुंचे, फेंका हुआ शक्तिभस्त्र हम तक न पहुंचे ।८। हे इन्द्र! आप हमारे पास बहुत धन लेकर आवें,विस्त-

रहित मार्ग से आवें, राक्षसरहित मार्ग से आवें, हम घर से दूर हों वा समीप, दोनों अवस्थाओं में आप हमारे साथ रहें, आप दूर और समीपमें अपनी रक्षाओं द्वारा हमारा पालन करें, सदा रक्षाओं द्वारा पालन करें। ९। हे सबसे अधिक बली! पालन कर्ता! रक्षक! मरण रहित! इन्द्र! आप हमारे पास तारने वाले धन को लेकर आवें, मित्र की न्याईं रक्षाके लिये आने वाले आप का बल बढ़े, हे प्रत्येक वीर के रक्षक! वज्रधारी! हमसे अन्य किसो दूसरे को पीड़ित करो, हे वज्री! जो हम को पीड़ा देना चाहता है उसको पीड़ित करो।१०। हे इन्द्र! आप जो बहुत स्तुति किये गयेहैं और पाप चीतनों वालों को नीचे गिराने वाले हैं,आप जो देवता होकर पाप चीतने वालोंको नीचे गिराते हैं, आप जो पापी राक्षस के मारने वाले और मुझ सरीखे स्तोता की रक्षा करने वाले हैं, ऐसे आप हमें पीड़ा से बचावें, हे धन वाले! इसीलिये आप को पिता ने जना है, हे धन वाले! राक्षसों के मारने वाले आप को जना है॥ ११ ॥

इन्द्रोदेवता,अत्यष्टिश्छन्दः।१२।१२।७।८।८।१२।८

यंत्वंरथमिन्द्रमेधसातये पाका सन्तमिषिरप्रणयसि प्रानवद्यनयसि। सद्यश्चित्तमभिष्टये करोवशश्च वाजिनम्। सोस्माकमनवद्यतू-तुजानवेधसा मिमांवाचंनवेधसाम्॥१॥

यम्	यम्	जिस को
त्वम्	त्वम्	तू
रथम्	रथम्	रथ को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
मेधऽसातये	यज्ञस्य प्राप्तये (आ०को०)	यज्ञ की प्राप्ति के लिये
अपाका	पश्चादवस्थितम् (आ०को०,सुपामितिविमकेरात्वम्)	पीछे ठैरे हुए को
सन्तम्	सन्तम्	हुए २ को
इषिर	बलवन् ! (आ०को०)	हे बलवान्
प्रऽनयसि	अग्रेनयसि	आगे ले जाते हो
प्र	प्र+	—
अनवद्य	हे अनिन्द्य !	हे निन्दा से रहित

नयसि	प्र + नयसि, अग्रे नयसि	आगे ले जाते हो
सद्यः	सद्यः	तत्काल
चित्	एव	ही
तम्	तम्	उस को
अभिष्टये	रक्षायै (आ०को०)	रक्षा के लिये
करः	कुरु (लेटि व्यत्ययेन शप्)	करो
वशः	कामयस्व (लेटयडागमः)	इच्छा करो
च	च	और
वाजिनम्	बलम् (आ०को०)	बल को
सः	सः	वह
अस्माकम्	अस्माकम्	हमारी

अनवद्य	हे दोषरहित !	हे दोष से रहित
तूतुजान	हे त्वरमाण (निघं०२।१५)	हे शीघ्रकारी
वेधसाम्	कवीनाम् (आ०को०)	कवियों की
इमाम्	इमाम्	इस को
वाचम्	वाचम्	वाणी को
न	इव	की न्याई
वेधसाम्	मेधाविनाम्	बुद्धिमानों की

संस्कृतार्थः।

हे बलवन्! इन्द्र! त्वम् (अस्मद्-) यज्ञस्य प्राप्तये पश्चादवस्थितं यम् (निज-) रथम् अग्रे नयसि, हे अनिन्द्य! (यं त्वम्) अग्रे नयसि, तं सद्यः (अस्मत्-) रक्षार्थे कुरु, (अस्मदर्थम्)बलम् (च)कामयस्व,हे दोषरहित! त्वरमाण! (इन्द्र!) सः(त्वम्)अस्माकं कवीनाम् इमां वाचं मेधाविनाम् (वाचम्) इव(शृणु) ॥१॥

भाषार्थः ।

हे बलवान इन्द्र ! आप (हमारे) यज्ञकी प्राप्ति के लिये पीछे ठैरे हुए जिस (अपने) रथ को आगे बढ़ाते हो, हे निन्दा से रहित ! जिसको (आप) आगे बढाते हो, उसको तत्काल हमारी रक्षा के लिये करो (और)हमारे लिये बल की कामना करो,हेदोषसे रहित ! शीघ्रकारी (इन्द्र !) वह (आप) हम कवियों की इस बाणी को बुद्धिमानोंकी (बाणी की) न्याईं(सुनो)॥१॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

स॒:श्रु॒धि॒य:स्मा॒पृत॑नासु॒कासु॑-

चि॒ द्द॒क्षाय्य॑इन्द्र॒भर॑हूतये॒नृभि॑ रसि॒

प्रतू॑र्तये॒नृभिः॑ । य:शू॒र॒:स्व१॒:सनि॑ता॒

यो॒विप्रै॒र्वाज॒ंतरु॑ता । तमी॑शा॒नास॑इर-

धन्तवा॒जिनं॑ पृ॒क्षमत्यं॑नवा॒जिन॑म्॥२॥

सः	सः	वह
श्रुधि	शृणु	सुनो
यः	यः	जो
स्म	(पूरणः)	–
पृतनासु	संग्रामेषु (निघं०२।१७)	युद्धों में
कासु	कासु + चित् सर्वेष्वपि	सब में
चित्	+चित्	–
दक्षाय्यः	बलीकार्य्यः	बलयुक्त करने योग्य
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
भरऽहूतये	संग्रामसम्बन्धिन-आह्वानाऽर्थम् (भरइतिसंग्राम नाम निघं०२।१७)	युद्ध की पुकार के लिये

नृऽभिः	वीरः	वीरों के साथ
असि	असि	तू है
प्रऽतूर्तये	जयाय	जय के लिये
नृऽभिः	नरः	नरों के साथ
यः	यः	जो
शूरैः	शूरैः	शरवीरों के साथ
स्वः०	प्रकाशम्	प्रकाश को
सनिता	जेता	जीतने वाला
यः	यः	जो
विप्रैः	मेधाविभिः	बुद्धिमानोंकेसाथ
वाजम्	यज्ञम्	यज्ञ को

तरुता	प्रेरयिता (ईकारस्योकारश्छान्दसः)	प्रेरण करनेवाला
तम्	तम्	उस को
ईशानासः	ऐश्वर्य्यवन्तः (जसोऽसुगागमः)	ऐश्वर्य्यवाले
इरधन्त	आराधयन्ति (इरध् आराधने कण्ड्वादेराकृतिगणत्वाच्छान्दसं रूपम्)	आराधना करते हैं
वाजिनम्	बलवन्तम्	बलवान को
पृक्षम्	युद्धार्थम् (निघं०२।१७ चतुर्थ्यर्थे द्वितीया)	युद्ध के लिये
अत्यम्	अश्वम् (निघं० १।१४)	घोड़े को
न	इव	जैसे
वाजिनम्	वेगवन्तम्	वेग वाले को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! सः (त्वम्) शृणु, यः (त्वम्) सर्वेष्वपि युद्धेषु सङ्ग्रामसम्बन्धिन आह्वानार्थं वीरैः प्रबलीकार्य्यः जयार्थं नरैः(प्रबली कर्तव्यः)असि,शूरैः प्रकाशस्य

जेता (असि,) यः(च त्वम्) मेधाविभिर्यज्ञस्य प्रेरयिता (असि,) तं बलवन्तम् (त्वाम्) ऐश्वर्य्यवन्तो युद्धाय वेगवन्तम् अश्वमिव आराधयन्ति ॥ २॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! वह आप सुनें, जो आप सब युद्धों में संग्राम की पुकार के लिये बलयुक्त करने योग्य (हैं) जय के लिये नरों से (बल युक्त करने योग्य) हैं, जो (आप) शूरवीरों के साथ प्रकाश के जीतने वाले हैं (और) जो (आप) बुद्धिमानों के द्वारा यज्ञ के प्रेरण करने वाले हैं, उस बलवान (आप को) ऐश्वर्यवान आराधन करते हैं जैसे युद्ध के लिये वेग-वाले घोड़े को (आराधन करते हैं) ॥ २ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८,

दस्मोहिष्माह्वपर्णांपिन्वसित्वचं

कञ्चिद्यावीरररंशूरमर्त्यंपरिवृणक्षि-

मर्त्यम् । इन्द्रोततुभ्यंतद्दिवे-

तद्द्रायस्वयशसे। मित्रायवोचंवरु-
णायसप्रथः सुमृळीकायसप्रथः। ३।

दस्मः	अद्भुतः	अद्भुत
हि	एव	ही
स्म	(पूरणः)	—
वृषणम्	वर्षणशीलम्	बरसने वाले को
पिन्वसि	आप्याययसि	फुलाते हो
त्वचम्	चर्म	चर्म को
कम्	कम्+चित्.प्रत्ये- (आ०को०) कम्	प्रत्येक को
चित्	+चित्	—
यावीः	पृथक्करोषि (यु अमिश्रणे लङर्थे लुङ्यडभावः)	अलग करदेते हो

अररुम्	शत्रुम् (आ०को०)	शत्रु को
शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
मर्त्यम्	मनुष्यम्	मनुष्य को
परिऽवृणक्षि	परित्यजसि	परित्याग करते हो
मर्त्यम्	मनुष्यम्	मनुष्य को
इन्द्र	हे इन्द्र	हे इन्द्र
उत	च	और
तुभ्यम्	तुभ्यम्	तेरे लिये
तत्	तत्	उस को
दिवे	दिवे	द्यौ के लिये
तत्	तत्	उस को

रुद्राय	रुद्राय	रुद्र के लिये
स्वऽयशसे	स्वतोयशास्वने	स्वयं यशस्वी के लिये
मित्राय	मित्राय	मित्र के लिये
वोचम्	ब्रवीमि (लडर्थे लुङघडभाव:)	कहता हूं
वरुणाय	वरुणाय	वरुण के लिये
सऽप्रथ:	प्रथितम्	विख्यात को
सुऽमृळीकाय	अतिकृपालवे	अत्यन्त कृपालु के लिये
सऽप्रथ:	प्रथितम्	विख्यात को

संस्कृतार्थ:।

हे शूर ! अद्भुत: (त्वम्) एव वर्षणशीलं चर्म्म-आप्यायसि,(त्वम्) प्रत्येकं विरोधिनं मनुष्यं पृथक्करोषि, (विरोधिनम्) मनुष्यं परित्यजसि, हे इन्द्र ! (अहम्) तुभ्यं, दिवे, स्वतोयशस्विने रुद्राय,मित्राय,

।रुणाय च सुप्रख्यातम् (तत् स्तोत्रम्) ब्रवीमि, अतिकृपालवे(वरुणाय)सुप्रख्यातम्(स्तोत्रं ब्रवीमि)।३।

भावार्थः।

हे शूरवीर! अद्भुत आप ही वरसने वाले चर्म को फुलाते हो,आप प्रत्येक विरोधी मनुष्य को अलग करते हो,प्रत्येक (विरोधी) मनुष्य का परित्याग करते हो, हे इन्द्र! मैं आपके लिये,द्यौके लिये,स्वयं यशवाले रुद्र के लिये,मित्र के लिये और वरुण के लिये विख्यात उस (स्तोत्र) को कहता हूं, अत्यन्त कृपालु (वरुण) के लिये विख्यात (स्तोत्र) को (कहता हूं) ॥ ३ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः।१२।१२।८।८।८।१२।८

अस्माकंवइन्द्रमुश्मसीष्टये सखायंविश्वायुंप्रासहंयुजंवाजेषुप्रासहंयुजम्। अस्माकंब्रह्मोतयेवापृत्सुषुकासुचित्। नहित्वाशत्रुःस्तरतेस्तृणोषियं विश्वंशत्रुंस्तृणोषियम्॥४॥

स्तरते	तरति	उलांघता है
स्तृणोषि	आच्छादयसि	ढक लेते हो
यम्	यम्	जिस को
विश्वम्	सर्वम्	सब को
शत्रुम्	शत्रुजातम् (जातावेकवचनम्)	शत्रुओं को
स्तृणोषि	आच्छादयसि	ढक लेते हो
यम्	यम्	जिस को

संस्कृतार्थः ।

(हे आर्याः! वयम्) युष्मद्रक्षार्थम् अस्मत्सखायं सर्वेषां जीवनभूतं प्रबलं सहचरम् इन्द्रं कामयामहे, युद्धेषु प्रबलं सहचरम् (इन्द्रं कामयामहे) (हे इन्द्र! त्वम्) सर्वेषु युद्धेषु रक्षार्थम् अस्माकं स्तोत्रं प्रेरय, त्वां शत्रुर्नतरति यम् (त्वम्) आच्छादयसि, यं सर्वं शत्रुजातमाच्छादयसि ॥ ४ ॥

भावार्थः।

(हे आर्यो!) आप की रक्षा के लिये, हम अपने सखा, सब के जीवन रूप, प्रबल साथी इन्द्र की कामना करते हैं, युद्ध में प्रबल साथी (इन्द्रकी कामना करते हैं) (हे इन्द्र!) आप सब युद्धों में रक्षा के लिये हमारे स्तोत्र को प्रेरण करो, आप को शत्रु नहीं उलांघ सकता जिसको (आप) आच्छादन कर लेते हो, जिस सब शत्रुसमूह को आप आच्छादन कर लेते हो ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, विराडत्यष्टिश्छन्दः।१२।१२।८।७।८।१२।७

निषूनमातिमतिंकयस्यचित्ते-
जिष्ठाभिररणिभिर्नोतिभिरुग्राभि-
रुग्रोतिभिः। नेषिणोयथापुरानेनाः
शूरमन्यसे। विश्वानिपूरोरपपर्षिव-
ह्निरासावह्निर्नोअच्छ ॥५॥

अस्माकम्	अस्माकम्	हमारे
वः	युष्माकम्	तुम्हारी
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को
उश्मसि	कामयामहे (वशकान्तौ मस इकारागमः)	हम कामना करते हैं
इष्टये	रक्षार्थम्	रक्षा के लिये
सखायम्	मित्रम्	मित्र को
विश्वऽआयुम्	सर्वेषांजीवनभूतम्	सब के जीवन रूप को
प्रऽसहम्	प्रबलम्	खूब बलवान को
युजम्	सहचरम्	साथी को
वाजेषु	संग्रामेषु (निघं० २।१०)	यज्ञों में

प्रऽसहम्	प्रबलम्	प्रबल को
युजम्	सहचरम्	साथी को
अस्माकम्	अस्माकम्	हमारे
ब्रह्म	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
ऊतये	रक्षार्थम्	रक्षा के लिये
अव	प्रेरय (आ०को०)	प्रेरण करो
पृत्सुषु	युद्धेषु	युद्धों में
कासु	कासु+चित्, प्रत्येकेषु	प्रत्येक में
चित्	+चित्	—
नहि	नहि	नहीं
त्वा	त्वाम्	तुझ को
शत्रुः	शत्रुः	शत्रु

स्तरते	तरति	उलांघता है
स्तृणोषि	आच्छादयसि	ढकलेते हो
यम्	यम्	जिस को
विश्वम्	सर्वम्	सब को
शत्रुम्	शत्रुजातम् (जातावेकवचनम्)	शत्रुओं को
स्तृणोषि	आच्छादयसि	ढक लेते हो
यम्	यम्	जिस को

संस्कृतार्थः ।

(हे आर्याः! वयम्) युष्मद्रक्षार्थम् अस्मत्सखायं सर्वेषां जीवनभूतं प्रबलं सहचरम् इन्द्रं कामयामहे, युद्धेषु प्रबलं सहचरम् (इन्द्रं कामयामहे) (हे इन्द्र! त्वम्) सर्वेषु युद्धेषु रक्षार्थम् अस्माकं स्तोत्रं प्रेरय, त्वां शत्रुर्नतरति यम् (त्वम्) आच्छादयसि, यं सर्वं शत्रुजातमाच्छादयसि ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

(हे आर्यो !) आप की रक्षा के लिये, हम अपने सखा, सब के जीवन रूप, प्रबल साथी इन्द्र की कामना करते हैं, युद्ध में प्रबल साथी (इन्द्रकी कामना करते हैं) (हे इन्द्र!) आप सब युद्धों में रक्षा के लिये हमारे स्तोत्र को प्रेरण करो, आप को शत्रु नहीं उलांघ सकता जिसको (आप) आच्छादन कर लेते हो, जिस सब शत्रुसमूह को आप आच्छादन कर लेते हो ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, विराडत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।७।८।१२।७

निषूनमातिमतिंकयस्यचित्ते-
जिष्ठाभिररणिभिर्नोतिभि रुग्राभि-
रुग्रोतिभिः । नेषिणोयथापुरानेनाः
शूरमन्यसे । विश्वानिपूरोरपपर्षिव-
ह्निरासावह्निर्नोअच्छ ॥ ५ ॥

नि	नि +	–
सु	सु +	–
नम	नि+सु + नम, नितरांनमय (अन्तर्भावितण्यर्थः)	खूब नमाओ
अतिऽमतिम्	मिथ्यागर्वम् (अतिक्रान्तामतिर्येन तम)	झूठे अभिमान को
कयस्य	कस्य+चित्, प्रत्येकस्य यकारोपजनश्छान्दसः)	प्रत्येक के
चित्	+चित्	–
तेजिष्ठाभिः	अतिज्वलद्भिः	अत्यन्त जलते हुओं से
अरणिऽभिः	काष्ठैः	काष्ठों से
न	इव	की न्याईं
ऊतिऽभिः	रक्षाभिः	रक्षाओं से

उग्राभिः	प्रबलाभिः	प्रबलों से
उग्र	हे उग्र !	हे उग्र
ऊतिऽभिः	रक्षाभिः	रक्षाओं से
नेषि	नय (लोडर्थेलट्, छान्दसः शपोलुक्)	ले चलो
नः	अस्मान्	हम को
यथा	यथा	जैसे
पुरा	पुरा	पहिले
अनेनाः	पापरहितः	पाप से रहित
शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
मन्यसे	ज्ञायसे	जाने जाते हो
विश्वानि	सर्वाणि	सब को

पूरोः	मनुष्यस्य (निघं० २।३)	मनुष्य के
अप	अप+	—
पर्षि	अप+पर्षि, अपवारयसि	दूर हटाते हो
वन्हिः	नेता	अगवैया
आसा	समीपम् (निघं० २।१६, विभक्तेरात्वम्)	समीप
वन्हिः	नेता	अगवैया
नः	अस्मान्	हम को
अच्छ	अभिलक्ष्य	लक्ष रखकर

संस्कृतार्थः ।

हे उग्र ! (त्वम्) प्रत्येकस्य (शत्रोः) मिथ्यागर्वम् अतिज्वलद्भिः काष्ठैरिव नितरां नमय, अस्मान् (च) (स्व-) रक्षाभिः प्रबलाभीरक्षाभिः पूर्वकाल इव नय, हे शूर ! (त्वम्) पापरहितो ज्ञायसे (अतः) नेता (सन्)

मनुष्यस्यसर्वाणि (पापानि) अपवारयसि, (स त्वम्) अस्मानभिलक्ष्य समीपे (स्थित्वा)नेता(भव) ॥ ५ ॥

भाषार्थः ।

हे उग्र!आप प्रत्येक(शत्रु)के मिथ्या अभिमान को खूब नमन करो,जैसे अत्यन्त जलते हुए काष्ठों से (करतेहैं) और हमें (अपनी) रक्षाओ से प्रबल रक्षाओं से पहले की न्याईं रस्ता दिखाओ, हे शूरबीर ! आप पाप से रहितजाने गए हो (इसलिये) अगवैया होकर मनुष्यके सब (पापों)को दूर हटाते हो, (वह आप) हमारे समीप ठैर कर(हमारे) अगवैया बनो ॥ ५ ॥

इन्दुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः।१२।१२।८।८।८।१२।८

प्रतद्वोचेयंभव्यायेन्दवे हव्योनयइ-

षवान्मन्मरेजति रक्षोहामन्मरेज-

ति । स्वयंसोअस्मदानिदो वधैरजे-

तदुर्मतिम् । अवस्रवेदघशंसोव-

तर मवक्षुद्रमिवस्रवेत् ॥ ६ ॥

प्र	प्र+	–
तत्	एतत् (एकारोपजनः)	यह
वोचेयम्	प्र + वोचेयम् प्रकर्षेणकथयेयम् (वचेलिङ्याशियङ्, वचउम्)	भली प्रकार कहूं
भव्याय	वर्तमानाय	वर्तमान के लिये
इन्दवे	सोमाय	सोम के लिये
हव्यः	आह्वातव्यः (इन्द्रः)	बुलाने योग्य [इन्द्र]
न	इव	की न्याईं
यः	यः	जो
इषऽवान्	बलवान्	बलवान्
मन्म	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
रेजति	प्रेरयति	प्रेरण करता है

रक्षःऽहा	रक्षोघ्नम् (विभक्तेर्डा)	राक्षसों के मारने वाले को
मन्म	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
रेजति	प्रेरयति	प्रेरण करता है
स्वयम्	स्वयम्	अपने आप
सः	सः	वह
अस्मत्	अस्मत्तः	हम से
आ	आ+	–
निदः	निन्दितुः (णिदि कुत्सायाम्, क्विप् प्रत्ययः)	निन्दा करने वाले की
वधैः	हननसाधनैः	वध के साधनों से
अजेत	आ + अजेत, अपनयेत (अज क्षेपणे)	दूर हटावे

दुःऽमतिम्	दुर्बुद्धिम्	खोटी बुद्धि को
अव	अव+	–
स्रवेत्	अव+स्रवेत्, पतेत्	गिरे
अघऽशंसः	पापस्यप्रशंसिता	पाप की प्रशंसा करने वाला
अवऽतरम्	अधोऽधः	अत्यन्त नीचे
अव	अव+	–
क्षुद्रम्ऽइव	अणुरिव (आ०को०)	अणु की न्याईं
स्रवेत्	अव + स्रवेत्, विनश्येत्	नष्ट हो

संस्कृतार्थः।

(अहमस्मै) विद्यमानाय सोमाय एतत् (वक्ष्यमाण-मभ्यर्थनम्) प्रकर्षेण कथयेयम्, यो बलवान् आह्वानव्यः (इन्द्रः·) इव स्तोत्रं प्रेरगति, रक्षोघ्नं स्तोत्रं प्रेरयति,- स स्वयं निन्दितदुर्बुद्धिं हननसाधनैः अस्मत्तो-

ऽपनयेत्, पापशंसिता (च) अधाऽधः निपतेत्, अणुरिव (च) विनश्येत् ॥ ६ ॥

भावार्थः ।

(मैं इस) वर्तमान सोम के लिये यह (प्रार्थना) करूं, जो बलवान बुलाने योग्य (इन्द्र) की न्याई स्तोत्र को प्रेरण करता है, राक्षसों के मारने वाले स्तोत्र को प्रेरण करता है, वह निन्दा करने वाले की खोटी बुद्धि को बध के साधनों द्वारा स्वयं हम से दूर हटावे, पाप की प्रशंसा करने वाला अत्यन्त नीचे गिरे (और) अणु की न्याई नष्ट हो ॥ ६ ॥

इन्द्रोदेवता, विराडत्यष्टिश्छन्दः।१२।१२।८।८।८।१२।८

वनेमतद्धोत्रयाचितन्त्या वनेमरयिंरयिवः सुवीर्यं रण्वंसन्तंसुवीर्यम् । दुर्मन्मानंसमन्तुभि रेमिषापृचोमहि । आसत्याभिरिन्द्रंद्युम्नहूतिभि र्यजत्रंद्युम्नहूतिभिः ।७।

वनेम	याचेम (आ०को०)	हम माँगें
तत्	एतत् (एकारलोपः)	यह
धीचया	वाचा (निघ० १।११)	वाणी से
चितन्त्या	ध्यानपरया	ध्यानयुक्त से
वनेम	याचेम	हम माँगें
रयिम्	धनम्	धन को
रयिऽवः	हे धनवन् !	हे धन वाले
सुऽवीर्यम्	महाशौर्योपेतम्	बड़ी वीरता वाले को
रण्वम्	रमणीयम्	रमणीय को
सन्तम्	सत्	हुए २ को
सुऽवीर्यम्	महाशौर्योपेतम्	बड़ी वीरता वाले को

दुःऽमन्मा-नम्	अतियत्नेन मन्तुं शक्यम्	अत्यन्त यत्न से मनने योग्य को
सुमन्तुऽभिः	शोभनैःस्तोत्रैः	सुन्दर स्तोत्रों से
आ	आ +	–
ईम्	(पूरणः)	–
इषा	(हवीरूपेण) अन्नेन (निघं० २।७)	(हवीरूप) अन्न से
पृचीमहि	आ+पृचीमहि, तर्पयाम	हम प्रसन्न करें
आ	आ(पृचीमहि), तर्पयाम	हम प्रसन्न करें
सत्याभिः	सत्याभिः	सच्चियों से
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को
द्युम्नहूतिऽभिः	प्रबलाभिर्हूतिभिः (आ०को०)	प्रबल पुकारों से

यजत्रम्	यजनीयम्	पूजने योग्य को
{ द्युम्नहू- तिऽभिः	प्रबलाभिर्हूतिभिः	प्रबल पुकारों से

संस्कृतार्थः ।

हे धनवन्! (इन्द्र!) वयं ध्यानपरया वाचा एतत् (वरम्) याचेम, महाशौर्योपेतं धनं याचेम, रमणायं सद् महाशौर्य्योपेतम् (धनंयाचेम) अतियत्नेन मन्तुं शक्यं शोभनैः स्तोत्रैः (हवीरूपेण) अन्नेन (च) तर्पयाम, इन्द्रं सत्याभिः प्रबलाभिः[च]हूतिभिः[तर्पयाम,] यजनीयं प्रबलाभिर्हूतिभिः तर्पयाम ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

हे धनवान् [इन्द्र !] हम ध्यानयुक्त वाणी से यह (वर)मांगें, बड़ी वीरता वाले धनको मांगें, रमणीय और साथ ही बड़ी वीरता वाले धन को मांगें, अत्यन्त यत्न से मनने योग्य को सुन्दर स्तोत्रों से[औरहविरूप]अन्न से प्रसन्न करें, इन्द्र को सच्ची प्रबल पुकारों से प्रसन्न करें, पूजने योग्य को प्रबल पुकारों से प्रसन्न करें ॥७॥

इन्द्रोदेवता, अतिशक्करीछन्दः।१२।१०।७।८।७।८।८॥

प्रप्रावोअस्मेस्वयशोभिरूती परि-

वर्गइन्द्रोदुर्म्मतीनां दरीमन्दुर्म्मती-

नाम् । स्वयंसारिषयध्यै यानउपेषे

अत्रैः। हतेमसन्नवक्षतिक्षिप्ताजूर्णि-

र्नवक्षति ।८।

प्रऽप्र	अग्रेऽग्रे	आगे आगे
वः	युष्माकम्	तुम्हारा
अस्मे०	अस्माकम् (विभक्तेः शे आदेशः)	हमारा
स्वयशःऽभिः	निजयशोभिः	अपने यशों से
ऊती	रक्षकः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	रक्षा करने वाला

अत्रैः	राक्षसैः	राक्षसों से
हता	विनष्टा	नष्ट हुई २
ईम्	एव	ही
असत्	भवेत् (अस्‌भुवि,लेटयडागमः)	हो
न	न	नहीं
वक्षति	प्राप्नोतु (वहतेर्लेटयडागमः)	प्राप्त हो
क्षिप्ता	क्षिप्ता	फैंकी हुई
जूर्णिः	शक्तिः (निघं० ४।३)	बरछी
न	न	नहीं
वक्षति	प्राप्नोतु	प्राप्त हो

संस्कृतार्थः ।

[हे आर्य्याः !] निजयशोभिः [illegible]
[च] रक्षक इन्द्रः दुर्मतियुक्तानाम् [विरोधिनाम्]

परिवर्जने अग्रेऽग्रे (भवतु,) दुर्मतियुक्तानां विदारणे [अग्रेऽग्रे भवतु,] या [शक्तिः] अस्मान् प्रति प्राप्तुं राक्षसैः[प्रेरिता] सा स्वयं [तान् एव]हिंसितुम् [निवर्तेत,] [सा] हताएव भवेत्. [अस्मान्] न प्राप्नोतु, प्रक्षिप्ता [सा] शक्तिः (अस्मान) न प्राप्नोतु ॥ ८ ॥

भावार्थः ।

[हे आर्य्यो!] अपने यशोंके द्वारा तुम्हारे [और] हमारे रक्षक इन्द्र खोटी बुद्धि वाले [विरोधियों] के दूर हटाने में आगे आगे [हों,] खोटी बुद्धि वालों के चीर डालने में (आगे आगे हों,) जो (बरछी) हमारी-ओर आने के लिये राक्षसों ने फेंकाई है)वह स्वयं(उन हो को)मारने के लिये(लौटे,)हमारे पास न पहुंचे,फेंकी हुई(वह) शक्ति (हमारे पास) न पहुंचे ॥ ८ ॥

इन्द्रो देवता, अतिशक्वरीछन्दः १०।८।८।८।७।११।८

त्वं न॑ इन्द्र रा॒या परी॑णसा या॒हि प॒थाँ अ॑ने॒हसा॑ पु॒रो या॑ह्यर॒क्षसा॑। सच॑स्व नः परा॒क आ सच॑स्वास्तमी॒क आ।

पाह्निनोदूरादारादभिष्टिभिः सदा
पाह्यभिष्टिभिः ॥ ९ ॥

त्वम्	त्वम्	तू
नः	अस्माकम्	हमारे
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
राया	धनेन सह	धन के साथ
परीणसा	बहुना (निघं०३।१)	बहुत के साथ
याहि	प्राप्नुहि	प्राप्त हो
पथा	मार्गेण	मार्ग से
अनेहसा	विघ्नरहितेन	निर्विघ्न से
पुरः	अग्रतः	आगे

याहि	प्राप्नुहि	प्राप्त हो
अरक्षसा	राक्षसरहितेन	राक्षसोंसे रहित हुए २ से
सचस्व	आ + सचस्व, सह[illegible]: ।	साथ रहो
नः	अस्मान्	हम को
पराके	दूरे (निघं० ३।२६)	दूर में
आ	+आ	–
सचस्व	आ+सचस्व, सहतिष्ठ	साथ ठैरो
अस्तमऽईके	समीपे (निघं० २।१६)	समीप में
आ	+ आ	–
पाहि	पाहि	पालन करो
नः	अस्मान्	हम को

दूरात्	दूरात्	दूर से
आरात्	समीपात् (अव्ययम्)	समीप से
अभिष्टि-ऽभिः	रक्षाभिः	सहायताओं से
सदा	सदा	सदा
पाहि	पाहि	पालन करो
अभिष्टि-ऽभिः	रक्षाभिः	सहायताओं से

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र ! त्वमस्मान् बहुनाधनेन विघ्नरहितेन मार्गेण प्राप्नुहि, राक्षसरहितेन मार्गेण अग्रतः प्राप्नुहि, दूरे (सन्) अस्माभिः सह वर्तस्व, समीपे (सन्) (अस्माभिः)सह तिष्ठ, अस्मान् दूरान् समीपात् (च स्व-)रक्षाभिः पाहि, सदा रक्षाभिः पाहि ॥ ९ ॥

भावार्थः।

हे इन्द्र! आप हमको बहुत धन के साथ निर्विघ्न मार्ग से प्राप्त हों, राक्षस रहित मार्ग से सामने (आकर) प्राप्त हों, आप दूर होने पर हमारे साथ रहें, (और) समीप होने पर साथ ठैरें, आप दूर से (और) समीप से (अपनी) रक्षाओं द्वारा हमारा पालन करें, सदा रक्षाओं के द्वारा पालन करें ॥ ९ ॥

इन्द्रोदेवता, निचृदत्यष्टिश्छन्दः।११।१२।८।८।८।१२।८

त्वंनइन्द्ररायातरूषसोग्रंचित्त्वा महिमासक्षदवसे महेमित्रंनावसे। ओजिष्ठत्रातरविता रथंकञ्चिदमर्त्य। अन्यमस्मद्रिरिषेःकञ्चिदद्रिवो रिरिक्षन्तंचिदद्रिवः ॥ १० ॥

त्वम्	त्वम्	तू

नः	अस्मान	हम को
इन्द्र	हे इन्द्र!	हे इन्द्र
राया	धनेन	धन से
तरुषसा	तारयित्रा (निपातनात्साधुः)	तारने वाले से
उग्रम्	उग्रम्	उग्र को
चित्	खलु	सचमुच
त्वा	त्वाम्	तुझ को
महिमा	बलम् (आ०को०)	बल
सक्षत्	प्राप्नोतु (सक्षतिर्गतिकर्म्मा निघं० २।१४, लडर्थेऽडभावः)	प्राप्त हो
श्रवसे	यशोऽर्थम् (आ० को०)	यश के लिये

म॒हे	महते	महान् के लिये
मि॒त्रम्	मित्रम्	मित्र
न॒	इव	की न्याईं
अव॑से	रक्षणार्थम्	रक्षा के लिये
ओजि॑ष्ठ	हे वलवत्तम !	हे सब से अधिक वल वाले
त्रात॑:	हे पालयितः !	हे पालने वाले
अवि॑त:०	हे रक्षक !	हे रक्षक
रथ॑म्	रथोपलक्षितं वीरम्	वीर को
कम्	कम् + चित्, प्रत्येकम्	प्रत्येक को
चि॒त्	+ चित्	–
अम॒र्त्य॒	हे मरणरहित !	हे मरण से रहित

अन्यम्	अन्यम्	दूसरे को
अस्मत्	अस्मत्तः	हम से
रिरिषेः	पीडय (रिषहिंसायां लिङिविकरणस्य श्लुश्छान्दसः)	पीड़ा दो
कम्	कम् + चित्	किसी को
चित्	+ चित्	–
अद्रिऽवः	हे वज्रिन् !	हे वज्रधारी
रिरिक्षन्तम्	पीडयितुमिच्छन्तम् (सनि कित्त्वाद् गुणाभावः)	पीड़ा देने की इच्छा करते हुए को
चित्	खलु	सच मुच
अद्रिऽवः	हे वज्रिन् !	हे वज्रधारी

संस्कृतार्थः॥

हे बलवत्तम! पालयितः! मरणरहित! इन्द्र! त्वमस्मान् तारयित्रा धनेन (प्राप्नुहि,) उग्रं त्वां मित्रमिव यशोऽर्थं बलं प्राप्नोतु, महते यशसे (बलं

प्राप्नोतु), हे प्रत्येकं वीरं रक्षितः! वज्रिन्! अस्मत्तो-ऽन्यं कञ्चित् पीडय! हे वज्रिन्! (अस्मान्) पीड-यितुमिच्छन्तं खलु (पीडय)॥ १०॥

भाषार्थः।

हे सब से अधिक बल वाले! पालने वाले! मरण से रहित! इन्द्र! आप हमें तारने वाले धन के साथ (प्राप्त हों,) उग्ररूप आपको मित्र की न्याईं यश के लिये बल प्राप्त हो, बड़े यश के लिये (बल प्राप्त हो) हे प्रत्येक वीर के रक्षक! वज्रधारी! हमसे दूसरे किसी को पीडित करो, हे वज्री! जो (हमको) पीड़ा देने की इच्छा करता है सचमुच उस को (पीडित करो)॥ १०॥

इन्द्रोदेवता, स्वराडत्यष्टिश्छन्दः॥१०।११।७।८।८।१२।१०

प्राह्विनइन्द्रसुष्टुतस्त्रिधो वयाता-
सदमिद्दुर्म्मतीनां देवःसन्दुर्म्मती
नाम्। हन्तापापस्यरक्षसस्त्राताविप्र-
स्य मावतः। अधाहित्वाजनिताजी-

जनदसो रच्तोहणं त्वाजीजनदसो ।११।

पाहि	पाहि	रक्षा करो
नः	अस्मान्	हम को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
सुऽस्तुत	हे सुष्टुत !	हे भली प्रकार से स्तुति किये गए
स्त्रिधः	पीडातः	पीडा से
अवऽयाता	अधः प्रापयिता (अन्तर्भावितण्यर्थः)	नीचे लेजानेवाला
सदम्	सदा	सदा
इत्	एव	ही
दुःऽमतीनाम्	पापबुद्धीनाम्	पापबुद्धि वालों के
देवः	देवः	देव

सन्	सन्	हुआ २
दुःमतीनाम्	पापबुद्धीनाम्	पापबुद्धि वालों के
हन्ता	हन्ता	नाश करने वाला
पापस्य	पापिनः	पापी के
रक्षसः	राक्षसस्य	राक्षस के
त्राता	रक्षिता	रक्षा करने वाला
विप्रस्य	स्तोतुः	स्तुतिकरनेवालेकी
माऽवतः	मादृशस्य	मुझ सरीखे की
अध	अतः (सा० भा०)	इस लिये
हि	एव	ही
त्वा	त्वाम्	तुझ को

जनिता	पिता	पिता ने
जीजनत्	उत्पादितवान् (अडभावः)	उत्पन्न किया है
वसो०	हे धनवन्!	हे धन वाले
रक्षःऽहनम्	राक्षसानांहन्तारम्	राक्षसों के मारने वाले को
त्वा	त्वाम्	तुझ को
जीजनत्	उत्पादितवान् (,,)	उत्पन्न किया है
वसो०	हे धनवन्!	हे धन वाले

संस्कृतार्थः ।,

हे सुष्टुत ! इन्द्र ! सदैव पापवुद्धीन् अधः प्रापयिता, देवःसन् पापवुद्धीन् अधः प्रापयिता पापिनोराक्षसस्य हन्ता मादृशस्य स्तोतुस्त्राता (च त्वम्)अस्मान् पीडातः पाहि,हे धनवन्! अतएव पिता त्वामुत्पादितवान्,हे धनवन्!राक्षसानां हन्तारं त्वामुत्पादितवान् ।,११ ।

भाषार्थः ।

हे भली प्रकार से स्तुति किये गए! इन्द्र! सदा पाप बुद्धि वालों को नीचे ले जाने वाले, देवता होकर पापबुद्धि वालों को (नीचे ले जाने वाले,)पापी राक्षसों के नाश करने वाले (और) मुझ सरीखे स्तोता की रक्षा करने वाले आप हमें पीडा से बचावें, हे धन वाले ! इसी लिये पिता ने आपको उत्पन्न किया है, हे धनवान ! राक्षसों के मारने वाले आप को उत्पन्न किया है॥ ११ ॥

इत्येकोनत्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ० मं० १ सू० १३० ।

अग्निर्देवता, परुच्छेपऋषिः ।

विनियोग :-

१-१०। एतत्सूक्तं पृष्ठ्यषडहस्य पष्ठेऽहनि निष्केवल्यम् (आ०८।१।१७

१। 'एन्द्र'-इत्येषा महाव्रते माध्यन्दिनसवने ब्राह्मणाच्छंसिनोऽनुरूपतृचेऽपि विनियुक्ता (ऐ०आ० ५।१।१७)

२। 'पिबासोममिन्द्र-'इत्येषा होतुः पुरस्ताद् विनियुक्ता, "षष्ठेऽहनि माध्यन्दिनसवने प्रस्थितयाज्यानां पुरस्तादन्याऋचःप्रक्षेपणीयाः" इत्युक्तेः।

सूक्त का भावार्थ ।

हे इन्द्र ! आप दूर से हमारे पास आओ, जैसे सत्पुरुषों के पालक अग्निदेव यज्ञों में आते हैं और जैसे सत्पुरुषों के पालक राजा किसी के घर में आते हैं, हम सोम को निचोड़ कर हवियों को लिये हुए इकट्ठे मिलकर आप को बल की प्राप्ति के लिये बुलाते हैं, जैसे पुत्र पिता को बुलाते हैं, वैसे पूज्य आप को हम बल की प्राप्ति के लिये बुलाते हैं ।१। हे इन्द्र ! आप पत्थरों से निचोड़े हुए सोम को पीवें, जैसे मेघ से सींचे हुए तलाबों को बैल पीता है, अत्यन्त प्यासा बैल पीता है, यह सोम आप के लिये अत्यन्त बलकारक पान हो, मदकारी और कान्ति के देने वाला हो, आप को घोड़े सूर्य की न्याईं लावें, जैसे सब दिन सूर्य्य को लाते हैं ।२। पर्वत में छिपे हुए निधि को जो गुफा में रक्खा हुआ था जैसे पक्षी का अण्डा पत्थरों के बीच में छिपा रहता है ऐसे सीमारहित पत्थरों में छिपे हुए सूर्यके प्रकाशरूपी निधि को अङ्गिराओं में प्रधान इन्द्र आकाश में से निकाल कर लाए, जैसे कोई गौओं के गोष्ठ को प्राप्त करने की इच्छा करता है ऐसे वज्री इन्द्र ने छिपे हुए प्रकाश के गोष्ठ

को प्राप्त करके बलोंको खोल दिया,छिपे हुए बलों के द्वार को खोल दिया । ३ । इन्द्र ने वज्र को दोनों हाथों में दृढ़ पकड़ कर फैंकने के लिये ऐसा पैनाया है कि जिस से जल की सी पतली धार हो, हे इन्द्र ! आप तेज, बल, और सामर्थ्य से युक्त होकर वृत्र को ऐसे काटते हो जैसे बढई वन के वृक्षों को, ऐसे काटते हो जैसे कोई कुल्हाड़े से काटता है । ४ । हे इन्द्र ! आप ने नदियों को समुद्र में जाने के लिये सहज से रथों की न्याईं हांक दिया है जैसे बल की इच्छा से रथों को हांकते हैं,इस संगम से आगे इन उपकारी नदियों ने अपने क्षयरहित इकट्ठे धन को मिला दिया है,मानो ये मनुष्य के लिये सब धनों को देने वाली गौएं इकट्ठी हुई २ हैं, जैसे मनुष्य जातिके लिये सब धनों को देने वाली गौएं इकट्ठी होती हैं । ५ । हे मेधावी इन्द्र ! धन की इच्छा करने वाले मनुष्यों ने इस स्तोत्र को आपके लिये ऐसे बनाया है जैसे बुद्धिमान कारीगर रथ को बनाते हैं, आपको सिंगारने के लिये यह स्तोत्र बनाया है जैसे युद्ध में वेग वाले यशस्वी घोड़े को सिंगारते हैं, जैसे बल और धनों की प्राप्ति के लिये घोड़े को सिंगारते हैं, सब धनों की प्राप्ति के लिये सिंगारते हैं । ६ । हे नट ! इन्द्र ! आपने पूरु के लिये और परम भक्त दिवोदास के लिये शत्रुओं के नव्वे गढ़ों को तोड़ा है, हे नट ! आपने वज्र से गढ़ों को तोड़ा है, भयानक इन्द्र ने अपने बल के द्वारा अतिथिग्व को बडे बडे धन देते हुए शम्बर दस्यु को पर्वत से नीचे गिराया है, अपने बल द्वारा सब धनों को देते हुए नीचे गिराया है । ७ । सैंकड़ों रक्षाओं के साथ आकर इन्द्र ने अपने भक्त आर्य्य की युद्धों में सुरक्षा की है, सब युद्धों में रक्षा की है, इस दस्युभूमि में उच्च सभ्यता का प्रकाश फैलाने

२ सूर्य्य का प्रकाश ही इस पृथिवी पर सब बलों का उत्पादक है ।

के निमित्त किये हुए युद्धों में खूब रक्षा की है, मतहीन दस्युओं को खब दंड देते हुए काले चमड़े* को मनु की सन्तान के अधीन किया है, वह अत्यन्त लोभी दस्युओं को जलाते हुए की न्याई नाश करते हैं, दुःखदाई दस्युजाति का अत्यन्त नाश करते हैं। ।८। सूर्य्य ने उदय होकर बल से प्रकाश की परिधि को बढ़ाया है, वह लाली के होते ही असुरों की वाणी को हर लेते हैं, ईशन करते हुए सब ओर से हरलेते हैं, हे इन्द्र ! आप जो प्रेम करते हुए रक्षा के लिये दूर से आए हो, वह शीघ्रता करने वाले आप मनुष्य मित्र की न्याई संपूर्ण सुखों के देने वाले हो, सब दिनों शीघ्रता करते हुए की न्याई सुखों के देने वाले हो ।९। हे वीरों के कर्म करने वाले ! गढ़ों के तोड़ने वाले ! इन्द्र ! आप हम को नए स्तोत्र सुझा कर और हम से शुभ कर्म करवा कर अपनी रक्षाओं से हमारा पालन करो, और दिवोदास के वंश में उत्पन्न हुए जो हम हैं उन हम से स्तुति किये जाकर रूप बढ़ो जैसे दिन के प्रकाश से आकाश बढ़ता है ॥ १० ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

एन्द्र॑ याह्युप॑ नः परा॒वतो॒ नाय-

मच्छा॑ वि॒दथा॑नीव॒ सत्प॑ति॒ रस्तं॑ रा-

जेव॒ सत्प॑तिः । हवा॑महे त्वा व॒यं प्र-

---

*काले चमड़े से काले रङ्ग वाली दस्युजाति अभिप्रेत है।

यस्वन्तः सुतेसचा। पुत्रासोनपित-
रंवाजसातये मंहिष्ठंवाजसातये ॥१॥

आ	आ +	—
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
याहि	आ+याहि	आओ
उप	प्रति	की ओर
नः	अस्मान्	हम को
पराऽवतः	दूरदेशात् (निघं० ३।२६)	दूरदेश से
न	यथा	जैसे
अयम्	अयम्	यह
अच्छ	प्रति	की ओर

विदथानि-ऽइव	यजनस्थानानीव (निघं०।३।१७)	यज्ञ के स्थानों को जैसे
सत्ऽपतिः	सतां पालकः	सज्जनों के पालने वाला
अस्तम्	गृहम् (निघं०।३।४)	घर को
राजाऽइव	राजेव	राजा की न्याईं
सत्ऽपतिः	सतांपालकः	सज्जनोंके पालने वाला
हवामहे	आह्वयामः	बुलाते हैं
त्वा	त्वाम्	तुझ को
वयम्	वयम्	हम
प्रयस्वन्तः	(हवीरूपेण)अन्नेन युक्ताः	(हवीरूप) अन्न से युक्त
सुते	(सोमे)निष्पीडिते	[सोमके] निचोड़े जाने पर

सचा	सहभूत्वा (यास्कः)	मिल कर
पचासः	पुत्राः (जसोऽसुगागमः)	पुत्र
न	इव	जैसे
पितरम्	पितरम्	पिता को
वाजऽसातये	वलस्य प्राप्तये	बल की प्राप्ति के लिये
मंहिष्ठम्	पूजनीयम्	पूजनीय को
वाजऽसातये	वलस्य प्राप्तये	बलकी प्राप्ति के लिये

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र! (त्वम्) दूरादिवाऽस्मान्प्रत्यागच्छ यथा सतांपतिरयम् (अग्निः) यजनस्थानानि यथा (च) सतांपतीराजा (कस्यचित्) गृहम् (आगच्छति,) (सोमे) निष्पीडिते (हवीरूपेण)अन्नेनयुक्ता वयं सहभूत्वा त्वां वलस्य प्राप्तये आह्वयामः यथा पुत्राःपितरम् (आह्वयन्ति,) पूज्यम् (त्वाम्) वलस्य प्राप्तये (आह्वयामः) ॥ १ ॥

भावार्थः।

हे इन्द्र ! आप दूरसे मानो हमारे पास आओ जैसे सज्जनों के पालक यह (अग्नि) यजनके स्थानों की ओर (आते हैं और) जैसे सज्जनों के पालक राजा (किसी के) घर में (आते हैं,) (सोम के) निचोड़े जाने पर (हवीरूप) अन्न से युक्त हम इकट्ठे होकर आपको बलकी प्राप्ति के लिये बुलाते हैं, जैसे पुत्र पिता को (बुलाते हैं,) (वैसे) पूज्य आप को (हम) बल की प्राप्ति के लिये बुलाते हैं ॥ १ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

पिबासोममिन्द्रसुवानमद्रिभिः
कोशेनसिक्तमवतंनवंसग स्तातृषा-
णोनवंसगः। मदायहर्य्यतायते तु-
विष्टमायधायसे। आत्वायच्छन्तु
हरितोनसूर्य्यं महाविश्वेवसूर्य्यम् ।२।

पिब	पिब	पीओ
सोमम्	सोमम्	सोम को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
सुवानम्	सूयमानम् (कर्मणिकर्तृप्रत्ययः)	निचोडे जाते हुए को
अद्रिऽभिः	ग्रावभिः	पत्थरों से
कोशेन	मेघेन (निघं०१।१०)	मेघ के द्वारा
सिक्तम्	सिक्तम्	सींचे हुए को
अवतम्	जलाशयम् (आ०को०)	तलाओ को
न	इव	जैसे
वंसगः	बलीवर्दः	बैल
ततृषाणः	अतितृषितःसन्	अत्यन्त प्यासा हुआ २

न	इव	जैसे
वंसगः	बलीवर्दः	बैल
मदाय	मदाय	मद के लिये
हर्यताय	कान्तये (हर्यतिःकान्तिकर्मा, निघं०२।८)	कान्ति के लिये
ते	तव	तेरे
तुविःऽतमाय	बलवत्तमाय	अत्यन्त बलवान् के लिये
धायसे	पानाय (धेट्पाने छान्दसोऽसुन्)	पान करने के लिये
आ	आ +	–
त्वा	त्वाम्	तुझ को
यच्छन्तु	आ+यच्छन्तु, आवहन्त	लावें

हृरितः	अश्वाः	घोड़े
न	इव	जैसे
सूर्यम्	सूर्य्यम्	सूर्य्य को
अह्वा	अहानि (शेर्लोपः)	दिन
विश्वाऽइव	सर्वाणीव (,,)	सबकी न्याईं
सूर्यम्	सूर्य्यम्	सूर्य्य को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र! (त्वम्) ग्रावभिःसूयमानं सोमं पिब, यथा मेघेन सिक्तं जलाशयं वलीवर्दः (पिबति,) अतीव तृ-पितःबलीवर्दः(पिबति, स सोमः)तव मदाय,कान्तये, बलवत्तमाय पानाय (च भवतु) त्वामश्वा सूर्य्यमिव आवहन्तु यथा सर्वाणिदिनानि सूर्य्यम् (आवहन्ति)।२

भाषार्थः ।

हे इन्द्र ! आप पत्थरों से निचोड़े जाते हुए सोम को पीवें जैसे मेघ से सींचे हुए तलाओं को

बैल पीता है, अत्यन्त प्यासा बैल पीता है, (वह सोम) आप के मद के लिये, कान्तिके लिये और अत्यन्त बलकारक पानके लिये (हो,) आपको घोड़े सूर्य्य की न्याई लावें जैसे सब दिन सूर्य्य को (लाते हैं) ॥२॥

इन्द्रोदेवता, निचृदत्यष्टिश्छन्दः।१२।११।८।८।८।१२।८

अविन्दद्दिवो निहितं गुहा निधिं वेर्न गर्भं परिवीतमश्मन्यनन्ते अन्तरश्मनि। व्रजं वज्री गवामिव सिषासन्नङ्गिरस्तमः। अपावृणोदिष इन्द्रः परीवृता द्वार इषः परीवृताः। ३।

अविन्दत्	अन्विष्यलब्धवान्	ढूंढकर प्राप्तकिया
दिवः	दिवः	द्यौ से

निऽहितम्	स्थापितम्	रक्खी हुई को
गुहा	गुहायाम् (सप्तम्यालुक्)	गुफा में
निऽधिम्	निधिम्	निधि को
वेः	पक्षिणः	पक्षी के
न	इव	की न्याईं
गर्भम्	अण्डम्	अण्डे को
परिऽवीतम्	परिवेष्टितम् (वीगतौ)	चारों ओर से ढके हुए को
अश्मनि	अश्मनि	पत्थर में
अनन्ते	सीमारहिते	सीमा से रहित में
अन्तः	मध्ये	बीच
अश्मनि	पर्वते	पर्वत में

व्रजम्	गोष्ठम्	गोष्ठ को
वज्री	वज्रधारी	वज्रधारी
गवाम्ऽइव	गवामिव	गौओं के जैसे
सिसासन्	प्राप्तुमिच्छन् (पण सम्भक्तौ)	प्राप्त करने की इच्छा करता हुआ
अङ्गिरःऽतमः	अङ्गिरस्सु मुख्यः	अंगिराओं में मुख्य
अप	अप +	—
अवृणोत्	अप+अवृणोत्, अपावृतवान्	खोल दिया है
दुरः	बलानि	बलों को
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र ने
परिऽवृताः	परिवेष्टितानि	ढके हुओं को
द्वारः	द्वाराणि	द्वारों को

इषः	अन्नस्य	अन्न के
परिऽवृताः	परिवेष्टितानि	ढके हुओं को

संस्कृतार्थः।

अङ्गिरस्सु मुख्य इन्द्रः पक्षिणः अण्डमिव अश्मनि परिवेष्टितं सीमारहितपर्वतमध्ये (परिवेष्टितम्) गुहायां निहितं निधिं दिवोऽन्विष्य लब्धवान्, वज्री (सः) गवांगोष्ठमिव (ज्योतिर्गोष्ठम्) प्राप्तुमिच्छन् परिवेष्टितानि वलानि अपावृतवान्, परिवेष्टितानि वलस्य द्वाराणि अपावृतवान् ॥ ३ ॥

भावार्थः।

अंगिराओं में मुख्य इन्द्र ने पक्षी के अंडे की न्याईं पत्थर में चारों ओर से ढके हुए सीमारहित पर्वत में (ढके हुए) गुफा में रखे हुए खजाने को द्यौ से ढूंढकर प्राप्त किया, (उस) वज्री ने गौओं के गोष्ठ की न्याईं (प्रकाश के गोष्ठ) को प्राप्त करने की इच्छा करते हुए ढके हुए वलों को खोल दिया, ढके हुए वल के द्वारों को खोल दिया ॥ ३ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

दाद्हाणोवज्रमिन्द्रोगभस्त्योः

क्षद्मेवतिग्ममसनायसंश्य दहिह-
त्यायसंश्यत्।संविव्यानओजसा श-
वोभिरिन्द्रमज्मना।तष्टेववृक्षंवनि-
नोनिवृश्चसि परश्वेवनिवृश्चसि ॥४॥

दद्वानः	दृढं गृह्णन् (ददवृद्धौ, लिटः कानच्)	दृढ पकड़ता हुआ
वज्रम्	वज्रम्	वज्र को
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र ने
गभस्त्योः	बाह्वोः (निघं०२।४)	दोनों भुजाओं में
क्षद्मऽइव	उदकमिव (निघं० १।१२)	जल की न्याईं
तिग्मम्	तीक्ष्णंयथास्यात्तथा	जैसे पैना हो

असनाय	क्षेपणाय	फैंकने के लिये
सम्	सम्+	–
श्यत्	सम्+श्यत्,सम्यक् तनूकृतवान् (शोतनूकरणे,ओतःश्यनीत्योकारलोपोऽडभावश्च)	खूब पैनाया है
अहिऽहत्याय	वृत्रस्यहननाय (लिङ्गव्यत्ययः)	वृत्र के मारने के लिये
सम्	सम्+	–
श्यत्	सम् +श्यत्, सम्यक् तनूकृतवान्	खूब पैनाया है
सम्ऽविव्यानः	संयुक्तःसन् (वीगतौ लिटःकानच्)	मिला हुआ
ओजसा	तेजसा	तेज से

शवःऽभिः	शक्तिभिः	शक्तियों से
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
मज्मना	बलेन	बल से.
तष्टाऽइव	तष्टेव	जैसे तक्षक
वृक्षम्	वृक्षम्	वृक्ष को
वनिनः	वनसम्बन्धिनः	वनों के
नि	नि+	–
वृश्चसि	नि+ वृश्चसि, नितरां छिनत्सि (व्रश्च छेदने)	खूब काटते हो
परश्वाऽइव	परशुनेव	कुल्हाड़े से मानो
नि	नि+	–
वृश्चसि	नि+वृश्चसि नितरां छिनत्सि	खूब काटते हो

संस्कृतार्थः ।

इन्द्रः वज्रं बाह्वोः दृढंधारयन् क्षेपणार्थं उदकमिवतीक्ष्णीकर्तुं सम्यक्तनूकृतवान्, वृत्रस्यहननाऽर्थं सम्यक्तनूकृतवान्,हे इन्द्र! (त्वम्)तेजसा शक्तिभिर्बलेन (च) संयुक्तःसन् तष्टावनवृक्षमिव (तं वृत्रम्) नितरांछिनत्सि, परशुना इव छिनत्सि ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

इन्द्रने वज्र को दोनों भुजाओं में दृढ पकड़ कर फैंकने के लिये जलकी न्याईं धार देने के लिये खूब पैनाया है, वृत्रके मारने के लिये खूब पैनाया है, हे इन्द्र!आप तेजसे शक्तियोंसे(और)बलसे युक्त होकर उस(वृत्र)को खूब काटते हो जैसे तक्षक (बढ़ई) वन के वृक्षों को (काटता है,आप उस वृत्रको) ऐसे काटते हो मानो कुल्हाड़े से (कोईं काटता है) ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।१२।८

त्वंवृथानद्यइन्द्रसर्तवे च्छास-

तवोजन समानमर्थमक्षि-

तम् । धेनूरिवमनवेविश्वदोहसो ज-
नायविश्वदोहसः ॥ ५ ॥

त्वम्	त्वम्	तू ने
वृथा	अनायासेन	सहज से
नद्यः	नदीः (द्वितीयार्थे प्रथमा)	नदियों को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हेइन्द्र
सर्तवे	गन्तुम्	चलने के लिये
अच्छ	प्रति	की ओर
समुद्रम्	समुद्रम्	समुद्र को
असृजः	सृष्टवानसि	छोड़ा है
रथान्ऽइव	रथानिव	जैसे रथों को

वाजऽयतः	वलमिच्छतः	वल की इच्छा करने वालों को
रथान्ऽइव	रथानिव	जैसे रथों को
इतः	इतः	यहां से
ऊतीः	साहाय्यदात्र्यः (सुपामितिपूर्वसवर्ण-दीर्घः)	सहायता देने वालियों ने
अयुञ्जत	योजितवत्यः	मिलाया है
समानम्	समानम् (क्रियाविशेषणम)	इकट्ठे को
अर्थम्	धनम् (,,)	धन को
अक्षितम्	क्षयरहितम्	नाश न होने वाले को
धेनूःऽइव	गावइव	गौओं की न्याईं
मनवे	मनुष्याय	मनुष्य के लिये

विश्वऽदोहसः	सर्वार्थदोग्ध्र्यः	सम्पूर्ण धनों के देने वालीं
जनाय	मनुष्यजातये	मनुष्य जाति के लिये
विश्वऽदोहसः	सर्वार्थदोग्ध्र्यः	सम्पूर्ण धनों के देने वालीं

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! त्वं नदीः अनायासेन समुद्रं प्रति गन्तुं रथानिव विसृष्टवानसि, बलमिच्छतो रथानिव (विसृष्टवानसि,) साहाय्यदात्र्यः (एताः) क्षयरहितं समानंधनमितोऽग्रेयोजितवत्यः यथा सर्वार्थदोग्ध्र्यः गावोमनुष्याय, यथा सर्वार्थदोग्ध्र्यो मनुष्यजातये ।५।

भावार्थः ।

हे इन्द्र ! आपने सहज से नदियों को समुद्र की ओर जाने के लिये रथों की न्याईं छोड़ा है, बल चाहने वाले रथों की न्याईं (छोड़ा है) इन सहायता देने वालियों ने नाश न होने वाले समान धन को यहां से आगे मिलाया है जैसे मनुष्य के लिये सब धनों

को देने वाली गौएँ, मनुष्य जाति के लिये सब धनों को देने वाली (गौएँ) ॥ ५ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

इमांतेवाचंवसूयन्तआयवो रथंन धीरःस्वपाअतक्षिषुः सुम्नायत्वा-मतक्षिषुः। शुम्भन्तोजेन्यंयथा वाजे-षुविप्रवाजिनम्। अत्यमिवशवसेसा-तयेधना विश्वाधनानिसातये ॥ ६ ॥

इमाम्	इमाम्	इस को
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
वाचम्	वाणीम्	वाणी को

वसुऽयन्तः	धनं कामयमानाः	धन की कामना करते हुए
आयवः	मनुष्याः (निघं० २।३)	मनुष्यों ने
रथम्	रथम्	रथ को
न	इव	जैसे
धीरः	धीमन्तः (सुपामिति विभक्तेःसुः)	बुद्धिमान्
सुऽअपाः	कर्मकुशलः (अपइति कर्मनाम निघं० २।१ सुपामिति विभक्तेः सुः)	कारीगर
अतक्षिषुः	निर्मितवन्तः	बनाया है
सुम्नाय	सुखाय (निघं० ३।६)	सुख के लिये
त्वाम्	त्वाम्	तुझ को
अतक्षिषुः	निर्मितवन्तः	बनाया है

शुम्भन्तः	अलङ्कुर्वन्तः	सिंगारते हुए
जेन्यम्	जयशीलम्	जीतने वाले को
यथा	यथा	जैसे
वाजेषु	सङ्ग्रामेषु (निघं०२।७)	युद्धों में
विप्र	हे मेधाविन् !	हे विशेषबुद्धिवाले
वाजिनम्	वेगवन्तम्	वेगवाले को
अत्यम्ऽइव	अश्वमिव	घोड़े को जैसे
शवसे	बलाय	बल के लिये
सातये	प्राप्तये	प्राप्त के लिये
धना	धनानि (शेर्लोपः)	धनों को
विश्वा	सर्वाणि (,,)	सब को

धनानि	धनानि	धनों को
सातये	प्राप्तये	प्राप्ति के लिये

संस्कृतार्थः।

हे मेधाविन्! (इन्द्र!) धनंकामयमानामनुष्याः तुभ्यमिमाम् (स्तोत्ररूपाम्) वाचं निर्मितवन्तः यथा बुद्धिमन्तः कर्मकुशलाः (तक्षकाः) रथम् (निर्मिमते) त्वामलङ्कुर्वन्तः (सन्तः) सुखाय (इदंस्तोत्रं निर्मितवन्तः) यथा संग्रामेषु वेगवन्तः जयशीलम् (चाऽश्वमलङ्कुर्वन्ति) यथा बलाय धनप्राप्तये (च अलङ्कुर्वन्ति) सर्वाणि धनानि प्राप्तुम् (अलंकुर्वन्ति)॥६॥

भापार्थः।

हे मेधावी (इन्द्र!) धन की इच्छा करने वाले मनुष्यों ने आपके लिये इस (स्तोत्ररूप) वचन को बनाया है जैसे बुद्धिमान कारीगर रथ को (बनाते हैं) आप को सिंगारते हुए सुख के लिये (यह स्तोत्र बनाया है) जैसे युद्धमें वेगवाले (और) जयशील (घोड़े) को (सिगारते हैं) जैसे बल (और) धनों की प्राप्ति के लिये घोड़े को (सिगारते हैं) सम्पूर्ण धनों की प्राप्ति के लिये (सिंगारते हैं)॥६॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

भिनत्पुरोनवतिमिन्द्रपूरवे दिवो-
दासायमहिदाशुषेनृतो वज्रेणदाशु-
षेनृतो । अतिथिग्वायशम्बरं गिरेरु-
ग्रोअवाभरत् । महोधनानिदयमान-
ओजसा विश्वाधनान्योजसा ॥ ७ ॥

भिनत्	विदारितवानसि (अडभावोवचन व्यत्ययश्च)	तूने तोड़ा है
पुरः	पुराणि	गढ़ों को
नवतिम्	नवतिम्	नव्वे को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र !
पूरवे	पूरवे	पूरु के लिये

दिवःऽ दासाय	दिवोदासाय	दिवोदास के लिये
महि	महते (चतुर्थ्यर्थे सप्तमी)	महान के लिये
दाशुषे	भक्ताय	भक्त के लिये
नृतो०	हे नर्तक !	हे नट
वज्रेण	वज्रेण	वज्र से
दाशुषे	भक्ताय	भक्त के लिये
नृतो०	हे नर्तक !	हे नट
अतिथिऽ ग्वाय	अतिथिग्वाय	अतिथिग्व के लिये
शम्बरम्	शम्बरम्	शम्बर को
गिरेः	पर्वतात्	पर्वत से

उग्रः	उग्रः	उग्र ने
अव	अव+	—
अभरत्	अव+अभरत्, अधःपातितवान्	नीचे गिराया है
महः	महान्ति	महानों को
धनानि	धनानि	धनों को
दयमानः	ददानः (दयदाने)	देता हुआ
ओजसा	तेजसा	तेज से
विश्वा	सर्वाणि (शेर्लोपः)	सब को
धनानि	धनानि	धनों को
ओजसा	बलेन	बल से

संस्कृतार्थः ।

हे नर्तक ! इन्द्र ! (त्वम्) पूरवे, महते भकाय दिवो

ऋ० सं० ७५-७६ अङ्कयोः शुद्धचशुद्धि पत्रम् ।

पृ०	पं०	अशुद्धम्	शुद्धम्
३३९४	१२	सS	सुS
३३९८	७	घोरणा	घोराणा
३३९९	१३	घतस्य	घृतस्य
३४०९	१	सुम्रतः	सुम्रताः
३४१३	११	य	यः
३४१७	७	कक्षा	कक्षी
३४१८	११	अस्यः	अस्युः
३४२२	१३	मन	मनु
३४२२	१४	सबन्ध	सुबन्ध
३४२२	.१६	पजाः	पज्ञाः
३४२४	२	जिन्होंने	जो
३४२५	१५	परS	परिS
३४२६	६	ह्यम्	मह्यम्
३४२८	१४	सम्यक	सभ्यक्
३४३७	२	जूतये	जूतये
३४३८	१	शक्र	शुक्र
३४४३	१५	का	की
३४४४	५	पुरूणि	पुरूणि
३४४४	१२	अन+	अनु+
३४४५	१०	ह्विव	हवि
३४४८	१०	सदर्शS	सुदर्शS
३४४९	१२	आयवे	आयुवे
३४५२	१५	शमेन	शुमेन
३४५४	१३	(णलोप)	(णेर्लोपः)
३४५५	१	ह्वषो	ह्वषी
३४६०	१०	भुजे	भुजे
३४६३	४	देवेष	देवेषु
३४६४	१२	त्वम	त्वम्
३४६६	८	उत	उत
३४६७	१३	सेवितम्	सेवितुम्
३४६७	१२	देवान	देवान्
३४६७	१४	अतो	अतो
३४६८	१०	ग्नये।	ग्नये।
३४७०	११	(गुड	(गुड्
३४७४	३	महि	महि
३४७५	१२	(आहार)	(आहर)
३४८०	६	यणेय	णोग्य
३४८३	७	मपा	मुपा
३४८४	११	त्वम)	त्वम्)
३४८५	२	SSक्	SSकु

अंक ७९-८०] [मार्गशीर्ष-पौष १९६९

ऋग्वेद संहिता

(वैदिकजीवनव्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलताननिवासी पं० शङ्करदत्तशास्त्री की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने सम्पादन किया।

लाहौर

पञ्जाब एकानोमीकल यन्त्रालय में प्रिण्टर लाला सालमन के अधिकार से छपा।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २)

पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)

८० अंकों का मूल्य १४॥।/)

दासाय(च)नवतिम्(शत्रु-)पुराणि विदारितवानसि, हे नर्तक ! (त्वम्) भक्ताय वज्रेण (विदारितवानसि,) उग्रः (स इन्द्रः) तेजसा अतिथिग्वाय महान्ति धनानि ददानः (सन्) शम्बरं पर्वतादधःपातितवान्, तेजसा सर्वाणि धनानि (ददानःसन्नधःपातितवान्) ॥ ७ ॥

भावार्थः ।

हे नट ! इन्द्र ! आपने पूरुके लिये [और] बड़े भक्त दिवोदास के लिये [शत्रुओं के] नव्वे गढ़ों को तोड़ा है, हे नट ! अपने भक्तके लिये वज्र से (तोड़ा है) उसउग्र ने (अपने) तेज से अतिथिग्व को बड़े बड़े धन देते हुए शम्बर को पर्वत से नीचे गिराया है, ने सब धनों को (देते हुए नीचे गिराया है) ॥७

देवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

इन्द्रः समत्सु यजमानमार्यं प्रा-

वद्विश्वेषु शतमूतिराजिषु स्वर्मीळ्-

हेष्वाजिषु । मनवे शासदव्रतान् त्वचं

कृष्णामरन्धयत्। दक्षन्नविश्वं ततृषाणमोषति न्यर्शसानमोषति ॥८॥

इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र ने
समत्ऽसु	सङ्ग्रामेषु (निघं० २।१७)	युद्धों में
यजमानम्	यजमानम्	यजन करते हुए को
आर्य्यम्	आर्य्यम्	आर्य को
प्र	प्र+	–
आवत्	प्र+आवत्, प्रकर्षेणरक्षितवान्	खूब रक्षा की है
विश्वेषु	सर्वेषु	सब में
शतम्ऽऊतिः	शतरक्षोपेतः	सैकड़ों रक्षाओं से युक्त
आजिषु	सङ्ग्रामेषु	युद्धों में

स्वः मीळ्हेषु	ज्योतिर्निमित्तेषु सङ्ग्रामेषु	प्रकाश के निमित्त युद्धों में
आजिषु	सङ्ग्रामेषु	युद्धों में
मनवे	मनोः प्रजायै	मनु की प्रजा के लिये
शासत्	शासत्	दंड देता हुआ
अव्रतान्	व्रतरहितान्	व्रतहीनों को
त्वचम्	त्वचम्	त्वचा को
कृष्णाम्	कृष्णाम्	काली को
अरन्धयत्	आयत्तीकृतवान्	वस में किया है
धक्षत्	दहन्	जलाता हुआ
न	इव,	मानो
विश्वम्	सर्वम्	सब को

ततृषाणाम्	अतिलोभिनम्	अत्यन्त लोभी को
ओषति	नाशयति (आ० को०)	नाश करता है
नि	नि +	–
अर्शसानम्	दुःखदायिनम्	दुःख देने वाले को
ओषति	नि + ओषति, नितान्तं नाशयति	अत्यन्त नाश करता है

संस्कृतार्थः ।

शतरक्षोपेतइन्द्रः संग्रामेषु विश्वेषुसंग्रामेषु यजमानमार्य्यं प्रकर्षेण रक्षितवान्,ज्योतिर्निमित्तेषुसंग्रामेषु(प्ररक्षितवान्) व्रतरहितान् शासत् (सन्) कृष्णां त्वचं मनोःप्रजायै आयत्तीकृतवान्, (सः) सर्वमतिलोभिनम् (दस्युसमूहम्) दहन्निव नाशयति, दुःखदायिनम्(दस्युजातम्) नितान्तं नाशयति ॥८॥

भाषार्थः ।

सैकड़ों रक्षाओं से युक्त इन्द्र ने युद्धों में सब युद्धों में आर्य्य भक्त की खूब रक्षा की है, प्रकाश निमित्त युद्धों में (खूब रक्षा की है) व्रत हीनों को

दंड देते हुए काली त्वचा को मनु की सन्तान के अधीन किया है, वह सब अत्यन्त लोभी (दस्यु समूह को) जलाते हुए की न्याईं नाश करते हैं, दुःख देने वाली (दस्युजाति का) अत्यन्त नाश करते हैं ॥ ८॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

सूरश्चक्रंप्रवृहज्जातओजसा प्रपित्वेवाचमरुणोमुषायतीशानआमुषायति। उशनायत्परावतोऽजगन्नूतयेकवे।सुम्नानिविश्वामनुषेवतर्वेणि रहाविश्वेवतुर्वणिः ॥ ९ ॥

सूरः	सूर्य्यः]	सूर्य
चक्रम्	परिधिम्	घेरे को

प्र	प्र+	–
वृहत	प्र+वृहत्,प्रवर्धितवान्	बढ़ाया
जातः	उदितः(सन्)	उदय होकर
ओजसा	बलेन	बल से
प्रऽपित्वे	सामीप्ये (निघं० ३।२८)	निकट आने पर
वाचम्	वाचम्	वाणी को
अरुणः	अरुणतायाः (प्रत्ययलोपे सति विभक्तेः सुः)	लाली के
मुषायति	अपहरति (मुषस्तेये, अद्यावपि श्नायजादेशश्छान्दसः)	हरता है
ईशानः	ऐश्वर्य्यं दधानः	ऐश्वर्यवान्
आ	आ+	–
मुषायति	आ+मुषायति, सर्वतोऽपहरति	सब ओरसे हरता है

उशना	कामयमानः	कामना करता हुआ
यत्	यः (सुपामिति विभक्तेर्लुक्)	जो
पराऽवतः	दूरदेशात् (निघं०) ३।२६	दूर देश से
अजगन्	प्राप्तवानसि (गमेःलिपि शपः श्लुश्छान्दसः,हल्ङ्याब्लोपे'मोनोधातोः' इतिनत्वम)	प्राप्त हुए हो
ऊतये	रक्षणार्थम्	रक्षा के लिये
कवे	हे मेधाविन्!	हे विशेषबुद्धिवाले
सुम्नानि	सुखानि (निघं०३।६)	सुखों को
विश्वा	सर्वाणि (शेर्लोपः)	सब को
मनुषाऽइव	मनुष्य इव (विभक्तेरात्वम्)	मनुष्य की न्याईं

तुर्वणिः	त्वरायुक्तः (निघं० ४।३)	शीघ्रता से युक्त
अहा	अहानि (अत्यन्तसयोगे द्वितीया)	दिनों में
विश्वाऽइव	सर्वाणीव	सब में मानो
तुर्वणिः	त्वरायुक्तः	शीघ्रता से युक्त

संस्कृतार्थः ।

सूर्य्यउदितः (सन्) बलेन [प्रकाशस्य] परिधिं प्रवर्धितवान्,(सः) अरुणतायाः सामीप्ये (रक्षसाम्) वाचमपहरति, ईशानः (सन्) सर्वत अपहरति, हे मेधाविन्! (इन्द्र!) यः (त्वम्) कामयमानः (सन्) रक्षणार्थं दूरदेशात्प्राप्तवानसि (सः) त्वरमाणः (त्वम्) मनुष्य इव सर्वाणि सुखानि (ददासि,)सर्वाणि अहानि त्वरायुक्त इव (सुखानि ददासि) ॥ ९ ॥

भावार्थः ।

सूर्य्य ने उदय होकर बलद्वारा (प्रकाश की परिधि को बढ़ाया है (वह) लाली के आते ही (राक्षसों की) वाणी को हरते हैं, ईशन करते हुए सब ओर से हरते हैं, हे मेधावी इन्द्र ! आप जो प्रेम करते

हुए दूर से रक्षा के लिये आए हो, वह शीघ्रता करने वाले आप मनष्य (मित्र)की न्याईं सब सुखों को देते हो, सब दिनों शीघ्रता करते हुए की न्याईं (सुखों को) देते हो ॥९॥

इन्द्रोदेवता, निचृत्त्रिष्टुप्छन्दः ।११।१३।१०।११

स नो॒ नव्ये॑भिर्वृषकर्म॒न्नुक्थैः पुरां॑ दर्तः पा॒युभिः॑ पाहि श॒ग्मैः । दिवो॑दा॒सेभि॑रिन्द्र॒ स्तवा॑नो वावृधी॒था अहो॑भिरिव॒ द्यौः ॥ १० ॥

सः	सः	वह
नः	अस्मान्	हम को
नव्येभिः	नूतनैः	नयों से
वृषऽकर्म्मन्	हे वीरकर्मन् !	हे वीरता के काम करने वाले

उक्थैः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों से
पुराम्	पुराणाम्	गढ़ों के
दर्तः०	हे दारयितः !	हे तोड़ने वाले
पायुऽभिः	रक्षाभिः	सहायताओं से
पाहि	पाहि	रक्षा करो
शग्मैः	कर्मभिः (निघं०२।१)	कर्मों से
दिवःऽदासेभिः	दिवोदासवंशीयैः	दिवोदास-वंशियों से
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
स्तवानः	स्तूयमानः (कर्मणि कर्तृप्रत्ययः)	स्तुति किया जाता हुआ
ववृधीथाः	प्रवर्धस्व (वृधेर्लिङि शपः श्लुश्छान्दसः)	बढ़ो

अहोभिःऽइव	दिनैरिव	जैसे दिनों से
द्यौः	द्यौः	आकाश

संस्कृतार्थः ।

हे पुराणांदारयितः ! वीरकर्मन् ! इन्द्र ! सः (त्वम्) अस्मान् नूतनैः स्तोत्रैः कर्मभिः (स्व-) रक्षाभिः (च) पाहि, दिवोदासवंशीयैः [च] स्तूयमानः (सन्) दिनेराकाशइव प्रवर्धस्व ॥ १० ॥

भावार्थः ।

हे गढ़ों के तोड़ने वाले ! बीरता के काम करने वाले ! इन्द्र ! वह (आप) नए स्तोत्रों से, कर्मों से (और अपनी) सहायताओं से हमारी रक्षा करो (और) दिवोदासवंशियों से स्तुति किये जाकर खूब बढ़ो जैसे दिन से आकाश [बढ़ता है] ॥१०॥

इति त्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ॥

ऋ० मं० १ सू० १३१ ।

इन्द्रोदेवता परुच्छेपऋषिः ।

विनियोगः-

१-७। पृष्ठयस्य पष्ठेऽहनि माध्यन्दिनसवने आद्यास्तिस्रो मैत्रावरुणस्य, तृतीयाद्यास्तिस्रो ब्राह्मणाच्छसिनः, पञ्चम्याद्यास्तिस्रोऽच्छावाकस्य। (आ० ७। १। ४०) तत्रैवाऽहनि तस्मिन्नेव सवने प्रशास्तादीनां प्रस्थितयाज्याभ्यःपुरस्ताद् आदितः षड्ऋचः प्रक्षेपणीयाः (आ० ८। १।१४) 'इन्द्रायहि' इति तृचो महाव्रते निष्केवल्ये वैकल्पिकानुरूपद्वितीयः (ऐ०आ०५।१)

सूक्त का भावार्थ।

बलवान आकाश इन्द्र के सामने झुका है, यह विशाल पृथिवी जिस में बड़े २ चौड़े देश हैं इन्द्र के सामने झुकी है, चौड़े देशों के साथ प्रकाश की प्राप्ति के लिये झुकी है, सब देवताओं ने एकचित्त होकर इन्द्र को अगवैया बनाया है, इसलिये मनुष्यों के यज्ञ इन्द्रके लिये हों, मनुष्यों के दान इन्द्र के लिये हों ॥ १ ॥ हे इन्द्र ! सब मनुष्य यज्ञों में सब के साझे आप को ही वीर मानते हुए अलग अलग आपको प्राप्त होते हैं, प्रकाश की कामना करते हुए अलग अलग आप को प्राप्त होते हैं, उस नाव की न्याईं पार लंघाने वाले आपको यज्ञों से मानो चेत कराते हुए हम मनुष्य बलों का धुरंधर बनाते हैं,हम मनुष्य स्तोत्रों द्वारा इन्द्रको बलों का धुरंधर बनाते हैं ॥ २ ॥ हे इन्द्र ! रक्षा चाहने वाले स्त्री पुरुषों के जोड़े गौओं के झुंड की प्राप्ति के लिये हवि छोड़ते हुए आपको चारों ओर से घेरे हुए हैं, आपके पास जाते हुए और हवि को छोड़ते हुए चारों ओर से घेरे हुए हैं। हे इन्द्र ! जब दो जातियाँ गौओं की इच्छा करती

हुई और प्रकाश* की इच्छा करती हुई एक देश में इकट्ठी होती हैं तब आप साथ में रहने वाले अपने वीर्यवान वज्र को प्रकट करते हो, साथ में रहने वाले वज्र को प्रकट करते हो † ॥ ३ ॥ हे इन्द्र ! आप के इस पराक्रम को मनुष्य जानते हैं जो आपने शरद ऋतु में बनाए हुए गढ़ों को तोड़ा है, दस्युओं को दबाते हुए आपने गढ़ों को तोड़ा है, हे सब बलों के स्वामी ! आपने यज्ञ न करने वाले दस्यु को दण्ड दिया है और इस विशाल पृथिवी और इन बलों को आर्य्यभक्त के लिये हरण किया है, मदयुक्त होकर पृथिवी और जलों को हरण किया है ॥ ४ ॥ हे वीर ! जब २ आपने सोम के मद में भक्तों की रक्षा की है और जब २ आपने मित्रता चाहने वालों की रक्षा की है तब २ आपके इस वीर्य्य को मनुष्यों ने प्रख्यात किया है, आपने इन आर्य्यभक्तों को युद्ध में प्रवृत्त करने का यत्न किया है, इसीलिये इन्हों ने एक एक करके सब नदियों को ‡ जीत लिया है यश की इच्छा से जीत लिया है ॥ ५ ॥ आज की प्रभात में इन्द्र हमपर अवश्य प्रसन्न हों और पुकारों के साथ की हुई स्तुति और हवि की ओर ध्यान दें, प्रकाश की प्राप्ति के लिये पुकारों के साथ की हुई स्तुति और हवि की ओर ध्यान दें, हे वज्रधारी वीर ! आप जो शत्रुओं के मारने की इच्छा करते हो वह आप सब से नए इस कवि के स्तोत्र को सुनो, इस सब से नए के स्तोत्र को सुनो ॥ ६ ॥ हे इन्द्र ! जो आप बल के लिये उत्पन्न हुए

---

* प्रकाश से आन्तरिक प्रकाश वा सभ्यता का प्रकाश अभिप्रेत है ॥

† वज्र को प्रकट करने से तात्पर्य्य यह है कि उन जातियों में अवश्य युद्ध रहता है ॥

‡ अर्थात् पहले सिन्धु को फिर वितस्ता, असिक्नी, परुष्णी, विपाशा, शतद्रु, गंगा, यमुना आदि को ॥

हो, खूब बढ़ते हुए और हम को चाहते हुए वह आप शत्रुता करने वाले उस मनुष्य को मारो जो हमें दुःख देने की इच्छा करता है, आप जो बड़े यशवाले हो वह आप हमारी सुनो और जैसे छोड़ता हुआ कष्ट दूर हो जाता है ऐसे हमारी दुर्बुद्धि को दूर करो, सम्पूर्ण दुर्बुद्धि को दूर करो ॥ ७॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः१२।१२।८।८।८।१२।८

इन्द्रा॑य॒हि॒द्यौरसु॑रो॒अन॑म्नत॒ इन्द्रा॑यम॒हीपृ॑थि॒वीवरी॑मभि॒र्द्यु॒म्नसा॑ता॒वरी॑मभिः । इन्द्रं॒विश्वे॑स॒जोष॑सो दे॒वासो॑दधिरेपु॒रः।इन्द्रा॑य॒विश्वा॒स॑ व॑ना॒नि॒मानु॑षा रा॒ता॑नि॒सन्तु॒मा॑नु॑षा ॥ १ ॥

इन्द्राय	इन्द्राय	इन्द्र के लिये
हि	खलु	सचमुच

द्यौः	द्युलोकः	द्युलोक
असुरः	प्राणवान्, बलवानित्यर्थः	बलवान
अनम्नत	नतवान् (नमेर्लङिकर्मकर्तर्यात्मनेपदं यगभावः छान्दसःशपःश्लुः, अनुनासिकलोपश्च)	झुका है
इन्द्राय	इन्द्राय	इन्द्र के लिये
मही	महती	विशाल
पृथिवी	पृथिवी	पृथिवी
वरीमऽभिः	उरुप्रदेशैः	चौड़े देशों के साथ
द्युम्नऽसाता	प्रकाशस्य प्राप्तये (विभक्तेरात्वम्)	प्रकाश की प्राप्ति के लिये
वरीमऽभिः	उरुप्रदेशैः	चौड़े देशों के साथ
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को

विश्वे	सर्वे	सब
सऽजोषसः	समानमनस्काः	एक चित्त वाले
देवासः	देवाः (जसोऽसुगागमः)	देवताओं ने
दधिरे	स्थापितवन्तः	रक्खा है
पुरः	अग्रे	आगे
इन्द्राय	इन्द्राय	इन्द्र के लिये
विश्वा	विश्वाः (शेर्लोपः)	सब
सवनानि	सोमाहुतयः	सोम की आहूतियाँ
मानुषा	मनुष्यैर्दत्ताः (शेर्लोपः)	मनुष्यों से दी हुई
रातानि	दानानि	दान
सन्तु	सन्तु	हों

मानुषा	मनुष्य-सम्बन्धानि (शेर्लोपः)	मनुष्य संबंधा

संस्कृतार्थः ।

इन्द्राय खलु बलवान् द्युलोको नतवान्, इन्द्राय उरुप्रदेशैः सह महती पृथिवी (नतवती,) उरुप्रदेशैः सह प्रकाशस्य प्राप्तये (नतवती,) इन्द्रं समानमनस्काः सर्वे देवा अग्रे स्थापितवन्तः, इन्द्राय मनुष्यैर्दत्ताः सर्वाः सोमाहुतयो मनुष्यसम्बन्धीनि दानानि (च) सन्तु । १ ।

भापार्थः ।

सचमुच इन्द्र के लिये बलवान द्युलोक झुका है, इन्द्र के लिये चौड़े देशों के साथ विशाल पृथिवी झुकी (है,) चौड़े देशों के साथ प्रकाश का प्राप्ति के लिये (झुकी है,) इन्द्र को एकचित्त होकर सब देवताओं ने आगे रक्खा है, इन्द्र के लिये मनुष्यों से दी हुई संपूर्ण सोम की आहुतियाँ (और) मनुष्यों के (सब) दान हों । १ ।

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

विप्रवेषुहित्वासवनेषुतुञ्जते

समानमेकंवृषमण्यवःपृथक् स्वःसनिष्यवःपृथक् । तंत्वानावंनपर्षणिंशूषस्यधुरिधीमहि। इन्द्रंनयज्ञैश्चितयन्तआयवः स्तोमेभिरिन्द्रमायवः ॥ २ ॥

विप्रवेषु	सर्वेषु	सब म
हि	खलु	सचमुच
त्वा	त्वाम्	तुझ को
सवनेषु	सोमयज्ञेषु	सोमयज्ञों में
तुञ्जते	प्राप्नुवन्ति	प्राप्त होते हैं
समानम्	समानम्	साझे को

एकम्	एकम्	एक को
वृषऽमन्यवः	वीरं जानन्तः	वीर जानते हुए
पृथक्	पृथक्	अलग
स्वः०	प्रकाशम्	प्रकाश को
सनिष्यवः	प्राप्तुकामाः	प्राप्त करने की कामना वाले
पृथक्	पृथक्	अलग
तम्	तम्	उस को
त्वा	त्वाम्	तुझ को
नावम्	नावम्	नाओ को
न	इव	की न्याई
पर्षणिम्	पारयितारम्	पार करने वाले को

शूषस्य	बलरूपस्य (निघं० २।९)	बलरूप के
धुरि	धुरि	धुरे में
धीमहि	स्थापयामः	हम स्थापन करते हैं
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को
न	इव	मानो
यज्ञैः	यज्ञैः	यज्ञों से
चितयन्तः	चेतयन्तः	चेत कराते हुए
आयवः	मनुष्याः	मनुष्य
स्तोमेभिः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों के द्वारा
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को
आयवः	मनुष्याः (निघं०२।३)	मनुष्य

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र ! सर्वे मनुष्याः) सर्वेषु खलु सोमयज्ञेषु (सर्वेषाम्) समानमेकं त्वां वीरं जानन्तः(सन्तः) पृथक् प्राप्नुवन्ति प्रकाशप्राप्तिकामाः पृथक् (प्राप्नुवन्ति) नावमिव पारयितारं तं त्वामिन्द्रं यज्ञैश्चेतयन्तइव (वयम्) मनुष्या बलस्यधुरि स्थापयामः, (वयम्) मनुष्याः स्तोत्रैरिन्द्रम् (बलस्य धुरि स्थापयामः)॥२॥

भाषार्थः ।

(हे इन्द्र! सब मनुष्य) सचमुच संपूर्ण सोमयज्ञों में (सब के) सांझे एक आपको वीर जानते हुए अलग२ प्राप्त होते हैं, प्रकाश की प्राप्ति की कामना वाले अलग २ (प्राप्त होते हैं,) नाओ की न्याईं पार करने वाले उस आप इन्द्र को यज्ञों से मानो चेत कराते हुए (हम) मनुष्य बल के धुरे पर स्थापन करते हैं, (हम) मनुष्य स्तोत्रों से इन्द्र को (बल के धुरे पर स्थापन करते हैं)॥ २ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

वित्वाततस्रेमिथुनाअवस्यवो

व्रजस्यसातागव्यस्यनिःसृजःसक्ष-

न्तइन्द्र नि:सृज: । यद्गव्यन्ता द्वा जना स्व१र्यन्ता समूहसि । आविष्क-रिक्रद्वृषणं सचाभुवं वज्रमिन्द्र सचा-भुवम् । ३ ।

वि	वि +	–
त्वा	त्वाम्	तुझ को
ततस्रे	वि+ततस्रे परिवेष्टितवन्तः (लिटि 'इरयोरे' इति रे भावः)	चारों ओर से घेरे हुए हैं
मिथुनाः	पत्नीसहिता-मनुष्याः	पत्नीसहित मनुष्य
अवस्यवः	रक्षाकामाः	रक्षा की कामना वाले
व्रजस्य	यूथस्य	समूह की
साता	प्राप्तये (विभक्तेराकम्)	प्राप्ति के लिये

गव्यस्य	गवांसम्बन्धिनः	गौओं के
निःसृजः	(हविः) उत्सृजन्तः (क्विप्)	(हविको)छोड़ते हुए
सचन्तः	गच्छन्तः (निघं० २ १४)	जाते हुए
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
निःऽसृजः	(हविः)उत्सृजन्तः	(हवि को)छोडते हुए
यत्	यदा	जब
गव्यन्ता	गाः कामयमानौ (विभक्तेरात्वम्)	गौओं की कामना वालों को
द्वा	द्वौ (,,)	दो को
जना	जनसमूहौ (,,)	जन समूहों को
स्वः	स्वः+	–
यन्ता	स्वः + यन्ता, प्रकाशंकामयमानौ	प्रकाश की इच्छा वालों को

सम् ऽ ऊहसि	सङ्गमयसि	इकट्ठा कराते हो
आविः	आविः+	–
करिक्रत्	आविः+करिक्रत्, प्रादुष्कुर्वन्	प्रकट करता हुआ
वृषणम्	वीर्य्यवन्तम्	वीर्य्यवान को
सचाऽभुवम्	सहभवितारम्	साथ रहनेवाले को
वज्रम्	वज्रम्	वज्र को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
सचाऽभुवम्	सहभवितारम्	साथ रहने वाले को

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र ! रक्षाकामाः सपत्नीका मनुष्या गोयूथस्य प्राप्तये (हविः) उत्सृजन्तः (सन्तः) त्वां परिवेष्टितवन्तः (त्वां प्रति) गच्छन्तः (हविः) उत्सृजन्तः (च परिवेष्टितवन्तः) यदा (त्वम्) गाःकामयमानो

प्रकाशं कामयमानौ (च) द्वौ जनसमूहौ सङ्गमयसि (तदा) सह भवितारं वीर्य्यवन्तम् (वज्रम्) प्रकटयन् तिष्ठसि, हे इन्द्र! सह भवितारं वज्रम् (प्रकटयन्) तिष्ठसि ॥ ३ ॥

भावार्थः ।

हे इन्द्र ! रक्षा की कामना वाले सपत्नीक मनुष्य गौओं के समूह की प्राप्ति के लिये (हवि को) छोड़ते हुए चारों ओर से आपको घेरे हुए हैं, आप की ओर जाते हुए (और हवि को) छोड़ते हुए (घेरे हुए हैं) हे इन्द्र ! जब आप गौओं की कामना वाले (और) प्रकाशकी कामना वाले दो मनुष्यसमुदाय को इकट्ठा करते हो तब साथ रहने वाले वीर्य्यवान वज्र को प्रकटकरते हुए (ठैरते हो, हे इन्द्र! (आप) साथ रहने वाले वज्रको (प्रकट करते हुए ठैरते हो) ॥३॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

विदुष्टेअस्यवीर्य्यस्यपूरवः पुरो यदिन्द्रशारदीरवातिरः सासहानो अवातिरः। शासस्तमिन्द्रमर्त्यमय-

व्युंग्रवस्तस्यते।मह्रीमंमुष्णाः पृथिवी

मिमाश्रपो मंन्दसानदूमाश्रपः ।४।

विदुः	जानन्ति	जानते हैं
ते	तव	तेरे
अस्य	इदम् (कर्म्मणिषष्ठी)	इस को
वीर्य्यस्य	वीर्य्यम् (,,)	बल को
पूरवः	मनुष्याः (निघं०२।३)	मनुष्य
पुरः	पुराणि	गढ़ों को
यत्	यत्	जो
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
शारदीः	शरत्सम्बन्धीनि	शरत् संबंधियों को

अव॒ऽअ॒ति॑रः	विनाशितवानसि (निघं०२।१९)	तूने नाश-किया है
स॒स॒हा॒नः	भृशमभिभवन् (यङ्लुगन्तात्सहेस्ताच्छीलिकश्चानश्)	खूब दबाता हुआ
अव॒ऽअ॒ति॑रः	विनाशितवानसि	तूने नाश किया है
शा॑सः	शिष्टवानसि (अडभावः)	तूने शासन किया है
तम्	तम्	उस को
इ॒न्द्र॒	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
मर्त्य॑म्	मनुष्यम्	मनुष्य को
अय॑ज्युम्	अयष्टारम्	यज्ञ न करने वाले को
श॒व॒सः॒	बलस्य	बल के
प॒ते॒	हे पत !	हे स्वामी
म॒हीम्	महतीम्	विशाल को

अमुष्णाः	अपहृतवानसि	तूने हरण किया है
पृथिवीम्	पृथिवीम्	पृथिवी को
इमाः	इमाः	इन को
अपः	अपः	जलों को
मन्दसानः	मोदमाः	मोद को प्राप्त होता हुआ
इमाः	इमानि	इन को
अपः	अपः	जलों को

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! तवेदं वीर्यं मनुष्या जानन्ति यत् (त्वम्) शरत्सम्बन्धीनि पुराणि विनाशितवानसि, (दस्यून्) अभिभवन् (सन्) विनाशितवानसि, हे वलस्य पते ! इन्द्र! (त्वम्) अयष्टारं तं मनुष्यं शिष्टवानसि, महतीं पृथिवीमिमाअपः(च)अपहृतवानसि, मोदमानः (सन्) इमा अपः (अपहृतवानसि) ॥४॥

भाषार्थः।

हे इन्द्र ! आपके इस वीर्य्य को मनुष्य जानते हैं, जो आपने शरदृऋतु के गढ़ों को नाश किया है, (दस्युओं को) दबाते हुए नाश किया है, हे बल के स्वामी इन्द्र ! आपने यज्ञ न करने वाले उस मनुष्य को दंडदिया है, (और) विशाल पृथिवी (और) इन जलों को हरण किया है, मोद करते हुए इन जलों को (हरण किया है) ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

आदित्तेअस्यवीर्यस्यचर्किरन् मदेषुवृषन्नुशिजोयदाविथ सखीयतोयदाविथ। चकर्थकारमेभ्यः पृतनासुप्रवन्तवे। तेअन्यामन्यांनद्यं सनिष्णत श्रवस्यन्तःसनिष्णत।५।

आत्	अनन्तरम्	पीछे

इत्	खलु	सचमुच
ते	तव	तेरे
अस्य	एतत् (द्वितीयार्थे षष्ठी)	इस को
वीर्यस्य	वीर्य्यम् (,,)	वीर्य्य को
चर्किरन्	प्रथितवन्तः (यङ्लुगन्ताद् स्मादृव्यत्ययेन शः)	फैलाया है
मदेषु	मदेषु	मदों में
वृषन्	हे वीर!	हे वीर
उशिजः	भक्तान् (वशकान्तौ)	भक्तों को
यत्	यदा	जब
आविथ	प्रवर्धितवानसि (अवधृद्धौ, अन्तर्भावितण्यर्थः)	तूने बढ़ाया है
सखिऽयतः	मित्रत्वंकामयमानान्	मित्रता की कामना वालों को

यत्	यत्	जो
आविथ	रक्षितवानसि	तूने रक्षा की है
चकर्थ	कृतवानसि	तूने किया है
कारम्	यत्नम्	यत्न को
एभ्यः	एभ्यः	इन के लिये
पृतनासु	संग्रामेषु	युद्धों में
प्रऽवन्तवे	प्रवर्त्तितुम् (तुमर्थेतवेन्)	लगने के लिये
ते	एते (एकारलोपश्छान्दसः)	ये
अन्याम्ऽअन्याम्	एकामेकाम्	एक एक को
नद्यम्	नदीम् (यणादेशश्छान्दसः)	नदी को
सनिष्णत	प्राप्तवन्तः (सनेर्लेटिसिप्)	प्राप्त किया

श्रवस्यन्तः	यशःकामयमानाः	यश की कामना करने वालों ने
सनिष्णात	प्राप्तवन्तः (,,)	प्राप्त किया

संस्कृतार्थः।

हे वीर! अनन्तरं खलु तवैतद् वीर्य्यम् (मनुष्याः) प्रथितवन्तः यदा (त्वम्) मदेषु भक्तान् रक्षितवानसि, मित्रत्वं कामयमानान् रक्षितवानसि, (त्वम्) एभ्यः सङ्ग्रामेषु प्रवर्तितुं यत्नं कृतवानसि, (अतएव) एतेः एकामेकां नदीम् (जयेन) प्राप्तवन्तः यशस्कामाः [सन्तः] प्राप्तवन्तः ॥ ५ ॥

भापार्थः।

हे वीर! पीछे सचमुच आपके इस वीर्य्य को (मनुष्यों ने) प्रख्यात किया जब (आपने) मद में भक्तों की रक्षा की मित्रता की कामना वालों की रक्षा की,(आपने) इनके लिये युद्धोंमें प्रवृत्त होने का यत्न किया(इसीलिये)इन्होंने एक एक नदीको (जीत कर) प्राप्त, किया यश की इच्छा से (प्राप्त किया)॥५॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः। १२।१२।८।८।८।१२।८

उतोनोअस्याउषसोजुषेतह्य १

कस्यवोधिहविषोहवीमभिः स्वर्षाताहवीमभिः । यदिन्द्र हन्तवेमृधो वृषावज्रिञ्चिकेतसि । आमे अस्यवेधसोनवीयसो मन्मश्रुधिनवीयसः॥६॥

उत॰	अपिच	और भी
नः	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
अस्याः	अस्याम् (सप्तम्यर्थे षष्ठी)	इस में
उषसः	उषसि ,,	उषा में
जुषेत	प्रीयेत	प्रसन्न हो
हि	खलु	सचमुच
अर्कस्य	स्तुतिम् (आ०शे०,द्वितीयार्थे षष्ठी)	स्तुति को

बोधि	बुध्येत (लिडर्थे लुङ्यडभावः)	जाने
हविषः	हविः (द्वितीयार्थे षष्ठी)	हवि को
हवीमऽभिः	आह्वानैः	पुकारों से
स्वःऽसाता	ज्योतिःप्राप्त्यै (विभक्तेराकम)	प्रकाश की प्राप्ति के लिये
हवीमऽभिः	आह्वानैः	पुकारों से
यत्	यत्	जो
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
हन्तवे	हन्तुम् (तुमर्थे तवेन्)	मारने के लिये
मृधः	शत्रून् (आ०को०)	शत्रुओं को
वृषा	वीरः	वीर
वज्रिन्	हे वज्रिन् !	हे वज्रधारी

चिकेतसि	इच्छसि (,,)	इच्छा करते हो
आ	खलु (भा०को०)	सचमुच
मे	मम	मेरे
अस्य	अस्य	इस के
वेधसः	कवेः (निघं० ३।१५)	कवि के
नवीयसः	नवतरस्य	अत्यन्त नवीन के
मन्म	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
श्रुधि	शृणु	सुनो
नवीयसः	नवतरस्य	अत्यन्त नवीन के

संस्कृतार्थः ।

अपिच (इन्द्रः) अस्यामुषसि अस्मभ्यं प्रीयेत, आह्वानैः सह (कृताम्) स्तुतिं हविः (च) खलु बुध्येत, प्रकाशस्यप्राप्त्ये आह्वानैः सह (कृतां) स्तुतिं बुध्येत, हे वज्रिन् ! इन्द्र! यद् वीरः (त्वम्) शत्रून्

हन्तुमिच्छसि, (स त्वम्) खलु अस्य मम नवतरस्य कवेः स्तोत्रं शृणु, नवतरस्य (स्तोत्रं शृणु) ॥६॥

भाषार्थः ।

और (इन्द्र) इस प्रभात में हम पर प्रसन्न हों (और) पुकारों के साथ (की हुई) स्तुति को (और हमारी) हवि को सचमुच जानें, प्रकाश की प्राप्ति के लिये पुकारों के साथ (की हुई स्तुति को जानें,) हे वज्रधारी इन्द्र! जो वीर (आप) शत्रुओं को मारने की इच्छा करते हो (वह आप) इस मुझ अत्यन्त नवीन कवि के स्तोत्र को सुनो, अत्यन्त नवीन के (स्तोत्र को सुनो) ॥ ६ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

त्वंतमिन्द्रवावृधानोअस्मयु रमित्र-यन्तंतुविजातमर्त्यं वज्रेणशूरमर्त्यम् । जहियोनोअघायति शृणुष्वसुश्रव-स्तमः । रिष्टंनयामन्नपभूतुदुर्म-ति विश्वापभूतदुर्मतिः । ७ ।

त्वम्	त्वम्	तू
तम्	तम्	उस को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
वावृधानः	प्रवर्धमानः	खूब बढ़ता हुआ
अस्मऽयुः	अस्मान् कामयमानः	हमें चाहता हुआ
अमित्रऽयन्तम्	शत्रुवदाचरन्तम्	शत्रु की न्याईं आचरण करते हुए को
तुविऽजात	हे बलाय जात !	हे बलके लिये उत्पन्न !
मर्त्यम्	मनुष्यम्	मनुष्य को
वज्रेण	वज्रेण	वज्र से
शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
मर्त्यम्	मनुष्यम्	मनुष्य को
जहि	जहि	मारो

यः	यः	जो
नः	अस्मान्	हम को
अघऽयति	दुःखयितुमिच्छति	दुःख देने की इच्छा करता है
शृणुष्व	शृणुष्व	सुनो
सुश्रवःऽतमः	अतिशयेनसुयशाः	अत्यन्त सुन्दर यश वाला
रिष्टम्	कष्टम्	कष्ट
न	इव	की न्याईं
यामन्	गच्छत्	जाता हुआ
अप	अप+	–
भूतु	अप+भूतु, दूरी-भवतु (चपोलुक्)	दूर हो
दुःऽमतिः	दुर्बुद्धिः	दुष्ट बुद्धि
विश्वा	सर्वा	सम्पूर्ण

अप	अप+	—
भूतु	अप+भूतु, दूरीभवतु	दूर हो
दुःऽमतिः	दुर्बुद्धिः	दुष्ट बुद्धि

संस्कृतार्थः ।

हे वलाय जात ! इन्द्र ! प्रवर्धमानोऽस्मान्कामयमानः (च) त्वं शत्रुवदाचरन्तं तं मनुष्यं जहि योऽस्मान् दुःखयितुमिच्छति, हे शूर ! वज्रेण (तम्) मनुष्यं जहि,अतिशयेन सुयशाः (त्वम्) शृणु, गच्छतु, कष्टमिव दुर्बुद्धिर्दूरीभवतु सर्वादुर्बुद्धिर्दूरीभवतु ॥७॥

भाषार्थः ।

हे बल के लिये उत्पन्न ! इन्द्र ! खूब बढ़ते हुए (और) हमें चाहते हुए आप शत्रु की न्याईं आचरण करने वाले उस मनुष्य को मारें जो हमें दुख देने की इच्छा करता है, हे शूरवीर वज्र से (उस) मनुष्य को मारें, अत्यन्त सुन्दर यश वाले आप सुनें, जाते हुए कष्ट की न्याईं दुष्टबुद्धि दूर हो, सब दुष्टबुद्धि दूर हो ॥ ७ ॥

इत्येकत्रिंशदत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ० मं १ सू०१३२।

इन्द्रोदेवता परुच्छेपऋषिः। विनयोगोलैङ्गिकः।

सूक्त का भावार्थ।

हे धनी इन्द्र ! आप जो प्राचीन समय में युद्ध में हमारी रक्षा करते थे ऐसे आप के साथ हम वैरियों को दमन करें और सताने वालों को सतावें, आज के दिन यज्ञ में,मुझ सोम निचोड़ने वाले के लिये आप आशीर्वाद दो जिससे हम इस युद्ध में खूब लूट को बटोरें, हम बल की इच्छा करते हुए खूब लूट को बटोरें ॥१॥ यह प्रसिद्ध है कि जो अत्यन्त उत्साही है जो उषा काल में उठ कर इन्द्र को बुलाता है और जो स्वयं शीघ्रता करता है उसके शत्रुओं को प्रकाशनिमित्त* किए हुए युद्धों में इन्द्र ने मारा है, आलस्य-हीन और स्वयं शीघ्रता करने वाले के शत्रुओं को मारा है, इस लिये वह सब से सिर झुका कर प्रणाम करने योग्य है, हे इन्द्र ! आपके दान हमारा साथ न छोड़ें, आप कल्याणकारक के दान हमारा कल्याण करें। २। हे इन्द्र ! यह चमकता हुआ हवि का अन्न पूर्व की न्याईं आपही के लिये है,क्योंकि पूर्वकाल में हमारे, पूर्वज सृष्टि नियम की हानि को रोकने वाले आप ही की पूजा से हानि को रोकते थे, इसलिये आओ हम सब स्त्री पुरुषों के जोड़े इस वचन को कहें,क्योंकि चमकती हुई हवि के देने वाले ही किरणों द्वारा अपने शरीर के भीतर देख सकते हैं, और इन्द्र गौओं के भी लोभी हैं,जो उनके साथ बन्धुनाथ रखते हैं उनके लिये शत्रुओं

* जिन से पृथिवी में प्रकाश फैले और अविद्या और असभ्यता रूपी अन्धकार का नाश हो ॥

को गौओं के भी लोभी हैं *। ३। हे इन्द्र ! यह आप का कर्म पूर्व की न्याईं अब भी प्रख्यात करने योग्य है जो आपने अंगिरा-वंशियों के लिये गौओं के गोठ को खोल दिया, गौओं को बाँटते हुए गोठ को खोल दिया, † जिस प्रकार आपने उन के लिये अन्धकार रूपी असुरों से युद्ध करके जय को प्राप्त किया वैसे हमारे लिये भी करें, आप प्रत्येक व्रतहीन दस्यु को सोम निचोड़ने वालों के अधीन करें, क्रोध करने वाले व्रतहीन को हमारे अधीन करें ।४। जब शूरवीर इन्द्र मनुष्यों को बुद्धि द्वारा विवेकी बनाते हैं तब यश की इच्छा से कोई तो युद्ध के उपस्थित होने पर शत्रु पर धावा करते हैं और कोई खूब यज्ञ करते हैं, ‡ जब कोई विपत्ति पड़ती है तो मनुष्य सन्तान और जीवन की रक्षा के लिये उसी की स्तुति के गीतों को बलपूर्वक गाते हैं, उनके स्तोत्र इन्द्र में ही आश्रय को पाते हैं, मानो देवताओं को लक्ष्य करके इन्द्र में आश्रय को पाते हैं ।५। हे इन्द्र ! हे हिमालयआदि पर्वतो ! युद्ध में हमारे आगे लड़ने वाले आप जो जो हम से लड़ने की इच्छा करे उस उस को मार कर पीछे हटाओ, वज्र से मार कर पीछे हटाओ, जो वज्र

---

* आशय यह है कि इन्द्र को यज्ञ में हवि देने से तीन लाभ हैं, एक तो यह कि सृष्टिनियम की हानि के रोकने से सब प्रकार की हानि रुक जाती है, दूसरा यह कि भीतर प्रकाश होकर अज्ञान और पापरूपी अन्धकार का नाश होजाता है, और तीसरे यह कि इन्द्रके साथ बन्धुभाव होनेसे गौ आदि धन में भाग मिलता है ॥

† गौओं का गोठ सूर्य्य की किरणों का समूह है, महीनों लंबी अनन्त जैसी मेरुसमीप देशों की रात्रि के पीछे सूर्य्य की किरणों को बखेर इन्द्र की बड़ी उदारता को प्रकट करती है ॥

‡ आशय यह है कि युद्ध में लड़ने और यज्ञ करने का एक सा पुण्य है ॥

दूर भागे हुए को भी नहीं छोडता और दुर्गम स्थान में भी पहुच जाता है, हे शूरवीर ! हमारे शत्रुओं को सब ओर से खूब चीरो, चीरने वाले आप सब ओर से खूब चीरो ॥ ६ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः। १२।१२।८।८।८।१२।८

त्वयावयंमघवन्पूर्व्येधन इन्द्र-
त्वोताःसासह्यामपृतन्यतो वनु-
यामवनुष्यतः। नेदिष्ठेअस्मिन्न-
हन्य धिवोचानुसुन्वते अस्मिन्यज्ञे
विचयेमाभरेकृतं वाजयन्तोभरे
कृतम् ।१।

त्वया	त्वया (सह)	तेरे साथ
वयम्	वयम्	हम

मघऽवन्	हे धनवन् !	हे धनवाले
पूर्व्ये	पुरातने	प्राचीन में
धने	सङ्ग्रामे	युद्ध में
इन्द्रत्वाऽऊताः	इन्द्रेणत्वया रक्षिताः (प्रत्ययोत्तर-इतित्वादेशः, आत्व छान्दसम्)	तुझ इन्द्र से रक्षा किये हुए
ससह्याम	अभिभवेम	हम दबावें
पृतन्यतः	वैरिण· (आ०को०)	वैरियों को
वनुयाम	हिंसाम (वनु हिंसायाम्)	हम पीडा दें
वनुष्यतः	हिंसतः	पीड़ा देने वालों क
नेदिष्ठे	अत्यन्तं सन्निहिते	अत्यन्त निकट आने वाल में
अस्मिन्	अस्मिन्	इस में

अह॑नि	दिने	दिन में
अधि॑	अधि+	–
वो॒च॒	अधि+वोच, अधिब्रूहि (लोटि व्यत्ययेनाङ्, घचउम्)	आशीर्वाद दो
नु	खलु	सचमुच
सु॒न्व॒ते	सोमं निष्पीडयते	सोम को निचोड़ते हुए के लिये
अ॒स्मिन्	अस्मिन्	इस में
य॒ज्ञे	यज्ञे	यज्ञ में
वि	वि+	–
च॒ये॒म	वि+चयेम, विचिनुयाम (चिनोतेर्व्यत्ययेनशप्)	हम खूब बटोरें
भरे॑	सङ्ग्रामे (निघं० २।१७)	युद्ध में

क्षतम्	लोप्त्रम् (आ०को०)	लूट को
वाजऽयन्तः	बलमिच्छन्तः	बल की इच्छा करते हुए
भरे	सङ्ग्रामे	युद्ध में
क्षतम्	लोप्त्रम्	लूट को

संस्कृतार्थः ।

हे धनवन्! प्राचीने सङ्ग्रामे इन्द्रेण त्वया रक्षिता वयं त्वया (सह) वैरिणोऽभिभवेम, हिंसतः (च) हिंसाम, (त्वम्) अतिसन्निहितेऽस्मिन् दिने अस्मिन् यज्ञे सोमं निष्पीडयते खलु आशिषं देहि (यद् वयम्) सङ्ग्रामे लोप्त्रं विचिनुयाम, बलमिच्छन्तो लोप्त्रं विचिनुयाम ॥ १ ॥

भावार्थः ।

हे धन वाले! प्राचीन संग्राम में आप इन्द्र से रक्षा किये हुए हम आपके साथ वैरियों को दबावें, (और) पीडा देने वालों को पीडा दें, आप अत्यन्त समीप आने वाले आज के दिन इस यज्ञ में सोम निचोड़ने वाले के लिये सचमुच आशीर्वाद दो (कि) हम युद्ध में लूट को खूब बटोरें, बल की इच्छा करते हुए लूट को खूब बटोरें ॥ १ ॥

इन्द्रोदेवता, विराडत्यष्टिश्छन्दः।१२।१०।८।८।८।१२।८

स्वर्जेषेभरआप्रस्यवक्मन्युषर्बुधः
स्वस्मिन्नञ्जसि क्राणस्यस्वस्मि-
न्नञ्जसि। अहन्निन्द्रोयथाविदे
शीर्ष्णाशीर्ष्णोपवाच्यः। अस्मत्राते
सध्र्यक्सन्तुरातयो भद्राभद्रस्य
रातयः।२।

स्वः ऽजेषे	प्रकाशस्य प्राप्त्यै सञ्जाते	प्रकाश के लिये हुए २ में
भरे	सङ्ग्रामे	युद्ध में
आप्रस्य	अत्युत्सुकस्य (भा०को०)	अत्यन्तउत्साह वाले के
वक्मनि	सम्बोधने	बुलाने पर

उषःऽबुधः	उषःकालेप्रबुद्धस्य (क्विप्)	उषःकाल में जागेहुए के
स्वस्मिन्	स्वस्मिन्	अपने में
अञ्जसि	शीघ्रतायाम् (आ०को०)	शीघ्रता होने पर
क्राणस्य	कुर्वाणस्य, अनलसः इत्यर्थः (करोतेःशतरिच्छान्दसः शपोलुक्)	आलस्यहीन के
स्वस्मिन्	स्वस्मिन्	अपने में
अञ्जसि	त्वरायाम् (आ०को०)	शीघ्रता होने पर
अहन्	हतवान्	मारा है
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र ने
यथा	यथा	जैसे
विदे	विज्ञायते (विकरणस्यलुक् 'लोपस्त' इतितलोपः)	प्रसिद्ध है

शीर्ष्णाऽशीर्ष्णा	शिरसा शिरसा	प्रत्येक सिर से
उपऽवाच्यः	प्रणम्यः	प्रणाम करने योग्य
अस्मऽत्रा	अस्मासु (सप्तम्यर्थे त्रा प्रत्ययः)	हम में
ते	तव	तेरे
सध्र्यक्	सहचराणि . (विभक्तेर्लुक्)	साथ रहने वाले
सन्तु	सन्तु	हों
रातयः	दानानि	दान
भद्राः	कल्याणानि	कल्याण रूप
भद्रस्य	कल्याणस्य	कल्याण रूप के
रातयः	दानानि	दान

संस्कृतार्थः ।

यथा विज्ञायते, इन्द्रः उषःकाले प्रबुद्धस्य अत्युत्सुकस्य सम्बोधने(सति तस्य) स्वस्मिन् शीघ्रतायाम् (च सत्याम्) प्रकाशप्राप्त्यैसञ्जातेसङ्ग्रामे (शत्रून्) हतवान्, (तस्य) अनलसः स्वस्मिन् त्वरायाम् (सत्यां शत्रून् हतवान्) (अतःसः) शिरसा शिरसा प्रणम्यः (अस्ति, हे इन्द्र !) तव दानानि अस्मासु सहचराणि सन्तु, कल्याणरूपस्य तव दानानि कल्याणरूपाणि (सन्तु) ॥ २ ॥

भाषार्थः ।

जैसा प्रसिद्ध है, इन्द्र ने उषा काल में जागने वाले अत्यन्त उत्साही के बुलाने पर (और उसकी) अपनी शीघ्रता होने पर प्रकाश के निमित्त होने वाले संग्राम में शत्रुओं को मारा है, (उस) आलस्यहीन की अपनी शीघ्रता होने पर (शत्रुओंकोमाराहै) (इसलिये वह) प्रत्येक सिर से प्रणाम करने योग्य(है,) (हे इन्द्र !) आप के दान हममें साथ रहनेवालेहों, कल्याणरूप (आप)के दान कल्याणकारी (हों) ॥२॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः॥१२।१२।८।८।८।१२।८

तत्तुप्रयःप्रत्नथातेशुशुक्वनं य-

स्मिन्यज्ञेवारमकृण्वतक्षय मृतस्य वारसिक्षयम् । वितद्वोचेरधद्विता- न्तःपश्यन्तिरश्मिभिः । सघाविदे अन्विन्द्रोगवेषणो बन्धुक्षिद्भ्यो- गवेषणः ।२।

तत्	एतत् (एकारलोपः)	यह
तु	तु	तो
प्रयः	अन्नम्	अन्न
प्रत्नऽथा	पुरातनमिव (इवार्थे थाल्)	प्राचीन की न्याईं
ते	तव	तेरा

शुशुक्वनम्	अतिदीप्तम् (शुचिर्दीप्तिकर्म्मा)	अत्यन्त दीप्ति वाला
यस्मिन्	यस्मि	जिस में
यज्ञे	यज्ञे	यज्ञ में
वारम्	वारणम्	रोक को
अकृण्वत	कृतवन्तः	किया है
क्षयम्	क्षयस्य (षष्ठ्यर्थे द्वितीया)	क्षय के
ऋतस्य	ऋतसम्बन्धिनः	ऋत संबंधी के
वाः	वारकः (क्विप्)	रोकने वाला
असि	असि	तू है
क्षयम्	क्षयस्य (षष्ठ्यर्थे द्वितीया)	क्षय के
वि	वि+	–
तत्	तत्	उस को

वोचेः	वि+वोचेः, ब्रुवन्तु (पुरुषवचनव्यत्ययः)	कहें
अध	अतः	इसलिये
द्विता	(दम्पत्योः) द्वन्द्वाः	(स्त्रीपुरुषोंके) जोड़े
अन्तः०	अभ्यन्तरम्	भीतर को
पश्यन्ति	पश्यन्ति	देखते हैं
रश्मिऽभिः	किरणैः	किरणों से
सः	सः	वह
घ	खलु	सचमुच
विदे	अनु+विदे, विज्ञा. तोऽभूत्	जाना गया है
अनु	अनु+	–
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
गोऽएषणः	गवामेषिता	गौओं की इच्छा करने वाला

बन्धुक्षित् ऽभ्यः	वन्धुभावं प्राप्त-वद्भ्यः	वंधुभाव को प्राप्त हुओं के लिये
गोऽएषणाः	गवामेषिता	गौओं की इच्छा करने वाला

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र!) एतत् अतिदीप्तं (हवीरूपम्) अन्नं पुरातनमिव तव (एवास्ति) यस्मिन् यज्ञे (अस्मत्पितरः) ह्रासस्य वारणं कृतवन्तः(यतः त्वम्) ऋतसम्बन्धिनो ह्रासस्य वारकोऽसि अतः (दम्पत्योः) द्वन्द्वाः तत् (उपर्युक्तं वचनम्) ब्रुवन्तु (ते) किरणैः अन्तः पश्यन्ति, स खलु इन्द्रः गवामेषिता विज्ञातोऽभूत् बन्धुभावं प्राप्तवद्भ्यो गवामेषिता (विज्ञातोऽभूत्) ॥ ३ ॥

भावार्थः ।

(हे इन्द्र !) यह अत्यन्त चमकता हुआ (हवी रूप) अन्न पूर्व की न्याईं आप ही का (है) जिस यज्ञ में (हमारे पूर्वजों ने) क्षय को रोक दिया (क्योंकि) आप ऋत सम्बन्धी क्षय के रोकने वाले हैं, इस लिये (स्त्री पुरुषों के) जोडे, उस (ऊपर

के वचन),को कहें(वे) किरणों द्वारा भीतर को देखते हैं, सचमुच वह इन्द्र गोओं की इच्छा करने वाले जाने गए हैं, बन्धुभाव को प्राप्त होने वालों के लिये गोओं की इच्छा करने वाले (जाने गए हैं) ॥३॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

नूइत्थातेपूर्वथाचप्रवाच्यं यद-
ङ्गिरोभ्योऽवृणोरपव्रज मिन्द्रशिक्ष-
न्नपव्रजम् । ऐभ्यःसमान्यादिशा
स्मभ्यंजेषियोत्सिच। सुन्वद्भ्योर-
न्धयाकञ्चिदव्रतंहृणायन्तंचिदव्र-
तम् ॥ ४ ॥

नु	इदानीम्	अब
इत्था	इत्थम्	इस प्रकार

ते	तव	तेरा
पूर्वऽथा	पूर्वमिव (इवार्थे थाल् प्रत्ययः)	पहिले की न्याईं
च	(पूरणः)	–
प्रऽवाच्यम्	प्रख्यापनीयम्	प्रख्यात करने योग्य
यत्	यत्	जो
अङ्गिरःऽभ्यः	अङ्गिरोभ्यः	अंगिरावंशियों के लिये
अवृणोः	अप+अवृणोः, अपावृतवानसि, उद्घाटितवानसीत्यर्थः	तूने खोल दिया
अप	+ अप	–
व्रजम्	गोष्ठम्	गोओं के गोठ को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र

शिक्षन्	वितरन् (शिक्षतिर्दानकर्मा निघं० ३।२०)	बाँटता हुआ
अप	अप+(अवृणोः) अपावृतवानसि	तूने खोल दिया
व्रजम्	गोष्ठम्	गोओं के गोठ को
आ	खलु (आ० को०)	सचमुच
एभ्यः	एभ्यः	इन से
समान्या	समानया (सा० मा०)	समान से
दिशा	रीत्या (,,)	रीति से
अस्मभ्यम्	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
जेषि	जयं प्राप्नुहि (विकरणस्य लुक्)	जयको प्राप्त कर
योत्सि	युध्यस्व (व्यत्ययेन परस्मैपदम्)	युद्ध कर
च	च	और

सुन्वत्ऽभ्यः	सोमाभिषवंकुर्वद्भ्यः	सोम निचोड़ने वालों के लिये
रन्धय	आयत्तीकुरु	अधीन कर
कम्	कम्	–
चित्	कम्+चित्, प्रत्येकम्	प्रत्येक को
अव्रतम्	व्रतरहितम्	नियमसे रहित को
हृणायन्तम्	क्रुध्यन्तम् (हृणीङ् रोषे, व्यत्ययेनाकारः)	क्रोध करतेहुए को
चित्	खलु	सचमुच
अव्रतम्	व्रतहीनम्	नियमसे रहित को

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्र! इत्थं तव (कर्म्म) पूर्वमिव इदानीम् (अपि) प्रख्यापनीयम् (अस्ति) यत् (त्वम्) अङ्गिरोवंशीयानामर्थं गोष्ठमुद्घाटितवान्, वितरन् (सन्) गोष्ठम् (उद्घाटितवान्) एभ्यः खलु समानया रीत्या अस्मदर्थम् (अपि) युध्यस्व, जयंच प्राप्नुहि,

प्रत्येकं व्रतरहितं सुन्वद्भ्यः आयत्तीकुरु, क्रुध्यन्तं खलु व्रतहीनम् (आयत्तीकुरु) ॥ ४ ॥

भापार्थः ।

हे इन्द्र ! इस प्रकार आप का (कर्म) पहिले की न्याईं अब (भी) प्रख्यात करने योग्य (है) जो आपने अंगिरावंशियों के लिये गौओं के गोठ को खोल दिया,बांटते हुए गौओंके गोठ को(खोलदिया) सचमुच आप इनके समान हमारे लिये भी युद्ध कर के जय को प्राप्त करें, प्रत्येक व्रतहीन को सोम निचोड़ने वालों के अधीन करें, क्रोध करते हुए व्रतहीन को (अधीन करें) ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

संयज्जनान्क्रतुभिःशूरईक्षय द्धनेहितेतरुषन्तश्रवस्यवः प्रयक्षन्त श्रवस्यवः। तस्माआयुःप्रजावदिद् बाधेअर्चन्त्योजसा। इन्द्रओक्यंदि-

धिषन्तधीतयो देवाँ अच्छानधीतयः ॥५॥

सम्	सम्+	-
यत्	यदा	जब
जनान्	जनान्	मनुष्यों को
क्रतुऽभिः	प्रज्ञाभिः	बुद्धियों के द्वारा
शूरः	शूरः	शूरवीर
ईक्षयत्	सम+ईक्षयत्, समीक्षकान्करोति (लडर्थे लङडभावः)	विचारशील करता है
धने	सङ्ग्रामे	युद्ध में
हिते	स्थापिते	स्थापन होने पर
तरुषन्त	आक्रामन्ति (आ०क्रो०लडर्थेलुङ्)	धावा करते

श्रवस्यवः	यशइच्छन्तः	यशकी इच्छा करते हुए
प्र	प्र+	–
यक्षन्त	प्र+यक्षन्त, प्रकर्षेण यजन्ते (लडर्थे लुङि व्यत्ययेन क्सः)	खूब यजन करते हैं
श्रवस्यवः	यशइच्छन्तः	यश की इच्छा करते हुए
तस्मै	तस्मै	उस के लिये
आयुः	जीवनम्	जीवन को
प्रजाऽवत्	प्रजायुक्तम्	प्रजासे युक्त को
इत्	एव	ही
बाधे	विपत्तिकाले (भा०पो०)	विपत्तिके समय
अर्चन्ति	गायन्ति (निघं० ३।१४)	गाते हैं

ओजसा	बलेन	बल से
इन्द्रे	इन्द्रे	इन्द्र में
ओक्यम्	निवासस्थानम् (स्वार्थेयत्)	रहने के स्थान को
दिधिषन्त	धारयन्ति (सा०मा०लडर्थे लङ्)	धारण करते हैं
धीतयः	स्तोत्राणि (आ० को०)	स्तोत्र
देवान्	देवान्	देवताओं को
अच्छ	अभिलक्ष्य	लक्ष रखकर
न	इव	मानो
धीतयः	स्तोत्राणि	स्तोत्र

संस्कृतार्थः।

यदा शूरः(इन्द्रः)मनुष्यान् प्रज्ञाभिः समीक्षकान् करोति (तदा केचित्) यशइच्छन्तः युद्धे स्थापिते (सति) आक्रामन्ति, (केचित्) यश इच्छन्तः प्रकर्षेण

यजन्ते, तस्माएव विपत्तिकाले प्रजायुक्तं जीवनम् इच्छन्तः बलेन गायन्ति, (तेषाम्) स्तोत्राणि इन्द्रे निवासस्थानं धारयन्ति, स्तोत्राणि देवानभिलक्ष्य (इन्द्रं प्राप्नुवन्ति) ॥ ५ ॥

भापार्थः ।

जब शूरवीर (इन्द्र) मनुष्यों को बुद्धियों द्वारा विवेचनशील बनाते हैं, तब (कोई) यश के चाहने वाले युद्ध के स्थापन होने पर धावा करते हैं (और कोई) यश की इच्छा करने वाले खूब यजन करते हैं, उसी के लिये विपत्तिकाल में प्रजा से युक्त जीवन की इच्छा करते हुए बल पूर्वक गाते हैं (उन के) स्तोत्र इन्द्र में निवास स्थान को धारण करते हैं, स्तोत्र मानो देवताओं को लक्ष कर के (इन्द्र रूप निवास स्थान को प्राप्त होते हैं) ॥ ५ ॥

इन्द्रापर्वतौदेवते, भुरिग्अत्यष्टिश्छन्दः ।

१२।१२।८।७।७।१२।८

युवंतमिन्द्रापर्वतापुरोयुधा योनः

पृतन्यादपतंतमिद्धतं वज्रेणातंतमि-

ह्वतम्। दूरेचत्तायछंत्सद् गहनंय-

दिनचत्। अस्माकंशत्रून्परिशूरवि-

श्वतो दर्मादर्षीष्टविश्वतः ॥६॥

युवम्	युवम्	तुम दोनों
तम्	तम्	उस को
इन्द्रापर्वता	हे इन्द्रापर्वतौ ! (विभक्तेरात्वम्)	हे इन्द्र (और) पर्वत !
पुरःऽयुधा	पुरतोयोद्धारौ (,,)	आगे लड़ने वाले
यः	यः	जो
नः	अस्माकम्	हमारा
पृतन्यात्	योद्धुमिच्छेत्	युद्ध की इच्छा करे
अप	अप+	–

तम्ऽतम्	तंतम्	उस २ को
इत्	अवश्यम्	अवश्य
हतम्	अप + हतम्, निरस्यतम्	दूर हटाओ
वज्रेण	वज्रेण	वज्रके द्वारा
तम्ऽतम्	तंतम्	उस २ को
इत	(पूरणः)	–
हतम्	निरस्यतम्	दूर हटाओ
दूरे	दूरदेशे	दूर देश में
चत्ताः	गताय चततिर्गतिकर्मा निघं० २।१४)	गए हुए के लिये
छंत्सत्	कामयते (निघं० २६)	कामना करता है
गहनम	दुर्गम्	दुर्गम को
यत्	यः (विनक्षेळक्)	जो

इनक्षत्	प्राप्नोति (नक्षगतौ, इकारोपजनश्छान्दसः)	पहुंच जाता है
अस्माकम्	अस्माकम्	हमारे
शत्रून्	शत्रून्	शत्रुओं को
परि	परि+(दर्षीष्ट), सम्यग् दारय	खूब चीरो
शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
विश्वतः	सर्वतः	सब ओर से
दर्मा	दारकः (मनिन् प्रत्ययेसति ह्रस्वश्छान्दसः)	चीरने वाला
दर्षीष्ट	दारय (लोडर्थेलुङ्)	चीरो
विश्वतः	सर्वतः	सब ओर से

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्रापर्वतौ ! पुरतो योद्धारौ युवां तम् (निवार-

यतम्) योऽस्माकम् (शत्रुः) योद्धुमिच्छेत्, तंतम् अवश्यं निरस्यतं, तंतं वज्रेण निरस्यतं यः (वज्रः) दूरङ्गताय कामयते योदुर्गमम् (स्थानमपि) प्राप्नोति, हे शूर! (इन्द्र!) अस्माकं शत्रून् सम्यग् विदारय, विदारकः (त्वम्) सर्वतो दारय ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

हे इन्द्र (और) पर्वत! आगे युद्ध करने वाले आप उस को हटाओ, जो हम से लड़ने की इच्छा करे उस २ को अवश्य दूर हटाओ, उस २ को वज्र के द्वारा दूर हटाओ जो (वज्र) दूर गए हुए के लिये कामना करता है, जो दुर्गम (स्थान में भी) पहुंच जाता है, हे शूरवीर (इन्द्र!) हमारे शत्रुओं को सब ओर से खूब चीरो, चीरने वाले (आप) सब ओर से चीरो ॥ ६ ॥

इति द्वात्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ०मं०१ सू०१३३।

इन्द्रोदेवता परुच्छेपऋषिः।

विनियोगः-

१-७ "उभेपुनामीतिपुरा रिपुघ्न्यस्तु प्रकीर्तिताः । ताजपन् प्रयतोनित्यमिष्टान्कामान्समश्नुते। ताजपन् हन्तिरक्षांसि सपत्नांश्च नियच्छति" (ऋग्वि० १।२५)

६। "अवर्मह:—" इत्येषा दशरात्रस्य षष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रे विनियुक्ता (आ० ८।१।१२।)

७। "वनोतिहि—" इत्येषा प्रातःसवने ब्राह्मणाच्छंसिनः प्रस्थितयाज्यायाः पुरस्तात् प्रक्षेपणीया (आ० ८।१।२)

सूक्तका भावार्थ।

मैं सत्य से द्यौ और पृथिवी को पवित्र करता हूं और द्रोह करने वालों को जलाता हूं, साथ ही ऐसे स्थानों को जो इन्द्र की पूजा से रहित हैं और जहां शत्रु कुचल कर नाश किए गए हैं, जहां पर वे मरे हुए गढ़े में सोते हैं ॥१॥ हे वज्री! आप राक्षसियों के सिरों को अपने चौड़े पैर से कुचल कर तोड़ो, बहुत चौड़े पैर से कुचलकर तोड़ो ॥२॥ हे धनवान! इन राक्षसियों के बलको तोड़ो और उन को नीचे गढ़े में गिराओ, खूब गहरे नीचे गढ़े में गिराओ ॥३॥ हे इन्द्र! जो आपने तीन पचासे राक्षसों को कुचलकर नाश किया है मनुष्य आप के इस कर्म को बड़ा मानते हैं, यद्यपि आपके लिये यह छोटा सा कर्म है परन्तु मनुष्य इसको बड़ा मानते हैं ॥४॥ हे इन्द्र! क्रोध से लाल हुए इस पिशाच को मारो और सम्पूर्ण राक्षस जाति का नाश करो ॥५॥ हे वज्री! इन बड़े राक्षसों को चोट कर नीचे गिराओ, हे इन्द्र! हमारी सुनाई करो क्योंकि द्यौ और पृथिवी

इन के भय से दुःखी हैं, हे वज्री ! वे ऐसे दुःखी हैं जैसे मनुष्य अग्नि में जलने के भय से दुःखी होता है, हे न दबने वाले शूरवीर ! आप भयानक वध करने के शस्त्रों से बलवानों के साथ युद्ध करने जाते हो, मनुष्यों के न मारने वाले आप राक्षसों के साथ युद्ध करने जाते हो, तीन सत्ते राक्षसों के साथ अकेले युद्ध करने जाते हो ॥६॥ सचमुच सोम निचोड़ने वाला बहुतों का स्वामी बनता है, सोम निचोड़ने वाला शत्रुओं को मारकर हटाता है, देवताओं के शत्रुओं को मारकर हटाता है, सोम निचोड़ने वाला बलवान और अजेय होकर सहस्रों धनों की प्राप्ति की इच्छा करता है, सोमनिचोड़ने वाले के लिये इन्द्र पर्याप्त धनको देते हैं, पर्याप्त धन को देते हैं ॥७

इन्द्रोदेवता त्रिष्टुप्छन्दः ।१११११११११

उभेपुनामिरोदसीऋतेनद्रुहो-
दहामिसंमहीरनिन्द्राः । अभिव्ल-
ग्ययत्रहताअमित्रा वैलस्थानंपरि
तृळ्हाअशेरन् ॥ १ ॥

उभे०	उभे	दोनों को
पुनामि	पुनामि	पवित्र करता हूं

रोदसी०	द्यावापृथिव्यौ (निघं० (३।३०)	द्यौ (और) पृथिवी को
ऋतेन	सत्येन	सत्य से
द्रुहः	द्रोग्ध्रीन्	द्रोह करनेवालोंको
दहामि	सम्+दहामि	खूब जलाता हूं
सम्	सम्+	–
मही:	भूप्रदेशान्	पृथिवीके प्रदेशों को
अनिन्द्राः	इन्द्ररहितान्	इन्द्र से शून्य हुओं को
अभिऽव्लग्य	निष्पिष्य	कुचल कर
यत्र	यत्र	जहाँ
हताः	विनाशिताः	नाश किये गए
अमित्राः	शत्रवः	शत्रु

वैल्ऽस्थानम्	गर्ते (सुपांमितिसप्तम्याःसुः)	गढे में
परि	परि+	–
तृळ्हाः	मारिताः (सन्तः) (तृह हिंसायाम्)	मारे जाकर
अशेरन्	परि+अशेरन्, परिसुप्तवन्तः	सोए

संस्कृतार्थः ।

(अहम्) सत्येन उभे द्यावापृथिव्यौ पुनामि, द्रोग्धीन् इन्द्ररहितान् भूप्रदेशान् [च] संदहामि यत्र शत्रवो निष्पिष्य विनाशिताः, मारिताः (च) गर्ते परिसुप्तवन्तः । १ ।

भावार्थः ।

मैं सत्य से द्यौ [और] पृथिवी को पवित्र करता हूं, (और) द्रोह करने वालों (और) इन्द्र से रहित भूप्रदेशों को जलाता हूं, जहाँ शत्रु कुचल कर नाश किये गए(और) मारे जाकर गढे में सोए ॥१॥

इन्द्रोदेवता, निचृदनुष्टुप्छन्दः ।८।७।८।८

अभिऽलग्या चिदद्रिवः शीर्षा

{मद्दाऽव- टूविणा	महापृथुना	बहुत चौड़े से
पदा	पदा	पैर से

संस्कृतार्थः।

हे वज्रिन्! (इन्द्र!) (त्वम्) राक्षसीनांशीर्षाणि पृथुनापदा निष्पिष्य छिन्धि, महापृथुनापदा (निष्पिष्य छिन्धि)।

भावार्थः।

हे वज्रधारी (इन्द्र!) आप राक्षसियों के सिरों को चौड़े पैर से कुचल कर तोड़ो, बहुत चौड़े पैर से (कुचल कर तोड़ो)॥

इन्द्रोदेवता निचृदनुष्टुप्छन्दः।८।७।८।८

अवासांमघवन्जहि शर्धोयातुमतीनाम्। वैलस्थानकेअर्मके महावैलस्थेअर्मके ॥ ३ ॥

अव	अव +	–
आसाम्	आसाम्	इन के
मघऽवन्	हे धनवन् !	हे धन वा
जहि	अव + जहि, विनाशय	नाश करो
शर्धः	बलम्	बल को
यातुऽमती-नाम्	राक्षसीनाम्	राक्षसियों के
वैलऽ-स्थानके	गर्ते	गढ़े में
अर्मके	संकुचिते	भीड़े में
महाऽवैलस्थे	महागर्ते	गहरे गढ़े में
अर्मके	संकुचिते	भीड़े में

संस्कृतार्थः ।

हे धनवन् ! [इन्द्र ! त्वम्] आसां राक्षसीनां वलं विनाशय, (ताः)संकुचिते गर्ते (पातय,)संकुचिते महागर्ते [पातय] ॥ ३ ॥

भाषार्थः।

हे धन वाले [इन्द्र!] आप इन राक्षसियों के बल को नाश करो, [उनको] भीड़े गढ़े में (गिराओ) भीड़े गहरे गढ़े में [गिराओ] ॥ ३ ॥

इन्द्रोदेवता, निचृदनुष्टप्छन्दः।८।८।७।८

यासांतिस्रःपञ्चाशतो ऽभि-
व्लङ्गैरपावपः । तत्सुतेमनायति
तकत्सुतेमनायति ॥ ४ ॥

यासाम्	यासाम्	जिन के
तिस्रः	तिस्रः	तीन को
पञ्चाशतः	पञ्चाशतः	पचासों को

अभिऽव्लङ्गैः	निष्पेषणैः	कुचलने से
अपऽअवपः	विनाशितवानसि	तूने नाश किया है
तत्	तत्	वह
सु	सु+	–
ते	तव	तेरा
मनायति	सु+मनायति, सुमन्यते	बड़ा माना जाता है
तकत्	अत्यल्पम्	बहुत अल्प
सु	सु+	–
ते	तव	तेरा
मनायति	सु+मनायति, सुमन्यते	बडा माना जाता है

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्र !) यासां तिस्रःपञ्चाशतः निष्पेषणै

विनाशितवानसि तत् तव (कर्म्म) बहुमन्यते तवा-
स्यल्पं तत् [कर्म] बहुमन्यते ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

[हे इन्द्र!] आपने जिनके तीन पचासों को कुचल कर नाश किया है उस आपके [कर्म को] बड़ा माना जाता है, उस आपके छोटे से (कामको) बड़ा माना जाता है ॥ ४ ॥

इन्द्रोदेवता, गायत्रीछन्दः ।८।८।८

पिशङ्गभृष्टिमम्भृणं पिशाचि-
मिन्द्रसम्मृण । सर्वंरक्षोनिवर्हय ।५।

पिशङ्ग-भृष्टिम्	क्रोधेनरक्तवर्णम् (भ्रेषति: क्रुध्यतिकर्मा निघं० २।१२)	क्रोधसे लाल रंग वाले को
अम्भृणम्	महान्तम् (निघं० ३।३)	बड़े को
पिशाचिम्	पिशाचम्	पिशाच को

इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
सम्	सम्+	–
मृण	सम्+मृण,सम्यक् मारय	खूब मारो
सर्वम्	सर्वम्	सब को
रक्षः	राक्षसजातम्	राक्षसों को
नि	नि+	–
बर्हय	नि + बर्हय, विनाशय (बृह हिंसायाम्)	नाश करो

संस्कृतार्थः ।

हे इन्द्र ! (त्वम्) क्रोधेन रक्तवर्णं महान्तं पिशाचं सम्यग् मारय, सर्वं राक्षसजातम् (च) विनाशय। ५।

भावार्थः ।

हेइन्द्र ! आप क्रोधसे लाल हुए महान पिशाच को खब मारो (और) सम्पूर्ण राक्षसों का नाश करो ॥५॥

इन्द्रोदेवतानिचृद्धृतिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१५।८

अवर्मह इन्द्र दादृहि श्रुधी नः शुशोच हि द्यौः क्षा न भीषाँ अद्रिवो घृणान्न भीषाँ अद्रिवः । शुष्मिन्तमो हि शुष्मिभिर्वधैरुग्रेभिरीयसे । अपूरुषघ्नो अप्रतीत शूर सत्वभिस्त्रिसप्तैः शूर सत्वभिः ॥ ६ ॥

अवः	अवस्तात् (पूर्वाधरेत्यादिनातिप्रत्ययोऽवादेशश्च)	नीचेकी ओर
महः	महतः	महानों को
इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र

दृहि	विदारय	चीरो
श्रुधि	शृणु	सुनो
नः	अस्मान्	हम को
शुशोच	शशोच	शोक किया है
हि	यतः	क्योंकि
द्यौः	द्युलोकः	द्युलोक ने
क्षाः	पृथिवी	पृथिवी
न	इव	की न्याईं
भीषा	भीत्या (तृतीयायालुक्)	भय से
अद्रिऽवः	हे वज्रिन् !	हे वज्रधारी
घृणात्	ज्वलतः	जलते हुए से
न	इव	जैसे

भीषा	भीत्या (,,)	भय से
अद्रिऽवः	हे वज्रिन्!	हे वज्रधारी
{शुष्मिन्ऽतमः	बलवत्तमः	सब से अधिक बलवाला
हि	खलु	सचमुच
शुष्मिऽभिः	बलवद्भिः (सह)	बलवानों के (साथ)
वधैः	हननसाधनैः (आयुधैः)	शस्त्रों से
उग्रेभिः	उग्रैः	भयानकों से
ईयसे	गच्छसि (ईङ्गतौ श्यन्)	जाते हो
अपुरुषऽघ्नः	पुरुषाणामहिंसकः	पुरुषों के न मारने वाला
अप्रतिऽइत	हे अनाक्रान्त!	हे न दबन वाले

शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
सत्वऽभिः	राक्षसैः (आ०को०)	राक्षसों के साथ
त्रिऽसप्तैः	त्रिसप्तभिः	तीनसातों के साथ
शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
सत्वऽभिः	राक्षसैः	राक्षसों से

संस्कृतार्थः ।

हे वज्रिन् ! इन्द्र ! (त्वम्) महतः (राक्षसान्) अवदारय, अस्मान् (च)शृणु, यतो द्युलोकः पृथिवीव भयेन शुशोच,हे वज्रिन्! यथा ज्वलनः (अग्नेः)भीत्या (कश्चित् शोचति, तथा शुशोच) बलवत्तमः(त्वम्) बलवद्भिः (सह युद्धे)उग्रैरायुधैर्गच्छसि, हेअनाक्रान्ताशूर! पुरुषाणामहिंसकः(त्वम्)राक्षसैः (सहयोद्धुं गच्छसि) त्रिसप्तैः राक्षसैः(सह योद्धुं गच्छसि) ॥६॥

भावार्थः ।

हे वज्रधारी इन्द्र ! आप महान् (राक्षसों) को चीर कर नीचे गिराओ (और) हमारी सुनो, क्योंकि

भीषा	भीत्या (,,)	भय से
अद्रिऽवः	हे वज्रिन्!	हे वज्रधारी
शुष्मिन्ऽतमः	बलवत्तमः	सब से अधिक बल वाला
हि	खलु	सचमुच
शुष्मिऽभिः	बलवद्भिः (सह)	बलवानों के (साथ)
वधैः	हननसाधनैः (आयुधैः)	शस्त्रों से
उग्रेभिः	उग्रैः	भयानकों से
ईयसे	गच्छसि (ईङ्गतौ श्यन्)	जाते हो
अपुरुषऽघ्नः	पुरुषाणामहिंसकः	पुरुषों के न मारने वाला
अप्रतिऽइत	हे अनाक्रान्त!	हे न दबने वाले

शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
सत्वऽभिः	राक्षसैः (आ०को०)	राक्षसों के साथ
त्रिऽसप्तैः	त्रिसप्तभिः	तीनसातों के साथ
शूर	हे शूर !	हे शूरवीर
सत्वऽभिः	राक्षसैः	राक्षसों से

संस्कृतार्थः ।

हे वज्रिन् ! इन्द्र ! (त्वम्) महतः (राक्षसान्) अवदारय, अस्मान् (च)शृणु, यतो द्युलोकः पृथिवीव भयेन शुशोच,हे वज्रिन् ! यथा ज्वलनः (अग्नेः)भीत्या (कश्चित् शोचति, तथा शुशोच) वलवत्तमः(त्वम्) वलवद्भिः (सह युद्धे)उग्रैरायुधैर्गच्छसि, हेअनाक्रान्ताशूर! पुरुषाणामहिंसकः(त्वम्)राक्षसैः (सहयोद्धुं गच्छसि) त्रिसप्तैः राक्षसैः(सह योद्धुं गच्छसि) ॥६॥

भावार्थः ।

हे वज्रधारी इन्द्र ! आप महान् (राक्षसों) को चीर कर नीचे गिराओ (और) हमारी सुनो, क्योंकि

द्युलोक ने पृथिवी की न्याईं भय से शोकको प्रकट किया है, हे वज्रधारा! जैसे जलती हुईं (अग्नि) के भय से (कोई डर कर शोक प्रकट करता है वैसे शोक प्रकट किया है) सचमुच सब से अधिक बल-वान आप बलवानों के साथ (युद्ध में) भयानक शस्त्रों के साथ जाते हो, हे न दबने वाले शूरवीर ! पुरुषों के न मारने वाले (आप) राक्षसों के साथ (युद्ध करने जाते हो) तीन सत्ते राक्षसों के साथ [युद्ध करने जाते हो] ॥ ६ ॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

वनोतिहिसुन्वन्क्षयंपरीणसः

सुन्वानोहिष्मायजत्यवद्विषो देवा-

नामवद्विषः। सुन्वानइत्सिषासति

सहस्रावाज्यवृतः। सुन्वानायेन्द्रो-

ददात्याभुवं रयिंददात्याभुवम् ॥७॥

व॒नोति॑	लभते (आ० को०)	पाता है
हि	खलु	सचमुच
सु॒न्वन्	सुन्वन्	निचोड़ता हुआ
क्षय॑म्	ईशत्वम् (क्षयतिरैश्वर्यकर्मा) (निघं० ३।१)	स्वामित्व को
परी॑णसः	बहोः (निघं० ३।१)	बहुत के
सु॒न्वा॒नः	सुन्वानः	निचोड़ता हुआ
हि	खलु	सचमुच
स्म॒	(पूरणः)	–
य॑जति	अव + यजति, अपसारयति	हटाता है
अ॑व	अव +	–
द्वि॑षः	शत्रून्	शत्रुओं को

देवानाम्	देवानाम्	देवताओं के
अव	अव+(यजति), अपसारयति	हटाता है
द्विषः	शत्रून्	शत्रुओं को
सुन्वानः	सुन्वानः	निचोड़ता हुआ
इत्	(पूरणः)	–
सिसासति	लब्धुमिच्छति (सनेःसनीडमाधेसत्वा-त्वम्) (मा०को०)	पाने की इच्छा करता है
सहस्रा	सहस्राणि (शेर्लोपः)	सहस्रों को
वाजी	बलवान्	बल से युक्त
अवृतः	अनाक्रान्तः	न दबाया हुआ
सुन्वानाय	सुन्वानाय	निचोड़ते हुए के लिये
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र

दुदाति	ददाति	देता है
आऽभुवम्	पर्य्याप्तम् (आ० को०)	पर्य्याप्त को
रयिम्	धनम्	धन को
दुदाति	ददाति	देता है
आऽभुवम्	पर्य्याप्तम् (आ० को०)	पर्य्याप्त को

संस्कृतार्थः ।

(सोमम्) सुन्वन् बहूनां खलु ईशत्वं लभते, (सोमम्) सुन्वन् शत्रून् खलु अपसारयति देवानां शत्रूनपसारयति, (सोमम्)सुन्वन् बलवान्अनाक्रान्तः (च भूत्वा) सहस्राणि (धनानि) लब्धुमिच्छति, (सोमम्) सुन्वानाय इन्द्रः पर्य्याप्तं ददाति,पर्य्याप्त धनं ददाति ॥ ७ ॥

भाषार्थः ।

(सोम को) निचोड़ता हुआ सचमुच बहुतों का स्वामी बनता है, (सोम को) निचोड़ता हुआ सच-

मुच शत्रुओं को हटाता है देवताओं के शत्रुओं को हटाता है,[सोम को] निचोड़ता हुआ बलवान् [और] अजेय हो कर सहस्रों(धनों) के पाने की इच्छा करता है,[सोम को] निचोड़ने वाले के लिये इन्द्र पर्य्याप्त [धन] को देते हैं, पर्य्याप्त धन को देते हैं ॥७॥

इतित्रयस्त्रिंशदुत्तरशततमंसूक्तम् ।

ऋ० मं० १ सू० १३४

वायुर्देवता, परुच्छेपऋषिः ।

विनियोगोलैङ्गिकः ।

सूक्त का भावार्थ ।

हे वायु ! आप को वेग वाले शीघ्रगामी घोड़े हमारे सोम की-ओर सब से पहले पीने के लिये लावें, सब से पहले सोम पीने के लिये लावें, हमारी ऊपर उठी हुई स्तुति की ध्वनि आपके गुणों को जानती हुई आप के मन के अनुकूल हो, आप देने वाले के पास घोड़ों से जुड़े हुए रथ के द्वारा आवें, हे वायु ! आप यज्ञ के देने वाले के पास घोड़ों से जुड़े हुए रथ के द्वारा आवें ॥ १ ॥ हे वायु ! हमारे सुन्दर बनाए हुए बलदायक सोम की बूंदे जो मदकारक हैं और जिनकी द्युलोक की ओर दृष्टि है आप को मद से युक्त करें, जो दूध के मिलाने से बलदायक हैं और जिनकी द्युलोक की ओर दृष्टि है आप को मद से युक्त करें, जिस सोम से आप के घोड़े (जो इकट्ठे चलने वाले बड़े प्रभावशाली और भक्तों के रक्षक हैं) स्तुतियों के अर्पण करने वाले की ओर जाने के लिये बल को प्राप्त करते हैं, सचमुच स्तुतियों को उच्चारण करने वाले की ओर जाने के लिये बल को प्राप्त करते हैं ॥ २ ॥ वायु लाल रंग के घोड़ों को जोड़ते हैं, वायु सुनहरी रंग के घोड़ों को जोड़ते हैं, वायु रथ को चलाने के लिये धुरे में शीघ्रगामी घोड़ों को जोड़ते हैं, चलाने के लिये धुरे में अत्यन्त शीघ्रगामी घोड़ों को जोड़ते हैं, हे वायु ! पृथिवी को जगाओ जैसे जार सोती हुई स्त्री को जगाता है, हम को द्यौ और पृथिवी के दर्शन कराओ और

उषाओं को स्थिर करो, यश के लिये उषाओं को स्थिर करो* ॥३॥ हे वायु ! आप के लिये चमकती हुई उषायें किरणरूप घरों में शुभ वस्त्रों को फैलाती हैं, नई किरणों में नाना रंग के वस्त्रों को फैलाती हैं, आप के लिये अमृत को दोहने वाली गौ† सब धनों को दोहती है, आप ने उदर से मरुतों को उत्पन्न किया है, सचमुच आकाश के उदर से मरुतों को उत्पन्न किया है‡ ॥ ४ ॥ हे वायु ! चमकते हुए पवित्र सोम जो वेग के देने वाले और तीव्र मद वाले हैं आप को शीघ्रता से प्राप्त हुए हैं, वे जलों को शीघ्रता से प्राप्त हुए हैं, शरण लेने योग्य आप को प्राप्त हो कर शत्रुओं से दुर्बल किया हुआ मनुष्य वेग के लिये स्तुति करता है, आप अपने नियम द्वारा सब लोकों से रक्षा करते हो, आप नियम द्वारा असुर के भय से रक्षा करते हो ॥ ५ ॥ हे वायु ! सब से पहले पीने के योग्य आप इन हमारे सोमों को सब से पहले पान करो, निचोड़े हुए सोमों को पान करो, ये जो नित्य होम करने वाली और पाप को त्यागने वाली आर्य्य प्रजा हैं इन की सब गौएँ आप ही के लिये सोम में मिलाने को दूध देती हैं, आप ही के होम के लिये घी को और सोम में मिलाने के लिये दूध को देती है§ ॥ ६ ॥

---

* ऋषि इस मंत्र में वायु को सूर्य्यरूप से देखते हैं, क्योंकि ये सब कर्म सूर्य्य के हैं।

† अमृत को दोहने वाली गौ द्यौ है जो सूर्यरूपी बछड़े के लिये किरणरूपी दूध को देती है, इस मंत्र में भी वायु को सूर्य्यरूप से देखा है, किरणरूपी दूध ही सब प्रकार के धनों का मूल होने से "सब धनों को दोहती है" ऐसा कहा गया है।

‡ आकाश के उदर से मरुतों को उत्पन्न करने वाले भी सूर्य्य हैं।

§ इसलिये आप इन आर्य्य लोगों की रक्षा करो ॥

वायुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

आत्वाजुवोरारहाणाअभिप्रयो
वायोवहन्त्विहपूर्वपीतये सोमस्य
पूर्वपीतये। ऊर्ध्वातेअनुसूनृता मन-
स्तिष्ठतुजानतो। नियुत्वतारथेना-
याहिदावने वायोमखस्यदावने ॥१॥

आ	आ+	–
त्वा	त्वाम्	तुझ को
जुवः	वेगवन्तः	वेग वाले
ररहाणाः	शीघ्रगामिनः	शीघ्रगामी
अभि	प्रति	की ओर

प्रयः	अन्नम्	अन्न
वायो०	हे वायो!	हे वायु
वहन्तु	आ+वहन्तु	लावें
इह	इह	यहाँ
पूर्वऽपीतये	पुरापानाय	पहिले पीने के लिये
सोमस्य	सोमस्य	सोम के
पूर्वऽपीतये	पुरापानाय	पहिले पीने के लिये
ऊर्ध्वा	उत्थिता	उठी हुई
ते	तव	तेरे
अनु	अनुकूलम्	अनुकूल
सूनृता	(स्तुतिरूपा) वाक्	(स्तुति रूप) वाणी

मनः	मनः	मन को
तिष्ठतु	तिष्ठतु	ठहरे
जानती	जानती	जानती हुई
नियुत्वता	नियुद्भिरश्वैर्युक्तेन	घोड़ोंसे जुड़ेहुएसे
रथेन	रथेन	रथ से
आ	आ +	–
याहि	आ+याहि	आओ
दावने	प्रदात्रे (निघं०४।१)	देने वाले के लिये
वायो०	हे वायो !	हे वायु
मखस्य	यज्ञस्य	यज्ञ के
दावने	प्रदात्रे	देने वाले के लिये

संस्कृतार्थः ।

हे वायो ! त्वां वेगवन्तः शीघ्रगामिनः (च अश्वाः सोमरूपम्) अन्नं प्रति पुरापानाय अत्र आवहन्तु, सोमस्य पूर्वपानाय (आवहन्तु) उत्थिता (अस्मत्-स्तुतिरूपा) वाक् (तवगुणान् ,) जानती (सती) त्वमनोऽनुकूलं तिष्ठतु, हेवायो ! (त्वम्) अश्वैर्युक्तेन रथेन प्रदात्रे (मह्यम्) आयाहि, यज्ञस्य प्रदात्रे (मह्यम्) आयाहि॥ १ ॥

भापार्थः ।

हे वायु ! आप को वेग वाले (और) शीघ्रगामी घोड़े (सोमरूप) अन्न के प्रति पहले पीने के लिये यहां लावें, सोमको पहले पीने के लिये (लावें), उठी हुई (हमारी स्तुतिरूपवाणी) (आपके गुणोंको) जानती हुई आप के मन के अनुकूल हो, हे वायु ! (आप) घोड़ों से जुड़े हुए रथ के द्वारा (मुझ) देने वाले के लिये आवें, (मुझ) यज्ञ के देने वाले के लिये आवें ॥ १ ॥

वायुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८।

मन्दन्तु त्वा मन्दिनो वायविन्दवो स्मत्क्राणासः सुकृता अभिद्यवो

गोभिःक्राणाअभिद्यवः । यद्वक्राणा इरध्यै दक्षंसचन्तऊतयः । सध्रीचीनानियुतोदावनेधिय उपब्रुवतइंधियः ॥ २ ॥

मन्दन्तु	मादयन्तु	मदयुक्त करें
त्वा	त्वाम्	तुझ को
मन्दिनः	मादयितारः	मद युक्त करनेवाले
वायो०	हे वायो !	हे वायु
इन्दवः	सोमविन्दवः (आ०को०)	सोम की वूंदें
अस्मत्	अस्माकम्	हमारी
क्राणासः	सप्रभावाः	प्रभाव वालीं

सुऽकृताः	सुष्ठुकृताः	अच्छी बनी हुई
अभिऽद्यवः	दिवोऽभिमुखाः	द्यौ की ओर दृष्टि वाली
गोभिः	पयोभिः	दूध से
क्राणाः	सप्रभावाः	प्रभाव वालीं
अभिऽद्यवः	दिवोऽभिमुखाः	द्यौ की ओर दृष्टि वालीं
यत्	यतः	जिस से
ह	खलु	सचमुच
क्राणाः	सप्रभावाः	प्रभाव से युक्त
इरध्यै	गमनाय	चलने के लिये
दक्षम्	बलम्	बल को
सचन्ते	प्राप्नुवन्ति	प्राप्त करते हैं

ऊतयः	रक्षकाः	रक्षक
सध्रीचीनाः	सहगन्तारः	साथ चलने वाले
निऽयुतः	अश्वाः	घोड़े
दावने	प्रदात्रे	देने वाले के लिये
धियः	स्तुतीः	स्तुतियों को
उप	उप +	–
ब्रुवते	उप + ब्रुवते, उप-वक्त्रे	उच्चारण करने वाले के लिये
ईम्	खलु	सचमुच
धियः	स्तुतीः	स्तुतियों को

संस्कृतार्थः।

हे वायो! अस्माकं सुकृताः सप्रभावाः दिवोऽभिमुखाः मादयितारः सोमबिन्दवः त्वां मादयन्तु, पयोभिः सप्रभावाः (कृताः) दिवोऽभिमुखाः (सोम-

REVIEW.

MESSRS. R. V. PATVARDHAN, B. A., LL. B.,

A. B. KOLHATKAR, B. A., LL. B.

AND D. A. TULZAPURKAR, B. A., LL. B.

have commenced bringing out a translation of Rigveda in English, Hindi, Gujrati and Mahratti languages from July 1912. The English translation has a prose rendering of each mantra in foot-notes. The Editors have avoided the use of a commentary, so that the reader may draw his own conclusions without being biassed with the personal opinion of the Editors. This a good idea but the difficulty is that many mantras are unintelligible without a commentary.

The attempt is a most laudable one and every Hindu who can afford, should consider it his duty to encourage such attempts by subscribing to the work and by inducing his friends to do so.

Apply to Manager, Srutibodh Office, 47, Kalbadevi, Road, Bombay.

FEROZEPORE,
19th *January*, 1913.

SHIV NATH,
Editor, Rigveda Sanhita.

अंक ८१-८२] [वैशाख-ज्येष्ठ १९७०

ऋग्वेद संहिता

(वैदिकजीवनव्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद
टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर
व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलताननिवासी पं० शङ्करदत्तशास्त्री
की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने
सम्पादन किया।

लाहोर
पन्जाब एकानोमीकल यन्त्रालय में प्रिण्टर लाला
सालमन के अधिकार से छपा।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २)
पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)
८० अंकों मूल्य १४॥/)

सतामिव। प्रचक्षयरोदसीवासयोषसः

श्रवसेवासयोषसः॥ ३॥

वायुः	वायुः	वायु
युङ्क्ते	योजयति	जोड़ता है
रोहिता	रोहितवर्णौ (विभक्तेरात्वम्)	लाल रंग के वालों को
वायुः	वायुः	वायु
अरुणा	पिङ्गलवर्णौ	सुनहरी रंग वालों को
वायुः	वायुः	वायु
रथे	रथे	रथ में;
अजिरा	शीघ्रगामिनौ	शीघ्र चलने वालों को
धुरि	धुरि	धुरी में

वोळ्हवे	वहनाय	चलाने के लिये
वहिष्ठा	अतिशयेन वोढारौ	चलाने में अत्यन्त समर्थों को
धुरि	धुरि	धुरी में
वोळ्हवे	वहनाय	चलाने के लिये
प्र	प्र+	–
बोधय	प्र+बोधय	जगाओ
पुरम्ऽधिम्	पृथिवीम् ('पुरन्धी' इतिद्यावापृथिव्योर्नाम निघं०३।३०)	पृथिवी को
जारः	जारः	जार
आ	आ+	–
ससतीम्-ऽइव	आ+ससतीमिव, ईषत्स्वपन्तीमिव	जैसे थोड़ी सोती हुई को

प्र	प्र+	–
चक्षय	प्र+चक्षय, प्रदर्शय	दर्शन कराओ
रोदसी०	द्यावापृथि०व्यौ	द्यौ (और) पृथिवी को
वासय	स्थिरीकुरु	स्थिर करो
उषसः	उषसः	उषाओं को
श्रवसे	यशोऽर्थम्	यश के लिये
वासय	स्थिरीकुरु	स्थिर करो
उषसः	उषसः	उषाओं को

संस्कृतार्थः ।

वायुः रोहितवर्णौ (अश्वौ) योजयति, वायुः पिङ्गलवर्णौ (अश्वौ) योजयति, वायुः रथस्य धुरि वहनाय शीघ्रगामिनौ (अश्वौ योजयति,) धुरि वहनाय अतिशयेन वहनसमर्थौ (अश्वौ योजयति),

(हे वायो ! त्वम्) 'जारः ईषत्स्वपन्तीम् (स्त्रियम्) इव' पृथिवीं प्रबोधय, (त्वम्) द्यावापृथिव्यौ प्रदर्शय, (त्वम्) उषसः स्थिरीकुरु, यशोऽर्थम् उषसः स्थिरीकुरु ॥ ३ ॥

भावार्थः ।

वायु लाल रंग के (घोड़ों) को जोड़ते हैं, वायु सुनहरी रंग के (घोड़ों) को जोड़ते हैं वायु रथ की धुरी में चलाने के लिये शीघ्रगामी घोड़ों को जोड़ते-हैं, धुरी में चलाने के लिये अत्यन्त सामर्थ्य वाले (घोड़ों को जोडते हैं, हे वायु !) आप पृथिवी को जगाओ जैसे जार थोड़ी सोती हुई स्त्री को जगाता है, और द्यौ (और) पृथिवी के दर्शन कराओ, आप उषाओं को स्थिर करो, यश के लिये उषाओं को स्थिर करो ॥३॥

वायुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

तुभ्यमुषासः शुचयः परावति भद्रा वस्त्रा तन्वते दंसु रश्मिषु चित्रा नव्येषु रश्मिषु । तुभ्यं धेनुः सबर्दुघा

विश्वावसुनिदोहते । अजनयोमरुतोवक्षणाभ्यो दिवआवक्षणाभ्यः।४।

तुभ्यम्	तुभ्यम्	तेरे लिये
उषसः	उषसः	उषाएँ
शुचयः	दीप्ताः	चमकती हुईं
पराऽवति	दूरदेशे	दूर देश में
भद्रा	शुभानि	शुभ
वस्त्रा	वस्त्राणि	वस्त्रों को
तन्वते	विस्तारयन्ति	फैलाती हैं
दम्ऽसु	गृहेषु (सा० भा०)	घरों में
रश्मिषु	रश्मिषु	किरणों में

चित्रा	चित्राणि	नाना रंग वालों को
नव्येषु	नूतनेषु	नइयों में
रश्मिषु	रश्मिषु	किरणों में
तुभ्यम्	तुभ्यम	तेरे लिये
धेनुः	धेनुः	गौ
सबःऽदुघा	अमृतस्यदोग्धी	अमृत के दोहने वाली
विश्वा	विश्वानि	सब को
वसूनि	धनानि	धनों को
दोहते	दुग्धे	दोहती है
अजनयः	उत्पादितवानसि	तूने उत्पन्न किया है
मरुतः	मरुतः	मरुतों को

वक्षणाभ्यः	कुक्षिभ्यः	उदरों से
दिवः	दिवः	द्यौ के
आ	खलु	सचमुच
वक्षणाभ्यः	कुक्षिभ्यः	उदरों से

संस्कृतार्थः।

हे वायो ! तुभ्यं दीप्ता उषसो दूरदेशे शुभानि वस्त्राणि रश्मिरूपेषु गृहेषु विस्तारयन्ति, चित्राणि (वस्त्राणि) नूतनेषु रश्मिषु (विस्तारयन्ति,) तुभ्यम् अमृतस्य दोग्ध्री धेनुर्विश्वानि धनानि दुग्धे, (त्वम्) कुक्षिभ्यः मरुतः उत्पादितवानसि, दिवः कुक्षिभ्यः खलु उत्पादितवानसि ॥ ४ ॥

भाषार्थः।

हे वायु ! आप के लिये चमकती हुई उषाएँ दूर देश में शुभ वस्त्रों को किरणरूप घरों में फैलाती हैं, नाना रंग के (वस्त्रों) को नई किरणों में फैलाती हैं, आप के लिये अमृत के दोहने वाली गौ सब धनों को दोहती है, आपने) मरुतों को उदरों से उत्पन्न किया है, सचमुच द्यौ के उदरों से उत्पन्न किया है ॥४॥

वायुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

तुभ्यंशुक्रासःशुचयस्तुरण्यवो मदेषूग्राइषणन्तभुर्वण्यपामिषन्त भुर्वणि। त्वांत्सारीदसमानो भगमीट्टे तक्ववीये। त्वंविश्वस्माद्भुवनात्पासिधर्मणा सुर्यात्पासि धर्मणा ॥ ५ ॥

तुभ्यम्	तुभ्यम्,	तेरे लिये
शुक्रासः	दीप्ताः	चमकते हुए
शुचयः	शुद्धाः	स्वच्छ
तुरण्यवः	वेगवन्तः	वेग वाले

मदेषु	मदेषु	मदों में
उग्राः	तीव्राः	तीव्र
इषणन्त	प्राप्तवन्तः (इषगतौ, शश्नमौ द्वौ विकरणौ, व्यत्ययेनाऽऽत्मनेपदम्)	प्राप्त हुए हैं
भुर्वणि	शीघ्रतायाम् (आ०को०)	शीघ्रता में
अपाम्	अपः (द्वितीयार्थे षष्ठी)	जलों को
इषन्त	प्राप्तवन्तः	प्राप्त हुए हैं
भुर्वणि	शीघ्रतायाम्	शीघ्रता में
त्वाम्	त्वाम्	तुझ को
त्सारी	प्राप्तः (त्सरतिर्गतिकर्मा-निघं० २।१४)	प्राप्त हुआ २
दसमानः	उपक्षीयमाणः (दसु उपक्षये)	छीजता हुआ
भगम्	भजनीयम्	सेवन करने योग्य का

इ॒ट्टे	स्तौति	स्तुति करता है
त॒क्व॒ऽवीये॑	शीघ्रगमनाय, वेगायेत्यर्थः	वेग के लिये
त्वम्	त्वम्	तू
विश्व॑स्मात्	सर्वस्मात्	सब से
भु॑वनात्	भुवनात्	लोक से
पा॒सि॒	रक्षसि	रक्षा करते हो
धर्म॑णा	धर्म्मणा	धर्म के द्वारा
अ॒सु॒र्या॑त्	असुर सम्बन्धिनः (भयात्)	असुर के (भय) से
पा॒सि॒	रक्षसि	रक्षा करते हो
धर्म॑णा	धर्मणा	धर्म के द्वारा

संस्कृतार्थः ।

(हे वायो !) तुभ्यं दीप्ताः शुद्धाः वेगवन्तः मदेषु सोमाः (च सोमाः) शीघ्रतया प्राप्तवन्तः, अपः शीघ्र-

तया प्राप्तवन्तः, (शत्रुभिः) उपक्षीयमाणः (भक्तः) भजनीयं त्वां प्राप्तः(सन्) वेगाय स्तौति, त्वं धर्मणा सर्वस्माल्लोकाद्र रक्षसि (त्वम्) धर्मणा असुर-सम्बन्धिनः (भयाद्) रक्षसि ॥५॥

भावार्थः ।

(हे वायु!) आपके लिये चमकते हुए, स्वच्छ, वेगवाले, (और) मंद में तीव्र (सोम) शीघ्रता से प्राप्त हुए हैं, जलों को शीघ्रता से प्राप्त हुए हैं (शत्रुओं के द्वारा) छीजता हुआ (भक्त) सेवन करने योग्य आप को प्राप्त हुआ २ वेग के लिये स्तुति करता है, आप धर्म के द्वारा संपूर्ण लोकों से रक्षा करते हो, आप धर्म के द्वारा असुर के (भय) से रक्षा करते हो ॥ ५ ॥

वायुर्देवता, अष्टिश्छन्दः ।११।११।८।७।७।१२।८

त्वंनोवायवेषामपूर्व्यः सोमानां प्रथमः पीतिमर्हसि सुतानांपीतिमर्ह-सि । उतोविहुत्मतीनां विशांवव-

जुषीणाम्। विश्ववाइत्तेधेनवोदुह्रआ-
शिरं घृतंदुह्रतआशिरम्॥ ६॥

त्वम्	त्वम्	तू
नः	अस्माकम्	हमारे
वायो०	हे वायो !	हे वायु
एषाम्	एषाम्	इन के
अपूर्व्यः	अपूर्वस्य (सोम पानस्य) योग्यः (अर्हार्थे यत्)	अपूर्व (सोमपान) के योग्य
सोमानाम्	सोमानाम्	सोमों के
प्रथमः	प्रथमः	पहले,
पीतिम्	पानम्	पान को
अर्हसि	अर्हसि	योग्य हो

सुतानाम्	निष्पीडितानाम्	निचोड़े हुओं के
पीतिम्	पानम्	पान को
अर्हसि	अर्हसि	योग्य हो
उतो०	अपिच	और भी
विहुत्म-तीनाम्	विशेषेण होमवतीनाम् (विपूर्वाज्जुहोतेः क्विपसति मतुप्ङीपौ)	अत्यन्त होम करने वालियों की
विशाम्	प्रजानाम्	प्रजाओं की
ववर्जुषीणाम्	(पापम्) वर्जयन्तीनाम्	(पापको) त्याग करती हुइयों की
विश्वाः	सर्वाः	सब
इत्	एव	ही
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
धेनवः	गावः	गौएँ

दुह्रे	दुहन्ति (लोपस्त-'इति तलोपः)	दोहती हैं
आऽशिरम्	सोममिश्रणार्थं दुग्धम्	सोममें मिलानेके लिये दूध को
घृतम्	घृतम्	घी को
दुह्रते	दुहन्ति	दोहती हैं
आऽशिरम्	सोममिश्रणार्थं दुग्धम्	सोम में मिलाने के लिये दूध को

संस्कृतार्थः।

हे वायो ! अपूर्वस्य (सोमपानस्य) योग्यस्त्वं प्रथमः (सन्) एषामस्मदीयानां सोमानां पानमर्हसि, निष्पीडितानाम् (एषाम्) पानमर्हसि, अपिच तुभ्यमेव विशेषेण होमवतीनाम् (पापंच) वर्जयन्तीनां प्रजानां सर्वागावः सोममिश्रणार्थं दुग्धं दुहन्ति, सोममिश्रणार्थं दुग्धं घृतम् (च) दुहन्ति ॥ ६ ॥

भाषार्थः।

हे वायु ! अपूर्व (सोमपान) के योग्य आप पहले इन हमारे सोमों के पान के योग्य हो, निचोड़े हुए

(इन) के पान के योग्य हो, और आप ही के लिये अत्यन्त होम करने वाली (तथा पाप को) त्याग करने वाली प्रजाओं की सब गौएँ सोममें मिलाने के लिये दूध को दोहती हैं, सोम में मिलाने के लिये दूध (और) घृत को दोहती हैं ॥ ६ ॥

इति चतुस्त्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ० मं० १ सू० १३५

वायुरिन्द्रवायूच देवताः, परुच्छेपऋषिः।

विनियोगः—

१-६। आद्यौ तृचौ दशरात्रस्यपष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रे विनियुक्तौ। (आ० ८।१।१२)। शिष्टाणां लैङ्गिकः।

सूक्त का भावार्थ।

हे वायु! आप हविखाने के लिये हमारी बिछी हुई कुशा की ओर हजार घोड़ों के द्वारा आवें, आप सौ घोड़ों के द्वारा आवें, आप हजार और सौ घोड़ों वाले देव के लिये पहले पान करने को देवताओं ने सोम को रोक रखा है, निचोड़े हुए मीठे सोम आप के मद के लिये उपस्थित हैं आपके बल के लिये उपस्थित हैं॥१॥ हे वायु! पत्थरों से कूट कर छाना हुआ यह सोम मनोहर तेजों को पहने हुए द्रोण कलश की ओर जाता है, चमकते हुए तेजों को पहने हुए जाता है, यह सोम जो आप का भाग है मनुष्यों से देवताओं के लिये होमा जाता है, आप घोड़ों को हांको और हमारी कामना करते हुए आओ, प्रीति करते हुए और हमारी कामना करते हुए आओ ॥ २ ॥ हे वायु! आप सौ घोड़ों से और हजार घोड़ों से हमारे यज्ञ की ओर खाने के लिये आओ, हवियों के खाने के लिये आओ, यह उचित समय पर दिया हुआ आप का भाग सूर्य्य की समान दीप्ति वाला है, हे वायु! अध्वर्युलोगों से धारण किये हुए सोम अर्पण किये गए हैं, चमकते हुए सोम अर्पण किये गए हैं ॥ ३ ॥ हे वायु! घोड़ों से जुड़ा हुआ रथ आप दोनों को हमारी रक्षा के लिये और सुन्दर रखे हुए अन्नों को खाने के लिये लावे, हवियोंको खानेके लिये लावे, आप दोनों मीठे सोम को पीवें क्योंकि आप का पूर्वपान निश्चित हो चुका है, हे वायु! आप चमकते हुए

धन के साथ आओ, आप और इन्द्र दोनों धन के साथ आओ ॥ ४ ॥ हे इन्द्र और वायु ! आप दोनों को हमारी स्तुतियाँ यज्ञ की ओर फेरें, ऋत्विजोंने इस बलरूप सोम को स्वच्छ किया है जैसे अति शीघ्र चलने वाले घोड़े को स्वच्छ करते हैं, हम को चाहने वाले आप उसको पीवें और हमारे पास रक्षा के लिये आवें, आप दोनों पत्थरों से निचोड़े हुए सोमों को पीवें, बल के देने वाले आप दोनों मद के लिये पीवें ॥ ५ ॥ हे वायु ! जल के साथ पीस कर निचोड़े हुए ये सोम जो अध्वर्यु लोगोंने पकड़े हुए थे आ दोनों के लिये अर्पण किये गए हैं, चमकते हुए सोम आप दोनो के लिये अर्पण किये गए हैं, ये शीघ्रता करने वाले सोम छानने के ऊनी वस्त्रों में से झरे हैं, आप दोनों की कामना करते हुए भेड की ऊन में से झरे हैं, ये सोम भेड की ऊन में से झरे हैं ॥ ६ ॥ हे वायु ! जो सोए हुए हैं उन सब को उलाँघ कर जहां सोम कूटने का पत्थर खड़कता है वहां आओ, आप और इन्द्र उस घर पर आओ जहाँ स्तुति की वाणी सुनाई देती है, और जहाँ घी झरता है, उस यज्ञ में आप लदे हुए रथ के साथ आओ, आप और इन्द्र उस यज्ञ में आओ ॥ ७ ॥ हे इन्द्र और वायु ! आप उस मीठी सोम की आहुति को ग्रहण करें,जिस *अश्वत्थ को जयशील सेवन करते हैं, वे जयशील हमारे हों, हे वायु ! हमारे घरों में गौएँ सू रही हैं और खेतों में जौ पक रहे हैं आप के लिये गौएँ नहीं सूखतीं आप के लिये गौएँ नहीं छीजतीं ॥ ८ ॥ हे वायु ! ये जो बलवान भुजाओं वाले आपके बैल हैं, वे आपके नदी रूप प्रवाह के बीच दौड़ते हैं, बहुत बढ़ते हुए आपके प्रवाह के बीच दौड़ते हैं, जो मरुस्थान में भी नहीं मरते, जो शीघ्र चलने वाले हैं जो वाणीसे नहीं रुकते,जो सूर्य्य की किरणों की न्याईं किसी से नहीं रुकते,जो हाथोंसे नहीं रुकते ॥ ९ ॥

* सोम को यहां पर अश्वत्थ कहा गया है, जैसे सोम ओषधियों का राजा है वैसे अश्वत्थ वनस्पतियों का ॥

वायुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

स्तीर्णं बर्हिरुप नो याहि वीतये सहस्रेण नियुता नियुत्वते शतिनीभिर्नियुत्वते । तुभ्यं हि पूर्वपीतये देवा देवाय येमिरे । प्र ते सुतासो मधुमन्तो अस्थिरन् मदाय क्रत्वे अस्थिरन् ॥ १ ॥

स्तीर्णम्	आस्तृतम्	बिछी हुई को
बर्हिः	बर्हिः	कुशा को
उप	प्रति	की ओर
नः	अस्माकम्	हमारे,

याहि	प्राप्नुहि	प्राप्त हो
वीतये	(हविषाम्) भक्षणाय	(हवियों के) खाने के लिये
सहस्रेण	सहस्रसङ्ख्याकेन	हजार के द्वारा
निऽयुता	नियुत्समूहेन (जातावेकवचनम्)	घोड़ों के द्वारा
नियुत्वते	नियुद्भिर्युक्ताय	घोड़ोंसेयुक्तकेलिये
शतीनीभिः	शतसंख्योपेताभिः	सौ से
नियुत्वते	नियुद्भिर्युक्ताय	घोड़ोंसेयुक्तकेलिये
तुभ्यम्	तुभ्यम्	तेरे लिये
हि	एव	ही
पूर्वऽपीतये	पूर्वं पानार्थम्	पहिले पीने के निमित्त
देवाः	देवाः	देवताओं ने

देवाय	देवाय	देव के लिये
येमिरे	यमितवन्तः	रोक रखा है
प्र	प्र+	—
ते	तव	तेरे
सुतासः	निष्पीडिताः (जसोऽसगागमः)	निचोड़े हुए
मधुऽमन्तः	माधुर्योपेताः	मिठास से मिले हुए
अस्थिरन्	प्र+अस्थिरन्, प्रस्थितवन्तः	चले हैं
मदाय	मदाय	मद के लिये
क्रत्वे	बलाय	बल के लिये
अस्थिरन्	प्रस्थितवन्तः	चले हैं

संस्कृतार्थः।

(हे वायो ! त्वम्) (हविषाम्) भक्षणाय अस्माकम् आस्तृतं बर्हिः प्रति आगच्छ, सहस्रेण नियत्सम०

हेन युक्ताय शतसङ्ख्याकाभिः(नियुद्भिः)युक्ताय (च) तुभ्यं देवायैव पूर्वं पानार्थं देवाः (सोमम्) यमितवन्तः, निष्पीडिताः माधुर्य्योपेताः(सोमाः) तव मदाय प्रस्थितवन्तः, (तव) बलाय प्रस्थितवन्तः॥१॥

भावार्थः ।

(हे वायु!) आप (हाव) खाने के लिये हमारी बिछी हुई कुशा की ओर आवें,हजार घोड़ों से (और)सौघोड़ों से युक्त आप देव के लियेहीपहिले पानकरने के निमित्त देवताओंने (सोमको) रोक रक्खा है, निचोड़े हुए मीठे (सोम) आपके मदके लिये चले हैं,(आप के) बल के लिये चले हैं । १ ।

वायुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८,

तुभ्यायंसोमःपरिपतोअद्रिभिः स्पार्हावसानःपरिकोशमर्षति शुक्रावसानोअर्षति । तवायंभागआयुषु सोमोदेवेषुहूयते । वहवायोनियुतो याह्यस्मयु जुषाणोयाह्यस्मयुः॥ २ ॥

तुभ्य	तुभ्यम् (सुपामितिचतुर्थ्यालुक्)	तेरे लिये
अयम्	अयम्	यह
सोमः	सोमः	सोम
परिऽपूतः	शोधितः	शुद्ध किया हुआ
अद्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
स्पार्हा	स्पृहणीयानि (शेर्लोपः)	कामना करने योग्यों को
वसानः	धारयन्	धारण करता हुआ
परि	प्रति (आ० को०)	की ओर
कोशम्	(द्रोण-)कलशम्	(द्रोण) कलश को
अर्षति	गच्छति (ऋषीगतौ)	जाता है
शुक्रा	शुक्रानि (शेर्लोपः)	स्वच्छों को
वसानः	धारयन्	धारण करता हुआ

अर्षति	गच्छति	जाता है
तव	तव	तेरा
अयम्	अयम्	यह
भागः	भागः	भाग
आयुषु	मनुष्येषु	मनुष्यों में
सोमः	सोमः	सोम
देवेषु	देवेषु	देवताओं में
हूयते	हूयते	होम किया जाता है
वह	प्रेरय	हाँ को
वायो॰	हे वायो !	हे वायु
निऽयुतः	अश्वान्	घोड़ों को

याहि	आयाहि (आङोलोपः)	आओ
अस्मऽयुः	अस्मान् कामयमानः	हमारी कामना करता हुआ
जुषाणः	प्रीतिंकुर्वाणः	प्रीति करता हुआ
याहि	आयाहि ,,	आओ
अस्मऽयुः	अस्मान् कामयमानः	हमारी कामना करता हुआ

संस्कृतार्थः ।

हे वायो ! पाषाणैः शोधितः अयं सोमः तुभ्यं स्पृहणीयानि (तेजांसि) धारयन् (सन्) द्रोणकलशं प्रति गच्छति, दीप्तानि (तेजांसि) धारयन् (सन्) गच्छति, मनुष्येषु तत्रभागोऽयंसोमः देवेषु हूयते, (त्वम्) अश्वान् प्रेरय, अस्मान् कामयमानः (सन्) आगच्छ, प्रीतिंकुर्वाणः (त्वम्) अस्मान् कामयमानः (सन्) आगच्छ । २ ।

भाषार्थः ।

हेवायु!पत्थरोंसे शोधा हुआ यह सोमआपके लिये कामना करने योग्य (तेजों) को धारण करता हुआ

द्रोण कलश की ओर जाता है, प्रकाशवाले (तेजों) को धारण करता हुआ जाता है, मनुष्यों में आपका भाग यह सोम देवताओं में होमाजाता है, आप घोड़ों को हांको, हमारा कामना करते हुए आओ, प्रीति करते हुए आप हमारी कामना करते हुए आओ ।२।

वायुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

आनोनियुद्भिःशतिनीभिरध्वरं-
सहस्रिणीभिरुपयाहिवीतये वायो
हव्यानिवीतये।तवायंभागऋत्वियः
सरश्मिःसूर्येसचा । अध्वर्युभिर्भर-
माणाअयंसत वायोशुक्राअयंसत॥३॥

आ	आ+	–
नः	अस्माकम्	हमारे

नियुत्ऽभिः	नियुद्भिः	घोड़ों के द्वारा
शतिनीभिः	शतसङ्ख्याकाभिः	सौ के द्वारा
अध्वरम्	यज्ञम्	यज्ञ को
सहस्रिणीभिः	सहस्रसङ्ख्याकाभिः	हजार के द्वारा
उप	प्रति	की ओर
याहि	आ+याहि	आओ
वीतये	भक्षणार्थम्	भक्षण करने के लिये
वायो०	हे वायो !	हे वायु
हव्यानि	हव्यानाम् (षष्ठ्यर्थे द्वितीया)	हवियों के
वीतये	भक्षणार्थम्	भक्षण करने के लिये
तव	तव	तेरा

अयम्	अयम्	यह
भागः	भागः	भाग
ऋत्विय:	समयानुसारेण प्राप्तः	समय के अनसार प्राप्त हुआ
सऽरश्मिः	समानदीप्तिः	तुल्य प्रकाश वाला
सूर्ये	सूर्य्येण (तृतीयार्थे सप्तमी)	सूर्य से
सचा	सह	साथ
अध्वर्युऽभिः	अध्वर्युभिः	अध्वर्युओं से
भरमाणाः	ध्रियमाणाः	पकड़े हुए
अयंसत	अर्पिताः (भा० को०)	दिये गए हैं
वायो०	हे वायो !	हे वायु
शुक्राः	दीप्ताः	चमकते हुए
अयंसत	अर्पिताः	दिये गए हैं

संस्कृतार्थः।

हे वायो ! (त्वम्) शतसङ्ख्याकाभिः सहस्र-सङ्ख्याकाभिः(च)नियुद्भिरस्मद्यज्ञंप्रतिभक्षणार्थम् आगच्छ,हव्यानां भक्षणार्थम्(आगच्छ)अयंतव भागः समयानुसारेण प्राप्तः (सन्) सूर्येण सह समानदीप्तिः (अस्ति)हेवायो ! अध्वर्युभिर्ध्रियमाणाः (सोमाः) अर्पिताः, दीप्ताः (सोमाः) अर्पिताः ॥ २ ॥

भाषार्थः।

हे वायु ! आप शत (और) सहस्र घोड़ों के द्वारा हमारे यज्ञ की ओर भक्षण करने के लिये आवें, हवियोंके भक्षण करने के लिये (आवें) यह आपका भाग समय के अनुसार प्राप्त हुआ २ सूर्य के साथ समान प्रकाश वाला (है), हे वायु ! अध्वर्युओं से पकड़े हुए (सोम) अर्पण किए गए हैं, चमकते हुए सोम अर्पण किये गए हैं ॥ २ ॥

इन्द्रवायूदेवते, अत्यष्टिछन्दः१२।१२।८।८।८।१२।८।८

आवांरथोनियुत्वान्वक्षदवसेऽभिप्र-

यांसिसुधितानिवीतये वायोहव्या-

निवीतये । पिबतंमध्वो अन्धसः पर्वपेयंहिवांहितम् । वायवाचन्द्रेण राधसाऽऽगत मिन्द्रश्चराधसागतम् ॥ ४ ॥

आ	आ+	–
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
रथः	रथः	रथ
नियुत्वान्	नियुद्भिर्युक्तः	घोड़ों से जुड़ा हुआ
वक्षत्	आ+वक्षत्, आवहतु (लेटिरूपम्)	लावे
अवसे	रक्षणाय	रक्षा के लिये
अभि	प्रति	की ओर

प्रयांसि	अन्नानि	अन्नों को
सुऽधितानि	सुष्ठुस्थापितानि	सुन्दर रखे हुओं को
वीतये	भक्षणाय	खाने के लिये
वायो०	हे वायो !	हे वायु
हव्यानि	हव्यानाम् (षष्ठ्यर्थेद्वितीया)	हवियों के
वीतये	भक्षणाय	खाने के लिये
पिबतम्	पिबतम्	तुम दोनों पीओ
मध्वः	मधुरम् (द्वितीयार्थेषष्ठी)	मीठे को
अन्धसः	सोमम् (,,)	सोम को
पूर्वऽपेयम्	पूर्वपानम्	पहले पान
हि	यतः	क्योंकि

वाम्	युवयोः	तुम दोनों का
हितम्	निश्चितम्	निश्चित हुआ है
वायो०	हे वायो !	हे वायु
आ	खलु	सचमुच
चन्द्रेण	भासमानेन	चमकते हुए से
राधसा	धनेन	धन से
आ	आ+	—
गतम्	अ+गतम्, आगच्छतम्	आओ
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
च	च	और
राधसा	धनेन	धन से
आ	आ+	
गतम्	आ+गतम्	आओ

संस्कृतार्थः ।

हे वायो ! नियुद्भिर्युक्तोरथो युवां सुस्थापितानि अन्नानि प्रति रक्षणार्थं भक्षणार्थम् (च) आवहतु, हविषां भक्षणार्थम् आवहतु, युवां मधुरं सोमं पिबतं यतो युवयोः पूर्वपानं निश्चितम्, हे वायो ! (युवाम्) भासमानेन खलु धनेन सह आगच्छतम् (त्वम्) इन्द्रश्च धनेन आगच्छतम् ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

हे वायु ! घोड़ों से जुड़ा हुआ रथ आप दोनों को सुन्दर रखे हुए अन्नों की ओर रक्षा के लिये (और) खाने के लिये लावे, हवियों के खाने के लिये लावे, आप दोनों मीठे सोमको पीओ, क्योंकि आपका पूर्वपान निश्चित होचुका है, हे वायु ! (आपदोनों) सचमुच चमकते हुए धन के साथ आओ (आप) और इन्द्र धन के साथ आओ ॥४ ॥

इन्द्रवायूदेवते, निचृदत्यष्टिश्छन्दः १२।११।८।८।८।१२।८

आ वां धियो ववृत्युरध्वराँ उपेम-

मिन्दुं मर्मृजन्त वाजिनं माशुमत्यं-

नवाजिनम्। तेषांपिबतमस्मयू आ-
नोगन्तमिहोत्या। इन्द्रवायूसुता-
नामद्रिभिर्युवं मदायवाजदायुवम्॥५॥

आ	आ+	–
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
धियः	स्तुतयः	स्तुतियां
ववृत्युः	आ+ववृत्युः, आवर्तयन्तु	फेरें
अध्वरान	यज्ञान	यज्ञों को
उप	प्रति	की ओर
इमम्	इमम्	इस को
इन्दुम्	सोमम्	सोम का

मर्मृजन्त	सम्मार्जितवन्तः	शुद्ध किया है
वाजिनम्	बलवन्तम्	बलवान को
आशुम्	अतिशीघ्रगामिनम्	अत्यन्त शीघ्र गामी को
अत्यम्	अश्वम्	घोड़े को
न	इव,	जैसे
वाजिनम्	बलवन्तम्	बलवान को
तेषाम्	तान् (द्वितीयार्थेषष्ठी)	उन को
पिबतम्	पिबतम्	पीओ
अस्मऽयू	अस्मान् कामयमानौ	हम से प्रेम करने वाले तुम दोनों
आ	आ+	–
नः	अस्मान्	हम को

गन्तम्	आ+गन्तम्, आगच्छतम्	आओ
इह	इह	यहाँ
ऊत्या	रक्षणेन सह	रक्षा के साथ
इन्द्रवायू०	हे इन्द्रवायू !	हे इन्द्र और वायु
सुतानाम्	निष्पीडितान्	निचोड़े हुओं को
अद्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
यवम्	युवाम्	तुम दोनों
मदाय	मदाय	मद के लिये
वाजऽदा	बलस्य दातारौ	बल के देने वाले
युवम्	युवाम्	तुम दोनों

संस्कृतार्थः।

हे इन्द्रवायू ! युवम् (अस्माकम्) स्तुतयो यज्ञान् प्रति आवर्तयन्तु (ऋत्विजः) इमं बलवन्तं सोमं

सम्मार्जितवन्तः यथा अतिशीघ्रगामिनं बलवन्तम् अश्वम् (सम्मार्जयन्ति) अस्मान् कामयमानौ (युवाम्) तान् सोमान् पिबतम्, इह (च) अस्मान् (प्रति) रक्षणेन सह आगच्छतम्, युवां पाषाणैर्निष्पीडितान् (सोमान् पिबतम्) बलस्य दातारौ युवां मदाय (पिबतम्) ॥ ५ ॥

भावार्थः-।

हे इन्द्र और वायु! आप दोनों को (हमारी) स्तुतियाँ यज्ञ की ओर फेरें, ऋत्विजों ने इस बलवान सोम को स्वच्छ किया है जैसे अतिशीघ्र चलने वाले घोड़े को (स्वच्छ करते हैं) हम को प्यार करने वाले (आप) उन (सोमों) को पीवें, (और) यहाँ हमारी (ओर) रक्षा के साथ आवे, आप दोनों पत्थरों से निचोड़े हुए सोमों को (पीवें) बल के देने वाले आप दोनों मद के लिये (पीवें) ॥ ५ ॥

इन्द्रवायूदेवते, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

इमे वां सोमा अप्स्वा सुता इहाध्वर्युभिर्भरमाणा अयंसत वायो

शुक्रा अयंसत । एते वामभ्यसृक्षत
तिरः पवित्रमाशवः । युवायवोऽतिरो-
माण्यव्यया सोमासो अत्यव्यया ॥६॥

इमे	इमे	ये
वाम्	युवाभ्याम्	तुम दोनोंके लिये
सोमाः	सोमाः	सोम
अप्ऽसु	जलेषु	जलों में
आ	खलु	सचमुच
सुताः	निष्पीडिताः	निचोड़े गए
इह	इह	यहाँ
अध्वर्युऽभिः	अध्वर्युभिः	अध्वर्युलोगों से

भरमाणाः	ध्रियमाणाः	पकड़े हुए
अयंसत	अर्पिताः	अर्पण किये गए
वायो०	हे वायो !	हे वायु
शुक्राः	दीप्ताः	चमकने वाले
अयंसत	अर्पिताः	अर्पण किये गए
एते	एते	ये
वाम्	युवाभ्याम्	तुम दोनों के लिये
अभि	अभि +	–
असृक्षत	अभि + असृक्षत, क्षरितवन्तः	झरे हैं
तिरः	अन्तरेण	में से
पवित्रम्	दशापवित्रम्	छानने वाले ऊनी वस्त्र को

आशव:	शीघ्रकारिणः	शी॰ १ सू॰ १३५ मं॰ १
युवाऽयव:	युवां कामयमानाः	तुम दोनों को कामना करने वाले
अति	अन्तरेण	में से
रोमाणि	रोमाणि	उन को
अव्यया	अव्ययानि	भेड़ोंवाली को
सोमास:	सोमाः	सोम
अति	अन्तरेण	में से
अव्यया	अव्ययानि	भेड़ोंवाली का

संस्कृतार्थः ।

हे वायो ! जलेषु निष्पीडिताः इमे सोमाः इह अध्वर्युभिर्ह्रियमाणाः युवाभ्याम् अर्पिताः (सन्ति) दीप्ताः (सोमाः युवाभ्याम्) अर्पिताः (सन्ति) एते शीघ्रकारिणः युवाभ्यां दशापवित्रमन्तरेण क्षरितवन्तः,

ऋ०मं०१ सू०१३५ मं०७ [illegible]रीमाण्यन्तरेण (क्षरितवन्तः) युवां कामय[illegible]णि)अन्तरेण (क्षरितवन्तः) ॥ ६ ॥

भाषार्थः ।

सोमयु ! जलों में निचोड़े हुए ये सोम आप [illegible] के लिये यहाँ अध्वर्यु लोगों से पकड़े हुए अर्पण किये गये हैं, चमकते हुए सोम आप दोनों के लिये अर्पण किये गये हैं, ये शीघ्रता करने वाले सोम, छानने वाले ऊनी वस्त्र में से झरे हैं, आप दोनों की कामना करते हुए भेड़ की ऊन में से झरे हैं, (ये) सोम भेड़ की ऊन में से झरे हैं ॥ ६ ॥

इन्द्रवायूदेवते, अष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।१२।१२।८

अतिवायोससतोयाहिशश्वतो यत्रग्रावावदतितत्रगच्छतं गृहमिन्द्रश्चगच्छतम् । विसूनृतादहशे रीयतेघृत मापूर्णयानियुतायाथोअध्वर मिन्द्रश्चयाथोअध्वरम् ॥ ७ ॥

अति	अतिक्रम्य	उलाँघ कर
वायो०	हे वायो !	हे वायु
ससतः	स्वपतः	सोते हुओं को
याहि	आगच्छ (आङो लोपः)	आओ
शश्वतः	विश्वान् (निघं० ३।१)	सब को
यत्र	यत्र	जहाँ
ग्रावा	पाषाणः	पत्थर
वदति	शब्दं करोति	शब्द करता है
तत्र	तत्र	वहाँ
गच्छतम्	प्राप्नतम्	प्राप्त हों
गृहम्	गृहम्	घर को

इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
च	च	और
गच्छतम्	प्राप्नुतम्	प्राप्त हों
वि	वि +	–
सूनता	(स्तुतिरूपा)वाक्	(स्तुतिरूपा)वाणी
ददृशे	वि+ददृशे,विशेषेण दृश्यते (लडर्थे कर्मणिलिट्)	खूब देखी जाती है
रीयते	स्रवति (रीङ्स्रवणे)	झरता है
घृतम्	घृतम्	घृत
आ	आ +	–
पूर्णया	पूर्णेन (रथेन) युक्तया	भरे हुए रथ से जुड़े हुओं के द्वारा
निऽयुता	नियुत् पङ्क्त्या	घोड़ों के द्वारा

याथः	आ+याथः, आगच्छतम् (लोडर्थे लट्)	ओओ
अध्वरम्	यज्ञम्	यज्ञ को
इन्द्रः	इन्द्रः	इन्द्र
च	च	और
याथः	प्राप्नुतम् (लोडर्थे लट्)	प्राप्त हों
अध्वरम्	यज्ञम्	यज्ञ को

संस्कृतार्थः।

हे वायो! (त्वम्) स्वपतः सर्वान् अतिक्रम्य आगच्छ(त्वम् इन्द्रश्च)यत्र(सोमकुट्टनार्थः) पाषाणः शब्दं करोति तत्र प्राप्नुतम् (त्वम्) इन्द्रश्च (तद्-) गृहं प्राप्नुतम् (यत्रस्तुतिरूपा) वाक् संदृश्यते, घृतम् (च) स्रवति, (युवाम्) पूर्णेन (रथेन) युक्तया नियुत्-पङ्क्त्या (तम्) यज्ञं प्राप्नुतम्,(त्वम्) इन्द्रश्च यज्ञं प्राप्नुतम्॥७॥

भाषार्थः।

हे वायु! आप सोते हुए सब को उलाँघ कर आओ, आप (और इन्द्र) जहाँ (सोम कूटने का) पत्थर खड़कता है वहाँ प्राप्त हों, आप और इन्द्र (उस) घर को प्राप्त हों,(जहाँ स्तुति की) वाणी देखी जाती है (और) घी झरता है, आप भरे हुए रथ से जुड़े हुए घोड़ों के द्वारा यज्ञ को प्राप्त हों, आप और इन्द्र यज्ञ को प्राप्त हों॥ ७॥

इन्द्रवायूदेवते, अष्टिश्छन्दः १२।१२।८।१२।१२।८

अचाहतद्वहेथेमध्वआहुतिं यम-
श्वत्थमुपतिष्ठन्तजायवो ऽस्मे-
तेसन्तुजायवः। साकंगावःसुवते
पच्यतेयवो नतेवायउपदस्यन्तिधे-
नवो नापदस्यन्तिधेनवः॥ ८॥

अत्र	अत्र	यहाँ
अह	खलु	सचमुच
तत्	तस्य (षष्ठ्यालुक्)	उस की
वहेथे०	प्राप्नुतम् (लोडर्थेलट्)	प्राप्त हों
मध्वः	मधुरस्य	मीठे की
आऽहुतिम्	आहुतिम्	आहुति को
यम्	यम्	जिस को
अश्वत्थम्	अश्वत्थम्	पीपल को
उपऽतिष्ठन्त	उपतिष्ठन्ति	सेवन करते हैं
जायवः	जयशीलाः	जयशील
अस्मे०	अस्माकम् (षष्ठ्याःशे आदेशः)	हमारे

ते	ते	वे
सन्तु	सन्तु	हों
जायवः	जयशीलाः	जयशील
साकम्	युगपत् (आ० को०)	एक साथ
गावः	गावः	गौएँ
सुवते	सुवते	सूती हैं
पच्यते	पच्यते	पकता है
यवः	यवः	जौ
न	न	नहीं
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
वायो०	हे वायो !	हे वायु
उप	उप+	–

दस्यन्ति	उप + दस्यन्ति, शुष्कीभवन्ति,	सूकती हैं
धेनवः	गावः	गौएँ
न	न	नहीं
अप	अप +	—
दस्यन्ति	अप+दस्यन्ति, अपक्षीणाभवन्ति,	नष्ट होती हैं
धेनवः	गावः	गौएँ

संस्कृतार्थः ।

(हे इन्द्रवायू! युवाम्) अत्रखलु तस्य मधुरस्य (सोमस्य)आहुतिं प्राप्नुतं यम् अश्वत्थ-रूपं सोमम्) जय- शीलाः (पुरुषाः) उपतिष्ठन्ति, ते जयशीलाः पुरुषा) अस्माकं सन्तु, हे वायो! गावो युगपत् सुवते, यवः (च)पच्यते,तुभ्यं गावो शुष्कीनभवन्ति (तुभ्यम्) गावः अपक्षीणा न भवन्ति ॥ ८ ॥

भावार्थः ।

(हे इन्द्रओर वायु!)आप सचमुच यहाँ उस मीठे (सोम) की आहुति को प्राप्त हों जिस पीपल (रूप

सोम) को जयशील (पुरुष)सेवन करते हैं,वे जयशील
(पुरुष)हमारे हों, हेवायु ! हमारी गौएँ सूती हैं (और)
साथ ही जो पकता है, आपके लिये गौएँ सूकती
नहीं (आपके लिये) गौएँ क्षीण नहीं होतीं ॥ ८ ॥

वायुर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।

इमेयेतेवायोबाह्वोजसो न्तर्न-
दीतेपतयन्त्युक्षणो महिव्राधन्त-
उक्षणः । धन्वन्चिद्येअनाशवो जी-
राश्चिदगिरौकसः। सूर्यस्येवरश्म-
योदुर्नियन्तवो हस्तयोर्दुर्नियन्तवः
९ ॥

इमे	इमे	ये

ये	ये	जो
ते	तव	तेरे
सु	शोभनाः	सुन्दर
वायो०	हे वायो !	हे वायु
बाहुऽओ-जसः	बाहुषु बलं येषां तथोक्ताः	बलवाली भुजाओं वाले
अन्तः	मध्ये	बीच
नदी०	नदी	नदी
ते	तव	तेरे
पतयन्ति	धावन्ति (पतगतौ, चौरादिकः)	दौड़ते हैं
उक्षणः	वृषभाः	बैल

मह्नि	प्रभूतम्	बहुत
आधन्तः	वर्धमानाः	बढ़ते हुए
उक्षणः	वृषभाः	बैल
धन्वन्	मरुभूमौ (सप्तम्या लुक्)	मरुभूमि में
चित्	अपि	भी
ये	ये	जो
अनाशवः	नाशरहिताः (आ० को०)	नाश न होने वाले
जीराः	क्षिप्रगतयः (,,)	शीघ्र चलने वाले
चित्	(पूरणः)	–
अगिरौकसः	गिरा वाण्या ओकः स्थानं नास्ति येषां तथोक्ताः	वाणी से स्थिति न करने वाले

सूर्य॑स्यऽइव	सूर्यस्येव	सूर्य की जैसे
र॒श्मयः॑	किरणाः	किरणें
दुः॒ऽनि॒यन्त॑वः	दुःखेन नियन्तव्याः	कठिनता से रोके जाने वाले
हस्त॑योः	हस्ताभ्याम् (तृतीयार्थे षष्ठी)	हाथों के द्वारा
दुः॒ऽनि॒यन्त॑वः	दुःखेन नियन्तव्याः	कठिनता से रोके जाने वाले

संस्कृतार्थः।

(हे वायो !) इमे ये वाहुबलाः तव शोभनाः वृषभाः सन्ति(ते) तव नदी (रूपप्रवाह) मध्ये धावन्ति, प्रभूतं वर्धमानाः वृषभाः (नवप्रवाहे) धावन्ति, ये मरुभूमौ अपि नाशरहिताः क्षिप्रगतयः वाण्यास्थितिमकुर्वाणाः सूर्यस्य किरणा इव दुःखेन नियन्तव्याः (सन्ति)हस्ताभ्यां दुःखेन नियन्तव्याः (सन्ति) ॥९॥

जो हम चाहते हैं॥४॥जो मनुष्य मित्र और वरुण की सेवा करता है उस शत्रुरहित को वे पाप से बचाते हैं, हवि देने वाले मनुष्य को पाप से बचाते हैं, उस नियम पर चलने वाले सरल पुरुष को अर्यमा चारों ओर से रक्षा करते हैं, जो मित्र और वरुण के नियम पर चलता हुआ स्तुति पाठ करता है, और जो इन के नियम पर चलता हुआ स्तुति के राग गाता है ॥५॥ मैं महान आकाश को, द्यौ और पृथिवी को, मित्र और दानी वरुण को नमस्कार करता हूं अत्यन्त दयालु दानी वरुण को नमस्कार करता हूं। हे मनुष्य! इन्द्र, अग्नि, प्रकाशमय अर्यमा और भग की स्तुति कर, हम चिरकाल तक जीते हुए सन्तान से युक्त हों, और सोम की रक्षा से युक्त हों ॥६॥ हम देवताओं की रक्षा से रक्षित हुए २. इन्द्र को अपने साथ रखते हुए, अपनी कीर्ति को अपने ऊपर निर्भर रखते हुए मरुतों के साथ रहने का अभिमान रखने वाले हों अग्नि मित्र और वरुण ने हमको शरण दी है हम और हमारी जाति के धनी अभीष्ट कामना को प्राप्त करें ॥ ७॥

मित्रावरुणौ देवते अत्यष्टिश्छन्दः १२१२१२।८।८।८।१२।८

प्रसुज्येष्ठंनिचिराभ्यांबृहन्नमो

हव्यंमतिंभरतामृळयद्भ्यांस्वादि-

ष्ठंमृळयद्भ्याम्। तासम्राजाघृता-

सुतो यज्ञेयज्ञउपस्तुता। अथैनोः

प्र सु ज्येष्ठं निचिराभ्यां बृहन्नमो हव्यं मतिं भरता मृळयद्भ्यां स्वादिष्ठं मृळयद्भ्याम् । ता सम्राजा घृतासुती यज्ञेयज्ञ उपस्तुता । अथैनोः क्षत्रं न कुतश्चनाधृषे देवत्वं नू चिदाधृषे ॥ १ ॥

प्र	प्र +	–
सु	सुष्ठु	अच्छी प्रकार से
ज्येष्ठम्	प्रशस्यम्	उत्तम को
निऽचिराभ्याम्	नितरांचिरकालाभ्याम्	बहुत प्राचीनों के लिये
बृहत्	महान्तम्	महान् को
नमः	नमस्कारम	नमस्कार को
हव्यम्	हव्यम्	हवि को
मतिम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
भरत	प्र + भरत, सम्पादयत	संपादन करो।।

मृळयत्-ऽभ्याम्	दयावद्भ्याम्	दयावानों के लिये
स्वादिष्ठम्	स्वादुतरम्	अत्यन्त स्वादु को
मृळयत्-ऽभ्याम्	दयावद्भ्याम्	दयावानों के लिये
ता	तौ	वे दोनों
सम्ऽराजा	सम्राजौ	चक्रवर्ती राजा
घृतऽआ-सुती	घृतस्य सिञ्चतारौ	घी के सींचने वाले
यज्ञेऽयज्ञे	प्रतियज्ञे	प्रत्येक यज्ञ में
उपऽस्तुता	स्तूयमानौ	स्तुतिकियेजातेहुए
अथ	अपिच	और
एनोः	एनयोः	इन का

क्ष॒त्रम्	राज्यबलम्	राज्यबल
न	न	नहीं
कु॒तः	कुतः	कहीं से
च॒न	अपि	भी
आऽधृषे॑	आधर्षितुम्	दबाने के लिये
दे॒व॒ऽत्वम्	देवभावः	देवपन
नु	नु+	–
चि॒त्	नु+चित्, नकदापि	न कभी भी
आऽधृषे॑	आधर्षितुम्	दबाने के लिये

संस्कृतार्थः ।

(हे आर्य्याः) नितरांचिरकालाभ्यांदयावद्भ्याम् (मित्रावरुणाभ्याम्) प्रशस्यं महान्तंनमस्कार हविः स्तोत्रम् (च) सुष्ठुसम्पादयत, दयावद्भ्यांस्वादुतरम्

(हवः सम्पादयत) तौ घृतस्यसिञ्चतारौ सम्राजौ प्रतियज्ञे स्तूयमानौ (स्तः),अपिच एनयोः राज्यबलं नकुतोऽपिआधर्षितुं शक्यम्,देवभावः (च) कदापि नाधर्षितम्(शक्यम्) ॥ १ ॥

भावार्थः।

(हे आर्य्यलोगो!) अत्यन्त प्राचीन, दयावान् (मित्र और वरुणके लिये) उत्तम महान नमस्कार को हवि को (और) स्तोत्र को सम्पादन करो,(उन) दोनों दयावानों के लिये अत्यन्त स्वादु (हवि को संपादन करो) वे दोनों घी को सींचने वाले सम्राट् प्रत्येक यज्ञ में स्तुति किये (जाते हैं) और इन का राज्यबल कहीं से भी नहीं दब सकता, (इन का) देवपन कभी भी नहीं दबसकता ॥ १ ॥

मित्रावरुणौ देवते,अत्यष्टि श्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

अदर्शिगातुरुरवेवरीयसीपन्था

ऋतस्यसमयंस्तरश्मिभि श्चक्षुर्भ-

गस्यरश्मिभिः।द्युक्षंमित्रस्यसादन

मर्यम्णोवरुणस्यच । अथादधातेबृह-

दुक्थ्यं१वय उपस्तुत्यंबृहद्वय: ॥२॥

अदर्शि	दृष्टोऽभूत्	देखा गया
गातु:	मार्ग:	मार्ग
उरवे	विस्तीर्णाय	विस्तृत के लिये
वरीयसी	उरुतर: (लिङ्गव्यत्ययः)	बहुत चौड़ा
पन्था:	मार्ग:	मार्ग
ऋतस्य	ऋतस्य	ऋत का
सम्	सम्+	–
अयंस्त	सम + अयंस्त. धारितोऽभूत् (आ० पदे०)	धारण किया गया है

रश्मिऽभिः	सूत्रैः	डोरियों से
चक्षुः	चक्षुः	नेत्र
भगस्य	भगस्य	भग का
रश्मिऽभिः	सूत्रैः	डोरियों से
द्युक्षम्	भास्वरम् (आ० को०)	जगमगाता हुआ
मित्रस्य	मित्रस्य	मित्र का
सदनम्	सदनम्	स्थान
अर्यम्णः	अर्यम्णः	अर्यमा का
वरुणस्य	वरुणस्य	वरुण का
च	च	और
अथ	ततः	वहां से

दधाते०	दत्तः	देते हैं
बृहत्	महत्	महान को
उक्थ्यम्	प्रशंसनीयम्	प्रशंस के योग्य को
वयः	बलम्	बल को
उपऽस्तुत्यम्	स्तुत्यर्हम्	स्तुति के योग्य को
बृहत्	महान्तम्	महान को
वयः	बलम्	बल को

संस्कृतार्थः।

विस्तीर्णाय (सूर्याय) उरुतरो मार्गो दृष्टोऽभूत्, (सः) मार्गः ऋतस्य सूत्रैर्धारितोऽभूत्, भगस्य चक्षुः सूत्रैः (धारितोऽभूत्) मित्रस्य अर्यम्णो वरुणस्य (च) सदनं भास्वरम् (अस्ति) ततः (तौ) प्रशंसनीयं महद् बलं दत्तः, स्तुत्यर्हम् महद् बलं दत्तः॥ २॥

भाषार्थः।

विस्तीर्ण (सूर्य्य के लिये) बहुत चौडा मार्ग देखा गया है (वह) मार्ग नियम की डोरियों से थंभा हुआ है, भग का नेत्र डोरियों से (थंभा हुआ है), मित्र अर्य्यमा (और) वरुण का स्थान जगमगाता (है) वहां से (वे) प्रशंसा योग्य महान बल को देते हैं.स्तुति योग्य महान बल को देते हैं ॥ २ ॥

मित्रावरुणौदेवते,अत्यष्टिश्छन्दः१२।१२।८।८।८। १२।

ज्योतिष्मतीमदितिंधारयत्क्षितिं स्ववतीमासचेतेदिवेदिवे जागृवांसा दिवेदिवे। ज्योतिष्मत्क्षत्रमाशाते आदित्यादानुनस्पती । मित्रस्त- योर्वरुणोयातयज्जनो ऽर्य्यमायातय- ज्जनः ॥ ३ ॥

ज्योतिष्मतीम्	प्रकाश वतीम्	प्रकाश वाली को
अदितिम्	अदितिम्	आदति को
धारयत्ऽक्षितिम्	पृथिव्याः धारयित्रीम्	पृथिवी के धारण करने वाली को
स्वःऽवतीम्	द्युलोक वतीम्	द्युलोकवाली को
आ	आ+	–
सचेते॰	आ+सचेते, सेवेते	सेवन करते हैं
दिवेऽदिवे	प्रतिदिनम्	प्रति दिन
जागृऽवांसा	जागरूको	जागने वाले
दिवेऽदिवे	प्रतिदिनम्	प्रतिदिन

ज्योतिष्मत्	तेजोयुक्तम्	तेज से युक्त को
क्षत्रम्	बलम्	बल को
आशाते०	भुञ्जतः	भोगते हैं
आदित्या	आदित्यौ	दोनों आदित्य
दानुनः	दानस्य	दान के
पती०	स्वामिनौ	स्वामी
मित्रः	मित्रः	मित्र
तयोः	तयोः	उन में से
वरुणः	वरुणः	वरुण
यातयत्-ऽजनः	जनानां प्रेरयिता	मनुष्यों का प्रेरक

अर्यमा	अर्यमा ;	अर्यमा
यातयत्-ऽजनः	जनानां प्रेरयिता	मनुष्यों का प्रेरक

संस्कृतार्थः।

(मित्रावरुणौ) पृथिव्याः धारयित्रीं दिवो युक्तां प्रकाशवतीम् अदितिं प्रतिदिनं सेवेते, प्रतिदिनं जागरूकौ(सेवेते),दानस्य स्वामिनौ आदित्यौतेजोयुक्तंबलं भुञ्जतः,तयोर्मित्रः जनानां प्रेरयिता, वरुणः(जनानां प्रेरयिता)अर्यमा(चापि)जनानां प्रेरयिता(अस्ति)॥३॥

भाषार्थः।

(मित्र और वरुण) पृथिवी के धारण करनेवाली द्युलोक से युक्त प्रकाश वाली अदिति को प्रतिदिन सेवन करते हैं,प्रतिदिन जागते हुए (सेवन करते हैं), दान के स्वामी ये आदित्य तेज युक्त बल को भोगते हैं,उन में से मित्र मनुष्यों के प्रेरक, वरुण (मनुष्यों के प्रेरक और) अर्यमा (भी) मनुष्यों के प्रेरक हैं ॥ ३ ॥

मित्रावरुणौदेवते अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

अयंमित्रायवरुणायशंतमः सोमो-

भूत्वव्पानेष्वाभगो देवोदेवेष्वाभगः

तंदेवासोजुषेरत विश्वेअद्यसजो-

षसः। तथाराजानाकरथोयदीमह

ऋतावानायदीमहे ॥ ४ ॥

अयम्	अयम्	यह
मित्राय	मित्राय	मित्र के लिये
वरुणाय	वरुणाय	वरुण के लिये
शम्ऽतमः	सुखतमः	अत्यन्त सुखवाला
सोमः	सोमः	सोम
भूतु	भवतु (छान्दसः शपोलुक्)	हो

अव॒ऽपानेषु	अवाङ्मुखैः (चमसैः) पानेषु	नीचे मुखवाले(चमसों)द्वारा पीने में
आऽभगः	उपभोग्यः	आनन्द के देने वाला
दे॒वः	देवः	देव
दे॒वेषु	देवेषु	देवताओं में
आऽभगः	उपभोग्यः	आनन्द के देने वाला
तम्	तम्	उस को
दे॒वासः	देवाः	देवता
जु॒षे॒र॒त	सेवन्ताम्	सेवन करें
विश्वे	सर्वे	सब
अ॒द्य	अद्य	आज
सऽजोषसः	समानप्रीतियुक्ताः	एक जैसे प्रसन्न,

तथा	तथा	वैसे
राजाना	हे राजानौ !	हे राजाओ
करथः	कुरुतम्	करो
यत्	यत्	जो
ईमहे	कामयामहे	हम चाहते हैं
ऋतऽवाना	ऋतवन्तौ	नियम वाले
यत्	यत्	जो
ईमहे	कामयामहे	हम चाहते हैं

संस्कृतार्थः ।

अयं सोमो मित्राय वरुणाय (च) सुखतमो भवतु
पः) चमसैः पानेषु उपभोग्यः (अस्ति) देवोदेवेषु उप-
भोग्यः (अस्ति), तमद्यविश्वेदेवाः समानप्रीतियुक्ताः
सेवन्ताम् , हे राजानौ ! यद्वयं कामयामहे (यवाम्)

तथा कुरुतम्, ऋतवन्तौ (युवां तथैव कुरुतम्) यद् (वयम्) कामयामहे ॥ ४ ॥

भाषार्थः ।

यह सोम मित्र (और) वरुण के लिये सुखदाई हो, (जो) चमसों द्वारा पान करने में आनन्द को देने वाला है, देवता देवताओं में आनन्द को देने वाला है, उस को आज सारे देवता एक जैसे प्रसन्न हुए २ सेवन करें, हे राजाओ ! जो हम चाहते हैं (आप) वैसे ही करो, नियम वाले (आप वैसे ही करो) जो हम चाहते हैं ॥ ४ ॥

मित्रा वरुणौ देवते अत्यष्टिश्छन्दः१२।१२।८।८।८।१२।८

योमित्रायवरुणायाविधज्जनो ऽनर्वाणंतंपरिपातोअंहसोदाश्वांसंमर्तमंहसः । तमर्यमाभिरक्षत्यृजूयन्तमनुव्रतम् । उक्थैर्यएनोः परिभूषतिव्रतम् स्तोमैराभूषतिव्रतम् ॥५॥

यः	यः	जो
मित्राय	मित्राय	मित्र के लिये
वरुणाय	वरुणाय	वरुण के लिये
अविधत्	परिचरति	सेवा करता है
जनः	मनुष्यः	मनुष्य
अनर्वाणम्	शत्रुरहितम्	शत्रु से रहित को
तम्	तम्	उस को
परि	परितः	चारों ओर से
पातः	पालयतः	रक्षा करते हैं
अंहसः	पापात्	पाप से
दाश्वांसम्	दातारम्	देने वालों को

मर्तम्	मरणधर्माणम्	मरणधर्मी को
अंहसः	पापात्	पाप से
तम्	तम्	उस को
अर्यमा	अर्यमा	अर्यमा
अभि	अभितः	चारों ओर से
रक्षति	रक्षति	रक्षा करता है
ऋजुऽयन्तम्	आर्जवमाचरन्तम्	सरल आचार वाले को
अनु	अनुकूलम्	अनुकूल
व्रतम्	नियमम्	नियम को
उक्थैः	शस्त्रैः	स्तुतिके पाठों से

यः	यः	जो
एनोः	एनयोः	इन दोनों के
परिऽभूषति	अलङ्करोति	सजाता है
व्रतम्	व्रतम्	व्रत को
स्तोमैः	स्तोत्रैः	स्तुति के गीतों से
आऽभूषति	अलङ्करोति	सजाता है
व्रतम्	व्रतम्	व्रत को

संस्कृतार्थः ।

यो मनुष्यो मित्रावरुणाभ्यां परिचरति तं शत्रु रहितम् (तौ) पापात्परितःपालयतः (हविषः-) दातारं-मर्त्यं पापात् (पालयतः), तं नियमानुकूलं आर्जवे-नाचरन्तम् अर्य्यमा अभितो रक्षति, य एनयोः व्रतं शस्त्रैः अलङ्करोति, (यएनयोः) व्रतं स्तोत्रैः अल-ङ्करोति ॥ ५ ॥

।भावार्थः।

जो मनुष्य मित्र (और) वरुण की सेवा करता है, उस शत्रु रहित की (वे) पाप से रक्षा करते हैं, (हवि) देने वाले मरण धर्मा की (रक्षा करते हैं,) उस नियम के अनुयायी सरल आचार वाले को अर्यमा चारों ओर से रक्षा करते हैं, जो इन के नियम को स्तुति के पाठों से सजाता है, (जो इन के) नियम को स्तुति के गीतों से सजाता है ॥ ५ ॥

मित्रावरुणौदेवते अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

नमोदिवेबृहतेरोदसीभ्यां मित्रा-
यवोचंवरुणायमीळ्हुषे सुमृळीकाय
मीळ्हुषे । इन्द्रमग्निमुपस्तुहि
द्युक्षमर्यमणंभगम् । ज्योग्जीवन्तः
प्रजयासचेमहिसोमस्योतीसचेमहि
॥ ६ ॥

नमः	नमस्कारम्	नमस्कार को
दिवे	दिवे	द्यौ के लिये
बृहते	महते	महान के लिये
रोदसी-भ्याम्	द्यावापृथिवी-भ्याम्	द्यौ और पृथिवी के लिये
मित्राय	मित्राय	मित्र के लिये
वोचम्	ब्रवीमि	मैं कहता हूं
वरुणाय	वरुणाय	वरुण के लिये
मीळ्हुषे	वदान्याय	दानी के लिये
सुऽमृळी-काय	अतीवदयालवे	अत्यन्त दयालु के लिये

मीळ्हुषे	वदान्याय	दानी के लिये
इन्द्रम्	इन्द्रम्	इन्द्र को
अग्निम्	अग्निम्	अग्नि को
उप	सामीप्येन	समीप से
स्तुहि	स्तुहि	स्तुति कर
द्युक्षम्	दीप्तिमन्तम्	प्रकाश वाले को
अर्यमणम्	अर्यमणम्	अर्यमा को
भगम्	भगम्	भग को
ज्योक्	चिरकालम्	चिरकाल तक
जीवन्तः	जीवन्तः	जीते हुए
प्रऽजया	पुत्रादिना	पुत्र आदि से

सचेमहि	सङ्गता भूयास्म	हम संगत हों।
सोमस्य	सोमस्य	सोम की
ऊती	रक्षया	रक्षा से
सचेमहि	सङ्गता भूयास्म	हम संगत हो

संस्कृतार्थः ।

(अहम्) महतेदिवे, द्यावापृथिवीभ्यां, मित्राय, वदान्याय वरुणाय (च) नमस्कारं ब्रवीमि, अतीवदयालवेवदान्याय (वरुणाय नमस्कारं ब्रवीमि,) हे मनुष्य! इन्द्रमग्निंदीप्तिमन्तमर्यमणंभगम(च)सामीप्येनस्त हि (वयम्) चिरकालं जीवन्तः पुत्रादिना सङ्गता भूयास्म, सोमस्य रक्षया (च) सङ्गता भूयास्म ॥ ६ ॥

भापार्थः।

मैंमहान द्यौ के लिये द्यौ(और) पृथिवी के लिये, मित्र के लिये, (और) दानी वरुण के लिये नमस्कार बोलता हूं,अत्यन्त दयावान दानी (वरुण के लिये नमस्कार बोलता हूं) (हे मनुष्य!) इन्द्र को अग्नि को प्रकाशमान अर्यमा को और भग को समीप से स्तुति

कर (हम) चिरकाल तक जाते हुए पुत्र आदि से संगत हों, (और) सोमकी रक्षा से संगत हों ॥ ६ ॥

मित्रावरुणौदेवते त्रिष्टुपूछन्दः ११।११।११।११

ऊतोदेवानांवयमिन्द्रवन्तो मंसीमहिस्वयशसोमरुद्भिः। अग्निर्मित्रो वरुणःशर्मयंसन् तदश्यामममघवानोवयंच ॥ ७ ॥

ऊती	रक्षया	रक्षा से
देवानाम्	देवानाम्	देवताओं की
वयम्	वयम्	हम
इन्द्रऽवन्तः	इन्द्रवन्तः	इन्द्र को साथ रखते हुए
मंसीमहि	अभिमानिनोभवेम	अभिमान वाले॰

ऋ० मं० १ सू० १३७ ।

मित्रावरुणौदेवते परुच्छेपऋषिः ।

विनियोगः ।

१-३। इदं सूक्तं दशरात्रस्य षष्ठेऽहनि प्रातःसवने प्रउगशास्त्रे विनियुक्तम् (आ० ८।,१।१२)

१-मैत्रावरुणस्य प्रस्थितयाज्यायाः पुरस्तादाधाप्रक्षेपणीया (आ०८।१।१)

सूक्त का भावार्थ ।

हे राजाओ ! हे द्युलोक को छूने वाले मित्र और वरुण! हमने पत्थरों से कूट कर सोम को निचोड़ा है, आप आवें, ये दूध से मिले हुए मदकारक सोम हैं, ये मद के करने वाले सोम हैं, हमारी रक्षा करने वाले आप आवें, ये दूध से मिले हुए आपके लिये हैं, दूध से मिले हुए पवित्र सोम आपके लिये हैं ॥ १ ॥ हे मित्र और वरुण ! आप आवें, ये सोम की बूंदें हैं, ये दही से मिले हुए सोम हैं, दही से मिले हुए निचोड़े हुए सोम हैं, उषा के प्रकट होने पर और सूर्य की किरणों के साथ ही आप के लिये सोम निचोड़ा गया है, आप मित्र और आप वरुण के पीने के लिये निचोड़ा गया है, यज्ञ के लिये और पीने के लिये सुन्दर सोम निचोड़ा गया है ॥ २ ॥ हे मित्र और वरुण ! आर्य लोग आप दोनों के लिये सोम की पोरी को बहुत दूध वाली गौ की न्याई पत्थरों द्वारा दोहते हैं, हमारे रक्षक आप इधर मुंह करके सोम पीने के लिये हमारी ओर आवें, आर्य वीरों ने यह आपके लिये निचोड़ा है, आप के पीने के लिये यह सम्पूर्ण सोम निचोड़ा है ॥ ३ ॥

मित्रावरुणौदेवते,अतिशक्वराछन्दः १६।८।१६।१२।८

सुषुमायातमद्रिभिर्गोश्रीताम-
त्सराइमे सोमासोमत्सराइमे ।
आराजानादिविस्पृशास्मत्रागन्त-
मुपनः । इमेवांमित्रावरुणागवाशिरः
सोमाःशुक्राःगवाशिरः ॥ १ ॥

सुसुम	वयं सुतवन्तःस्मः	हमने निचोड़ा है
आ	आ+	–
यातम्	आ+यातम्	आओ
अद्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
गोऽश्रीताः	पयोभिर्मिश्रिताः	दूध से मिले हुए

ऋ० मं० १ सू० १३७ ।

मित्रावरुणौदेवते परुच्छेपऋषिः ।

विनियोगः ।

१-३। इदं सूक्तं दशरात्रस्य षष्ठेऽहनि प्रातःसवने प्रउगशस्त्रे विनियुक्तम् (आ० ८ ।.१। १२)

१-मैत्रावरुणस्य प्रस्थितयाज्यायाः पुरस्तादाधाप्रक्षेपणीया (आ०८।१।१)

सूक्त का भावार्थ ।

हे राजाओ ! हे द्युलोक को छूने वाले मित्र और वरुण ! हमने पत्थरों से कूट कर सोम को निचोड़ा है, आप आवें, ये दूध से मिले हुए मदकारक सोम हैं, ये मद के करने वाले सोम हैं, हमारी रक्षा करने वाले आप आवें, ये दूध से मिले हुए आपके लिये हैं, दूध से मिले हुए पवित्र सोम आपके लिये हैं ॥ १ ॥ हे मित्र और वरुण ! आप आवें, ये सोम की बूंदें हैं, ये दही से मिले हुए सोम हैं, दही से मिले हुए निचोड़े हुए सोम हैं, उषा के प्रकट होने पर और सूर्य की किरणों के साथ ही आप के लिये सोम निचोड़ा गया है, आप मित्र और आप वरुण के पीने के लिये निचोड़ा गया है, यज्ञ के लिये और पीने के लिये सुन्दर सोम निचोड़ा गया है ॥ २ ॥ हे मित्र और वरुण ! आर्य्य लोग आप दोनों के लिये सोम की पोरी को बहुत दूध वाली गौ की न्याई पत्थरों द्वारा दोहते हैं, हमारे रक्षक आप इधर मुंह करके सोम पीने के लिये हमारी ओर आवें, आर्य वीर [illegible] निचोड़ा है, आप के पीने के लिये

मित्रावरुणौदेवते,अतिशक्वराछन्दः १६।८।१६।१२।८

सुषुमायातमद्रिभिर्गोश्रीताम-
त्सराइमे सोमासोमत्सराइमे ।
आराजानादिविस्पृशास्मत्रागन्त-
मुपनः। इमेवांमित्रावरुणागवाशिरः
सोमाःशुक्राःगवाशिरः॥ १ ॥

सुसुम	वयं सुतवन्तःस्मः	हमने निचोड़ा है
आ	आ+	–
यातम्	आ+यातम्	आओ
अद्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
गोऽश्रीताः	पयोभिर्मिश्रिताः	दूध से मिले हुए;

स्वऽयशसः	स्वायत्तकीर्तयः	अपने अधीन कीर्ति वाले
मरुत्ऽभिः	मरुद्भिः	मरुतों के साथ
अग्निः	अग्निः	अग्नि ने
मित्रः	मित्रः	मित्र ने
वरुणः	वरुणः	वरुण ने
शर्म	शरणम्	शरण को
यंसन्	प्रयच्छन्	दिया है
तत्	तम् (वरम्)	उस (वर) व
अश्याम	प्राप्नुयाम	हम पावें.
मघऽवानः	धनवन्तः	धन वाले
वयम्	वयम्	हम

च	च	और

संस्कृतार्थः।

इन्द्रवन्तो वयं देवानांरक्षया स्वायत्तकीर्तयः (सन्तः) मरुद्भिःसह अभिमानिनोभवेम अग्निर्मित्रो-वरुणः (चास्मभ्यम्) शरणं प्रायच्छन्, (अस्माकम्) धनवन्तो वयंच तम् (अभीष्टंवरम्) प्राप्नुयाम ॥७॥

भाषार्थः।

इन्द्र को साथ रखतेहुए हम देवताओं की रक्षा से अपने अधीन कीर्ति वाले हुए हुए मरुतों के साथ अभिमानवाले हों अग्नि, मित्र (और) वरुणने (हमें) शरणंदी है, (हमारे) धनी और हम उस (अभीष्टवर) को प्राप्त करें ॥ ७ ॥

ऋ० मं० १ सू० १३७।

मित्रावरुणौदेवते परुच्छेपऋषिः।

विनियोगः।

१-३। इदं सूक्तं दशरात्रस्य षष्ठेऽहनि प्रातःसवने प्रउगशस्त्रे विनियुक्तम् (आ० ८।१।१२)

१-मैत्रावरुणस्य प्रस्थितयाज्यायाः पुरस्तादाधाप्रक्षेपणीया (आ०८।१।१)

सूक्त का भावार्थ।

हे राजाओ! हे द्युलोक को छूने वाले मित्र और वरुण! हमने पत्थरों से कूट कर सोम को निचोड़ा है, आप आवें, ये दूध से मिले हुए मदकारक सोम हैं, ये मद के करने वाले सोम हैं, हमारी रक्षा करने वाले आप आवें, ये दूध से मिले हुए आपके लिये हैं, दूध से मिले हुए पवित्र सोम आपके लिये हैं ॥ १ ॥ हे मित्र और वरुण! आप आवें, ये सोम की बूंदें हैं, ये दही से मिले हुए सोम हैं, दही से मिले हुए निचोड़े हुए सोम हैं, उषा के प्रकट होने पर और सूर्य्य की किरणों के साथ ही आप के लिये सोम निचोड़ा गया है, आप मित्र और आप वरुण के पीने के लिये निचोड़ा गया है, यज्ञ के लिये और पीने के लिये सुन्दर सोम निचोड़ा गया है ॥ २ ॥ हे मित्र और वरुण! आर्य्य लोग आप दोनों के लिये सोम की पोरी को बहुत दूध वाली गौ की न्याई पत्थरों द्वारा दोहते हैं, हमारे रक्षक आप इधर मुंह करके सोम पीने के लिये हमारी ओर आवें, आर्य वीरों ने मद आपके लिये निचोड़ा है, आप के पीने के लिये यह सम्पूर्ण सोम निचोड़ा है ॥ ३ ॥

मित्रावरुणौदेवते,अतिशक्वराछन्दः १६।८।१६।१२।८

सुषुमायातमद्रिभिर्गोश्रीताम-

त्सराइमे सोमासोमत्सराइमे ।

आराजानादिविस्पृशास्मत्रागन्त-

मुपनः । इमेवांमित्रावरुणागवाशिरः

सोमाःशुक्राःगवाशिरः ॥ १ ॥

सुसुम	वयं सुतवन्तःस्मः	हमने निचोड़ा है
आ	आ+	–
यातम्	आ+यातम्	आओ
अद्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
गोऽश्रीताः	पयोभिर्मिश्रिताः	दूध से मिले हुए;

मत्सराः	मदकारकाः	मद करने वाले
इमे	इमे	ये
सोमासः	सोमाः	सोम
मत्सराः	मदकारकाः	मद करने वाले
इमे	इमे	ये
आ	आ+	-
राजाना	हे राजानौ !	हे राजाओ
दिविऽस्पृशा	दिविस्पर्शयुक्तौ	द्यौ में स्पर्श करने वाले
अस्मऽत्रा	अस्मत्पालकौ	हमारे रक्षक
गन्तम्	आ + गन्तम्, आगच्छतम्	आओ
उप	प्रति	की ओर

नः	अस्मान्	हम को
इमे	इमे	ये
वाम्	युवाभ्याम्	तुम्हारे लिये
मित्रावरुणा	हे मित्रावरुणौ!	हे मित्र(और)वरुण
गोऽआशिरः	पयोभिर्मिश्रिताः	दूध से मिलेहुए
सोमाः	सोमाः	सोम
शुक्राः	शुद्धाः	पवित्र
गोऽआशिरः	पयोभिर्मिश्रिताः	दूध से मिले हुए

संस्कृतार्थः।

हे राजानौ ! दिविस्पर्शयुक्तौ मित्रावरुणौ ! वयं पाषाणैः (सोमम्)सुतवन्तः स्मः (युवाम्) आयातम्, इमे पयोभिर्मिश्रिता मदकारकाः(च सन्ति) इमे मदकारकाः सोमाः (सन्ति)अस्मत्पालकौ(युवाम्)अस्मान् प्रति आगच्छतम्, इमे पयोभिर्मिश्रिता यवयोरर्थम्

(विद्यन्ते) पयोभिर्मिश्रिताः शुद्धाः सोमाः (युवयोरर्थं
विद्यन्ते) ॥ १ ॥

भापार्थः ।

हे राजाओ ! द्युलोक में स्पर्श करने वाले मित्र और वरुण ! हमने पत्थरों से (सोम को) कूट कर निचोड़ लिया है आप दोनों आवें, ये. दूध से मिले हुए (और) मद के करने वाले (हैं) ये मद के करने वाले सोम (हैं), हमारे रक्षक आप हमारी ओर आवें, ये दूध से मिले हुए आपके लिये हैं, दूध से मिले हुए पवित्र सोम आपके लिये हैं ॥ १ ॥

मित्रावरुणौदेवते अतिशक्करीछन्दः१६।८।१६।१२।८

इमआयातमिन्दवःसोमासोदध्या-
शिरः सुतासोदध्याशिरः । उत
वामुषसोबुधिसाकंसूर्यस्यरश्मिभिः
सुतोमित्रायवरुणायपीतये चारुर्ऋ-
तायपीतये ॥ २ ॥

इमे	इमे	ये
आ	आ +	–
यातम्	आ+यातम्	आओ
इन्दवः	सोमबिन्दवः	सोम की बूंदें
सोमासः	सोमाः	सोम
दधिऽ- आशिरः	दध्नामिश्रिताः	दही से मिले हुए
सुतासः	सुताः	निचोड़े हुए
दधिऽ- आशिरः	दध्नामिश्रिनाः	दही से मिले हुए
उत	अपिच	और

वाम्	युवाभ्याम्	तुम्हारे लिये
उषसः	उषसः	उषा के
वुधि	जागरणे	जागने पर
साकम्	सह	साथ
सूर्यस्य	सूर्यस्य	सूर्य्य की
रश्मिऽभिः	किरणैः	किरणों से
सुतः	निष्पीडितः	निचोड़ा गया
मित्राय	मित्राय	मित्र के लिये
वरुणाय	वरुणाय	वरुण के लिये
पीतये	पानाय	पीने के लिये
चारुः	मनोहरः	सुन्दर

ऋताय	यज्ञाय	यज्ञ के लिये
पीतये	पानाय	पीने के लिये

संस्कृतार्थः।

(हे मित्रावरुणौ ! युवाम्) आगच्छतम्, इमे सोमबिन्दवः (सन्ति) दध्नामिश्रिताः सोमाः (सन्ति) दध्नामिश्रिता निष्पीडिताः (सोमाः सन्ति) अपिच उषसो जागरणे (सति)सूर्यस्य किरणैःसह(एव)युवयोरर्थं (सोमः) सुतः, मित्राय वरुणाय पानार्थम् (सोमः सुतः),यज्ञाय पानाय (च) मनोहरः (सोमः सुतः)॥२॥

भावार्थः।

(हे मित्र और वरुण !) आपदोनों आवें, ये सोम की बूंदें (हैं) दही से मिले हुए सोम (हैं) दही से मिले हुए निचोड़े हुए (सोम हैं) और उषा के जागने पर सूर्य की किरणों के साथ (ही) आप दोनों के लिये (सोम) निचोड़ा गया है, मित्र के लिये (और) वरुण के लिये पीने के निमित्त(सोम निचोड़ा गया है) यज्ञ के लिये (और) पीने के लिये सुन्दर सोम निचोड़ा गया है॥ २ ॥

मित्रावरुणौदेवते,अतिशक्करीछन्दः १६।८।१६।१२।८

तांवांधेनुंनवासरीमंशुंदुहन्त्य-
द्रिभिः सोमंदुहन्त्यद्रिभिः । अस्म-
त्रागन्तमुपनोऽर्वाञ्चासोमपीतये ।
अयंवांमित्रावरुणानृभिःसुतः सोम-
आपीतयेसुतः ॥ २ ॥

ताम्	ताम्	उस को
वाम्	युवाभ्याम्	तुम्हारे लिये
धेनुम्	धेनुम्	गौ को
न	इव	जैसे

वासरीम्	पयसाऽऽच्छादयित्रीम्,बहुक्षीरामित्यर्थः	बहुत दूध वाली को
अंशुम्	(सोम-) काण्डम्	(सोम की)डंडी को
दुहन्ति	दुहन्ति	दोहते हैं
अद्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
सोमम्	सोमम्	सोम को
दुहन्ति	दुहन्ति	दोहते हैं
अद्रिऽभिः	पाषाणैः	पत्थरों से
अस्मऽत्रा	अस्मत्पालकौ	हमारी रक्षा करने वाले
गन्तम्	आगच्छतम्	आओ
उप	प्रति	की ओर

नः	अस्मान्	हम को
अर्वाञ्चा	अत्राभिमुखौ	इधर मुख किये हुए
सोमऽपीतये	सोमपानाय	सोम पीने के लिये
अयम्	अयम्	यह
वाम्	युवाभ्याम्	तुम्हारे लिये
मित्रावरुणा	हे मित्रावरुणौ !	हे मित्र और वरुण
नृऽभिः	नरैः	नरों से
सुतः	निष्पीडितः	निचोड़ा हुआ
सोमः	सोमः	सोम
आ	आ+	–
पीतये	आ+पीतये	संपूर्ण पीने के लिये

सुतः	निष्पीडितः	निचोड़ा हुआ

संस्कृतार्थः ।

(हे मित्रावरुणौ ! आर्य्यमनुष्याः) युवयोरर्थं तां वहुक्षीरां धेनुमिव पाषाणैः (सोम-) काण्डं दुहन्ति, पाषाणैः सोमं दुहन्ति, अस्मत्पालकौ (युवाम्) अत्राभिमुखौ (सन्तौ) सोमपानार्थम् अस्मान्प्रति आगच्छतम्, अयं युवयोरर्थं नररभिषुतः,- सम्पूर्णपानाय सोमः अभिषुतः ॥ ३ ॥

भाषार्थः ।

हे मित्र (और) वरुण ! (आर्यमनुष्य) आप दोनों के लिये उस बहुत दूध वाली गौ की न्याईं पत्थरों से (सोम की) डंडी को दोहते हैं, पत्थरों से सोम को दोहते हैं, हमारा रक्षा करने वाले (आप दोनों) इधर मुंह किये हुए सोम पीने के लिये हमारी ओर आवें, यह आप के लिये (आर्य्य-) वीरों ने निचोड़ा है, सम्पूर्ण पीने के लिये सोम को निचोड़ा है ॥ ३॥

इति सप्तत्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम् ।

ऋ० मं०१ सू०१३८।

पूषादेवता, परुच्छेपऋषिः।

विनियोगो लैङ्गिकः।

सूक्तका भावार्थ।

मैं पूषादेव के महत्त्व को बढ़बढ़कर गायन करता हूं, उस देव का बल और उसकी महिमा कभी नहीं कुमलाते, वह तत्काल रक्षा करने वाले और सुख के देने वाले हैं, जिसदेव ने सब के मनों को खेंच लिया है, उस को मं कल्याणकी इच्छासे वारंवार नमस्कार करता हूं॥१॥ जैसे मनुष्य किसी शीघ्र दौड़ने वाले को आवश्यकीय कार्य के लिये मार्ग पर प्रेरण करते हैं, वैसे मैं पूषादेव को अपने स्तोत्रों द्वारा प्रेरण करता हूं, जिससे वह हम आर्य्यों के शत्रुओं को हटावें और ऊंटकी न्याई मरुस्थल के पार लंघाकर फेंक आवें, मैं मरणधर्मा मनुष्य आप कल्याण करने वाले देव को पुकारता हूं आप हमारे स्तोत्रों को बल युक्त करें और ऐसी कृपा करें कि युद्धों में बल को बढ़ाने वाले स्तोत्र हमारे मुख से निकलें॥ २॥ हे बहुतों से स्तुति किये जाने वाले पूषादेव! यह नई रीति हैकि आपही भक्त के चित्तमें प्रकाश उत्पन्न करके उसे स्तुतिशील बनाते हैं और फिर आपही उस के मित्र बन कर रक्षा करते हैं, इसी रीतिके अनुसार हम भी आपसे अर्यों सयों धनको मांगते हैं, आप हमारी त्रुटियों से क्रुद्ध न होकर हमारे समीप आवें, प्रत्येक *संग्राम में

* प्रत्येक संग्राम जो जीवन में नित्य होता रहता है कभी भीतर के और कभी बाहर के शत्रुओं के साथ।

हमारे समीप आकर रक्षा करें ॥ ३ ॥ * हे अजाश्व ! दान शील आप क्रोध न करते हुए हमारे समीपवर्ती हों जिस से हम अपनी कामनाओं को प्राप्त करें, आप हमारे समीप हों जिससे हम यश को प्राप्त करें, आप के कर्म आश्चर्य्ययुक्त हैं, हम चाहते हैं कि हमारे स्तोत्र निर्दोष हों, जिस से आप हमारी तरफ लौटें, हे अत्यन्त प्रकाश वाले ! मैं कदापि आपका अनादर नहीं करूंगा, आपने जो मेरे साथ मित्रता की है उसके लिये मैं कृतघ्न नहीं बनूंगा ॥ ४ ॥

पूषा देवता, अत्यष्टिश्छन्दः । १२।१२।८।८।८।१२।८

प्रप्रपूष्णस्तुविजातस्यशस्यते महित्वमस्यतवसोनतन्दते स्तोत्रमस्यनतन्दते । अर्चामिसुम्नयन्नह सन्त्यूतिंमयोभुवम् । विश्वस्ययोमनआयुयवेमखो देवआयुयुवेमखः ॥ १ ॥

---

* अज अर्थात् बकरा पूषा का वाहन है, शतपथ ब्राह्मण में बकरे को प्रजापति और सब पशुओं का रूप माना है, अज सूर्य्य की उत्पादन शक्ति के स्थानीय है, इसलिये पूषा का वाहन कहा गया है, पूषा भी सूर्य्य का ही एक विशेष नाम है ॥

प्रऽप्र	अग्रेऽग्रे	आगे आगे
पूष्णः	पूष्णः	पूषा का
तुविऽजातस्य	बहूनामर्थमुत्पन्नस्य	बहुतों के लिये उत्पन्न हुए२ का
शस्यते	स्तूयते	स्तुति किया जाता है
महिऽत्वम्	महत्त्वम्	महत्त्व
अस्य	अस्य	इस के
तवसः	बलस्य	बल का
न	न	नहीं
तन्दते	ग्लायते	कुमलाता
स्तोत्रम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र

अस्य	अस्य	इस का
न	न	नहीं
तन्दते	म्लायते	कुमलाता
अर्चामि	नमस्करोमि	मैं नमस्कार करता हूं
सुम्नऽयन्	कल्याणमिच्छन्	कल्याण की इच्छा करता हुआ,
अहम्	अहम्	मैं
अन्तिऽऊतिम्	आसन्नरक्षणम्	तत्काल रक्षा करने वाले को
मयःऽभुवम्	सुखस्यभावयितारम्	सुख के करने वाले को
विश्वस्य	सर्वस्य	सब के
यः	यः	जिस ने

मनः	मनः	मन को
आऽयुयुवे	आकर्षितवान्	खेंचलिया
सखः	पूज्यः (आ०को०)	पूज्य ने
देवः	देवः	देव ने
आऽयुयुवे	आकर्षितवान्	खेंचलिया
सखः	पूज्यः	पूज्य ने

संस्कृतार्थः ।

बहूनामर्थमुत्पन्नस्यपूष्णो महत्त्वम् अधिकमधिकं स्तूयते, अस्य बलम्य (महत्त्वम्) न म्लायते, अस्य स्तोत्रं न म्लायते, कल्याणमिच्छन्नहं आसन्नरक्षणं सुखस्य भावयितारम् (च तम्) नमस्करोमि, यःपूज्यः सर्वस्य मन आकर्षितवान्, पूज्योदेवः (सर्वस्यमनः) आकर्षितवान् ॥ १ ॥

भाषार्थः ।

बहुतों के लिये उत्पन्न हुए २ पूषा का महत्त्व बढ़ चढ़ कर स्तुति किया जाता है उसके बलका

विज्ञापन।

कई कारणों से हम प्रतिमास दो अंक नहीं निकाल सके जैसे सातवें वर्ष के आरम्भ में हमने प्रतिज्ञा की थी, माघ फाल्गुन और चैत्र में कोई अंक नहीं निकला। और भाद्रपद से पौष तक आठ अंक निकल चुके थे। इसलिये यह ८१-८२ अंक वैशाख और ज्येष्ठ के समझने चाहियें आगे को पूर्वकों न्याईं दो महीने में ही दो अंक निकला करेंगे।

मुन्शी जयराम,
मैनेजर ऋग्वेद संहिता
फ़ीरोज़पुर।

अंक ८३-८४] [आषाढ़-श्रावण १९७०

ऋग्वेद संहिता

(वैदिक जीवन व्याख्यायुता)

पदपाठ, शब्दार्थ, संस्कृत और भाषा अनुवाद टिप्पणी और मन्त्रों के आशय पर व्याख्यान से युक्त

जिसको मुलताननिवासी पं॰ शङ्करदत्तशास्त्री की सहायता से शिवनाथ आहिताग्नि ने सम्पादन किया।

लाहौर

पञ्जाब एकानोमीकल यन्त्रालय में मिस्टर लाला लालमन के अधिकार से छपा।

१२ अंकों का अग्रिम मूल्य २)

पहले २४ अंकों का मूल्य ५॥)

८४ अंकों का मूल्य १५॥)

(महत्त्व) नहीं कुमलाता, उसका स्तोत्र नहीं कुमलाता, मैं कल्याण की इच्छा करता हुआ (उस) तत्काल रक्षा करने वाले और सुख के उत्पन्न करने वाले को नमस्कार करता हूं जिस पूज्यने सबके मन को खेंच लिया है, पूज्य देव ने (सब के मनको) खेंच लिया है ॥ १ ॥

पूषादेवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

प्रहित्वापूषन्नजिरंनयामनि
स्तोमेभिःकृण्वऋणवोयथामृध उ-
ष्ट्रोनपीपरोमृधः। हुवेयत्त्वामयो-
भुवं देवंसख्यायमर्त्यः। अस्माक-
माङ्गूषांद्युम्निनस्कृधि वाजेषद्यु-
म्निनस्कृधि ॥ २ ॥

प्र	प्र+	—
हि	खलु	सचमुच
त्वा	त्वाम्	तुझ को
पूषन्	हे पूषन्!	हे पूषा
अजिरम्	शीघ्रगामिनम्	शीघ्रगामी को
न	इव	जैसे
यामनि	मार्गे	मार्ग में
स्तोमेभिः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों से
कृण्वे	प्र+कृण्वे, प्रेरयामि	मैं प्रेरण करता हूं
ऋणवः	निर्गमयेः (ऋणगतौ लेट्यडागमः, उपसर्गलोपश्च)	तू हटावे
यथा	यथा	जैसे

मृधः	शत्रून्	शत्रुओं को
उष्ट्रः	उष्ट्रः	ऊंट
न	इव	जैसे
पीपरः	पारंकुर्याः	पार करे
मृधः	शत्रून्	शत्रुओं को
हुवे	आह्वयामि	मैं बुलाता हूं
यत्	यत्	जो
त्वा	त्वाम्	तुझ को
मयःऽभुवम्	सुखस्य भावयितारम्	सुख के करने वाले को
देवम्	देवम्	देव को
सख्याय	सख्याय	मित्रता के लिये
मर्त्यः	मरणधर्मा	मरणधर्मी

अस्माकम्	अस्माकम्	हमारे
आङ्गूषान्	स्तोमान्	स्तोत्रों को
द्युम्निनः	बलयुक्तान् (आ०को०)	बल वालों को
कृधि	कुरु	कर
वाजेषु	सङ्ग्रामेषु	युद्धों में
द्युम्निनः	बलयुक्तान्	बल वालों को
कृधि	कुरु	कर

संस्कृतार्थः।

हे पूषन्! (अहम्) मार्गे शीघ्रगामिनम् (मनुष्यम्) इव त्वां स्तोत्रैः प्रेरयामि येन (त्वमस्माकम्) शत्रून् निर्गमयेः, उष्ट्र इव (च) शत्रून् पारंकुर्य्याः, यन्मर्त्यः (अहम्) सुखस्यभावयितारं देवंत्वां सख्याय आह्वयामि, (नत् त्वम्) अस्माकंस्तोमान् बलयुक्तान् कुरु, सङ्ग्रामेषु बलयुक्तान् कुरु॥ २॥

भाषार्थः ।

हे पूषा ! मैं आपको स्तोत्रों से प्रेरण करता हूं जैसे शीघ्र चलने वाले मनुष्य को मार्ग में (प्रेरण करते हैं) जिस से (आप हमारे) शत्रुओं को हटावें ऊंटकी न्याई शत्रुओं को पार करें (और) जो मरणधर्मी में सुख के उत्पन्न करने वाले आप देवता को मित्रता के लिये बुलाता हूं (वह) आप हमारे स्तोत्रों को बलयुक्त करें, युद्धों में (हमारे स्तोत्रों को) बल युक्त करें ॥२॥

पूषादेवता,भुरिगत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१३।८

यस्यतेपूषन्त्सख्येविपन्यवः

क्रत्वाचित्सन्तोऽवसाबुभुज्रिर इति-

क्रत्वाबुभुज्रिरे। तामनुत्वानवीयसीं

नियुतंरायईमहे । अहेळमानउरु-

शंससरीभव वाजेवाजेसरीभव ॥३॥

यस्य	यस्य	जिस की
ते	तव	तेरी
पूषन्	हे पूषन् !	हे पूषा
सख्ये	मित्रतायाम्	मित्रता में
विपन्यवः	विशेषेणस्तुति-शीलाः	बहुत स्तति करने वाले
क्रत्वा	प्रबोधनेन	प्रबोधन से
चित्	एव	ही
सन्तः	सन्तः	हुए २
अवसा	रक्षया	रक्षा से
बुभुज्रिरे	सम्पेदिरे	संपन्न हुए
इति	एवमेव	इसी प्रकार

क्रत्वा	ज्ञानेन	ज्ञान से
बुभुज्रिरे	सम्पेदिरे	संपन्न हुए
ताम्	ताम्	उस को
अनु	अनु-(सृत्य)	अनुसरण करके
त्वा	त्वाम्	तुझ को
नवीयसीम्	नवतराम्	अत्यन्त नई को
निऽयुतम्	शतार्बुदम् (भा०को०)	सौ अरब
रायः	धनम्	धन को
ईमहे	याचामहे	हम माँगते हैं
अहेळमानः	अक्रुध्यन्	न क्रोध करता हुआ
उरुऽशंस	हे बहुभिःस्तुत्य !	हे बहुतों से स्तुति किये गए

सरी	समीपगामी	समीप जाने वाला
भव	भव	हो
वाजेऽवाजे	प्रतिसङ्ग्रामे	प्रत्येक संग्राम में
सरी	समीपगामी	समीप जाने वाला
भव	भव	हो

संस्कृतार्थः ।

हे पूषन्! यस्यतव मित्रतायां स्तुतिशीलाः (मनुष्यास्तव) एव प्रबोधनेन (युक्ताः) सन्तो रक्षया सम्पेदिरे, एवमेव ज्ञानेन सम्पेदिरे, तां नवतराम् (रीतिम्) अनुसृत्य (वयम्) त्वां शतार्वुदंधनं याचा महे,हे वहुभिः स्तुत्य ! (त्वम्) अक्रुध्यन् (सन्) समीपगामी भव, प्रतिसङ्ग्रामे समीपगामीभव ॥२॥

भावार्थः ।

हे पूषा ! जिस आपकी मित्रता में स्तुति शील (मनुष्य आप) ही के प्रबोधन से (युक्त) होकर रक्षा से संपन्न हुए हैं, इसी प्रकार ज्ञान से संपन्न हुए

हैं, उस अत्यन्त नई (रीति) के अनुसार (हम) आप से सौ अरब धनको माँगते हैं, हे बहुतों से स्तुति किये गए! (आप) क्रोध न करते हुए समीप आवें, प्रत्येक संग्राम में समीप आवें ॥ ३ ॥

पूषादेवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

अस्याऊषूणउपसातयेभुवोऽहे-
ळमानोररिवाँअजाश्व अवस्यताम-
जाश्व। ओषुत्वाववृतीमहि स्तोमे-
भिर्दस्मसाधुभिः। नहित्वापूषन्न-
तिमन्यआघृणि नतेसख्यमपन्हुवे॥४॥

अस्याः	अस्याः	इस की
ऊ०	(पूरणः)	–
सु	सुष्ठु	खूब

नः	अस्माकम्	हमारे
उप	समीपम्	समीप
सातये	प्राप्तये	प्राप्ति के लिये
भुवः	भव	तू हो
अहेळमानः	अक्रुध्यन्	न क्रोध करता हुआ
ररिऽवान्	दानशीलः	दानशील
अजऽअश्व	अजाएव अश्वस्थानीयायस्य तत्सम्बुद्धौ	हे बकरे रूपी घोड़ों वाले
श्रवस्यताम्	यशइच्छताम्	यश की कामना करने वालों के
अजऽअश्व	हे अजाश्व !	हे बकरे रूपी घोड़ों वाले
ओ०	हे ।	हे

सु	सुतराम्	अच्छी तरह
त्वा	त्वाम्	तुझ को
वर्तयामसि	वर्तयेमहि (अन्तर्भावितण्यर्थात् शपःश्लुः)	हम लौटावें
स्तोमेभिः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों से
दस्म	हे अद्भुतकर्मन् !	हे अद्भुत कर्म वाले
साधुऽभिः	साधुभिः	निर्दोषों से
नहि	नहि	नहीं
त्वा	त्वाम्	तुझ को
पूषन्	हे पूषन् !	हे पूषा
अतिऽमन्ये	अवमन्ये	अनादर करता हूं
आघृणे	हे विभ्राजमान !	हे अत्यन्तदीप्ति वाले
न	न	नहीं

ते	तव	तेरी
सख्यम्	सख्यम्	मित्रता को
अपऽन्हुवे	अपलपामि	मैं निषेध करता हूं

संस्कृतार्थः।

हे अजाश्व पूषन्! दानशीलः (त्वम्)! अक्रुध्यन् (सन्) अस्याः (कामनायाः) प्राप्तये अस्माकं सुष्ठु-समीपे भव, हेअजाश्व! यशइच्छताम् (अस्माकंसुष्ठु समीपेभव) हे अद्भुतकर्मन्! (वयम्) त्वां साधुभिः स्तोत्रैः सुतरां वर्तयेमहि, हे विभ्राजमान! (अहम्) त्वां नावमन्ये,(अहम्) तवसख्यं न अपलपामि ॥४॥

भावार्थः।

हे बकरे रूपी घोड़ों वाले पूषादेव! दानशील(आप) क्रोध न करते हुए इस (कामना) की प्राप्ति के लिये हमारे खूब समीप हों, हे बकरे रूपी घोड़ों वाले! आप हम यश की इच्छा करने वालों के(खूब समीप हों), हे अद्भुत कर्म वाले! (हम) आप को निर्दोष स्तोत्रों द्वारा पूरी तरह से (अपनी ओर) लौटावें, हे अत्यन्त दीप्तिवाले! मैं आपका अनादर नहीं करता (मैं) आप की मित्रता को नहीं निषेध करता ॥ ४ ॥

इत्यष्टात्रिंशदुत्तरशततमं सूक्तम्।

ऋ०मं०१ सू० १३९।

दैवोदासिः परुच्छेपऋषिः, विश्वेदेवादेवताः

विनियोगः-

१—दशरात्रस्य षष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रे आद्या विनियुक्ता (आ०८।१।१२)

३—५ पृष्ठ्यस्य षष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रे युवांस्तोमेभिरित्यादिघन-
तृचः। (आ०८।१।१२)

६—पृष्ठ्यस्य षष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रस्यैन्द्रे तृचे तृतीयैषा (आ०८।१।१२)
तत्रैवसवने प्रस्थितयाज्यानां पुरस्तादन्या ऋचः प्रक्षिप्योभयोभिर्य
ष्टव्यंतत्र होतुः प्रस्थितयाज्यायाः पुरस्तादपा प्रक्षेपणीया। आ०८।१।२

७—दशरात्रस्य षष्ठेऽहनि प्रातःसवनेष्टुः प्रस्थितयाज्यायाः पुर-
स्तादेषावपनीया (आ०८।१।१२) तत्रैवसवने प्रउगशस्त्रे द्वितीया।
(आ०८।१।२)

८—पृष्ठ्यस्य षष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रे एषा प्रस्थितयाज्या (आ०८।१।२)

९—पृष्ठ्यस्य षष्ठेऽहनि अच्छावाकस्य प्रस्थितयाज्याया.पुरस्ता
देषा। (आ०८।१।१२)

११—दशरात्रे षष्ठेऽहनि प्रउगशस्त्रे वैश्वदेवस्यतृचस्य द्वितीयैषा।
(आ०८।१।१२)

सूक्त का भावार्थ।

स्तुतियों की सुनाई हो,सब से पहले मेरा ध्यान अग्नि की स्तुति में लगा है, फिर हम मरुद्गण को बुलाते हैं, इन्द्र और वायु को बुलाते हैं, जो सब से नई स्तुति है वह सूर्य के केन्द्र में लगी है अब हमारे ध्यान खूब जोर से देवताओं में लगें ॥ १ ॥
हे मित्र और वरुण ! जो आप अपने सच्चे रूप को छिपा कर मनोबल द्वारा कृत्रिमरूप को धारण करते हो, वह सुनहरी रूप हमने मन द्वारा ध्यान से और अपने नत्रों से भी देख लिया है जो

विश्वेदेवादेवताः अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

अस्तुश्रौषट्पुरोअग्निंधियादध

आनुतच्छर्धोदिव्यंवृणीमहइन्द्रवा-

यूवृणीमहे । यद्धक्राणाविवस्वति

नाभासंदायिनव्यसी । अधप्रसून-

उपयन्तुधीतयोदेवाँअच्छानधीतयः

॥ १ ॥

अस्तु	भवतु	हो
श्रौषट्	श्रवणम्	सुनाई
पुरः	अग्रे	आगे

अग्निम्	अग्निम्	अग्नि को
धिया	ध्यानेन	ध्यान से
दधे	धारितवानस्मि	मैंने धारण किया है
आ	आ+	–
नु	इदानीम्	अब
तत्	तम्	उस को
शर्धः	गणम् (आ० को०)	गण को
दिव्यम्	दिव्यम्	दिव्य को
वृणीमहे	आ+वृणीमहे	हम वरते हैं
इन्द्रवायू०	इन्द्रवायू	इन्द्र और वायु को
वृणीमहे	वृणीमहे	हम वरते हैं

नेत्र सोम ने हमको दिये हैं* ॥ २ ॥ हे अश्विनो ! देवभक्त मनुष्यों की स्तुति की गूंज आपको हवि ग्रहण करने के लिये आने को प्रेरण करती है,सब लक्ष्मी और अन्न आपके अधीन हैं जब आप आते हैं तो आप के सुनहरी रथ को धाराएँ घी टपकाती हुई चलती हैं† ॥ ३ ॥ हे तेजस्वी अश्विनो ! यह प्रसिद्ध है कि आप ही द्युलोक को खोलते हो, आपके निपुण सारथि हमारे यज्ञों में आप को लाने के लिये आपके रथ में घोड़ों को जोड़ते हैं, हमने स्तुति द्वारा आप का सुनहरी रथ की पीठपर विठा दिया है अब आप अन्तरिक्ष को आज्ञा करते हुए सीधे मार्ग से हमारी ओर पधारें ॥ ४ ॥ हे बल रूपी धन वाले अश्विनो ! आप हम को दिन रात अपने बल में से दान करो, आप का दान हम पर कभी कम न हो, दूसरों पर हमारा दान भी कभी कम न हो ॥५॥ हे वीर इन्द्र ! वीरों के पीने योग्य सोम की बूंदें पत्थरों से निचुड़ कर आपके लिये प्रकट हुई हैं, उनके पान से आप हमको बड़े २ नाना प्रकारके धनों को देने के लिये उत्साहित हों, हे बहुतों से स्तुति किये गये ! आप हमारी स्तुतियों से आवें,अत्यन्त कृपालु आप हमारे पास आवें ॥६॥ हे अग्नि ! हमसे स्तुति किये जाकर आप हमारी बातको सुनो,और पूजनीय देवताओं से जो हमारे राजा हैं हम पर कृपा करने के लिये कहो, हे देवताओ ! जब आपने सूर्य रूपी कामधेनु को अङ्गिराओं के तांई दिया, तब अर्यमा ने उनके साथ मिलकर उसको अन्तरिक्ष रूप में नाना प्रकार से दोहन किया, अर्यमा उसको जानते हैं और मैं भी जानता हूं ‡ ॥ ७ ॥ हे मरुतो ! आप के वीरता के कर्म जो प्राचीन

*-मित्र और वरुण का सच्चा रूप जो सूर्य्य का आत्मा है वह मन द्वारा ध्यान से देखा जा सकता है, और सोमपानद्वारा मन की उच्च अवस्था में शारीरिक नेत्रों से भी देखा जा सकता है।

†—अर्थात् आप के आने से सब दारिद्र्य नाश हो जाते हैं।

‡—नाना प्रकार से दोहन किया—अर्थात सूर्य्य से प्रकाश,

काल में हमारे बड़ों के लिये होते थे वे अब भी हमारे लिये हों,आपके यश हमारे जीते जी क्षीण न हों,जो आप का नित नया अद्भुत और न छीजने वाला कर्म युग युग में गूंजता है वह हम में धारण करो,जो दुःख से सम्पाद्य है वह हम को प्राप्त हो, जो कठिनाई है वह हमारे लिये सहल हो ॥ ८ ॥ मेरे पूर्वज दध्यङ्, अङ्गिरा, प्रियमेध, कण्व, अत्रि और मनु मुझको अपनी सन्तान जानते हैं, उनका देवताओं के साथ सम्बन्ध है, और हमारा उनके साथ संबंध है, इसलिये देवता हम पर कृपा करेंगे, मैं उन महापुरुषों के गौरव को स्मरण करता हुआ नमस्कार करता हूं, मैं इन्द्र और अग्नि को स्तुति के साथ नमस्कार करता हूं ॥ ९ ॥ सृष्टियज्ञ में सूर्यरूपी होता अग्नि *याज्या पढ़ते हैं, हविके डालने वाले देवता सूर्य किरणरूपी हवि को डालते हैं, बृहस्पति चन्द्रकिरण रूपी सोम द्वारा यज्ञ करते हैं, बिजली की गरज रूपी सोम कूटने के पत्थर का शब्द दूर से हम अपने कानों से सुनते हैं, सुन्दर कर्म करने वाले बृहस्पति रूप यजमान ने मनुष्यों के लिये वृष्टिरूप जलों को पाया है बृहस्पति ने बहुत जलों को पाया है, ॥ १० ॥ हे देवताओ ! आप जो ग्यारह द्युलोक में हो, ग्यारह पृथिवी पर और ग्यारह अन्तरिक्ष में हो, वे सब आप मेरे इस यज्ञ को स्वीकार †करो ॥ ११ ॥

उष्णता, विद्युत, वर्षा, नाना रंग और रूप इत्यादि अनेक धन को अन्तरिक्ष में दोहन किया,उस कामधेनु को अर्यमादेव अर्थात् सूर्य का आत्मा और मैं अर्थात मेरा आत्मा दोनों जानतेहैं क्योंकि दोनों एक हैं।

* याज्यावे स्तुतिके मन्त्रहैंजिनको पढ़कर हवि डालीजाती है।

† 'ग्यारह' एक कल्पित संख्या है, द्युलोक के रहने वाले देवता जैसे अश्विन, उषा, त्वष्टा, सविता, भग, पूषा, विष्णु, वरुण, यम, और सूर्य्य आदि हैं, पृथिवी के रहने वाले देवता जैसे पृथिवी आपः, नद्यः, अन्न, ओषधयः, पर्वत, रात्रि, श्रद्धा इत्यादि, अन्तरिक्ष में रहने वाले देवता जैसे, वायु, इन्द्र, बृहस्पति, विश्वकर्मा, सोम, चन्द्रमा मरुत, रुद्र, पर्जन्य, इत्यादि।

विश्वेदेवादेवताः अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

अस्तुश्रौषट्पुरोअग्निंधियादध
आनुतच्छर्धोदिव्यंवृणीमहइन्द्रवा-
यूवृणीमहे । यद्धक्राणाविवस्वति
नाभासंदायिनव्यसी । अधप्रसून-
उपयन्तुधीतयोदेवाँअच्छानधीतयः
॥ १ ॥

अस्तु	भवतु	हो
श्रौषट्	श्रवणम्	सुनाई
पुरः	अग्रे	आगे

अग्निम्	अग्निम्	अग्नि को
धिया	ध्यानेन	ध्यान से
दधे	धारितवानस्मि	मैंने धारण किया है
आ	आ+	–
नु	इदानीम्	अब
तत्	तम्	उस को
शर्धः	गणम् (आ० को०)	गण को
दिव्यम्	दिव्यम्	दिव्य को
वृणीमहे	आ+वृणीमहे	हम वरते हैं
इन्द्रवायू०	इन्द्रवायू	इन्द्र और वायु को
वृणीमहे	वृणीमहे	हम वरते हैं

भाषार्थः ।

(हमारी स्तुतियों की) सुनाई हो, मैंने पहिले अग्नि को ध्यान से धारण किया है,अब (हम) उस दिव्य (मरुद्–) गण को बरते हैं (हम) इन्द्र (और) वायु को बरते हैं,जो सचमुच (हमारी) सब से नई स्तुति (है वह) सूर्य्य के केन्द्र में लगी है,अब हमारे ध्यान खूब जोर से समीप जावें, हमारे ध्यान मानो देवताओं को लक्ष रखकर समीप जावें ॥ १ ॥

मित्रावरुणौदेवते,अत्यष्टिश्छन्दः१२।१२।८।८।८।१२।८

यद्धत्यन्मित्रावरुणावृतादध्या ददाथेअनृतंस्वेनमन्युना दक्षस्य स्वेनमन्युना । युवोरित्थाधिसद्मस्व- पश्यामहिरण्ययम् । धीभिश्चनम- नसास्वेभिरक्षभिः सोमस्यस्वेभि- रक्षभिः ॥ २ ॥

यत्	यत्	जो
ह्	खलु	सचमुच
त्यत्	तम्	उस को
मित्रावरुणौ	हे मित्रावरुणौ!	हे मित्र (और) वरुण
ऋतात्	सत्यात्+अधि	सत्य से
अधि	+अधि	–
आददाथे०	आदधाथे	लेकर धारण करते हो
अनृतम्	अनृतम्	झूठ को
स्वेन	स्वकीयेन	अपने से
मन्युना	तेजसा	तेजसे
दक्षस्य	मनोबलस्य	मनोबल के

यत्	यत्	जो
ह॒	खलु	सच मुच
आ॒शा	स्तुतिः	स्तुति
वि॒वस्व॑ति	विवस्वति	सूर्य्य में
नाभा॑	नाभौ	केन्द्र में
स॒म्ऽदायि॑	सम्बद्धाऽभूत्	लग गई
नव्य॑सी	नवतरा	अत्यन्त नई
अध॑	अनन्तरम्	पीछे
प्र	प्रकर्षेण	ज़ोर से
सु	सुष्टु	खूब
नः॒	अस्माकम्	हमारे

उप	उप+	–
यन्तु	उप+यन्तु	समीप जावें
धीतयः	ध्यानानि	ध्यान
देवान्	देवान	देवताओं को
अच्छ	अभिलक्ष्य	लक्ष रख कर
न	इव	न्याईं
धीतयः	ध्यानानि	ध्यान

संस्कृतार्थः।

(अस्माकंस्तुत्याः)श्रवणंभवतु (अहम्) अग्रे अग्निं ध्यानेन धारितवानस्मि, इदानीम् (वयम्) तंदिव्यं (मारुतम्) गणं वृणीमहे, (वयम्) इन्द्रवायू वृणीमहे, याखलु(अस्माकम्)नवतरास्तुतिः(अस्तिसा)विवस्वतः केन्द्रे सम्बद्धाऽभूत्, अनन्तरमस्माकं ध्यानानि सुष्ठु प्रकर्षेण उपयन्तु(अस्माकम्)ध्यानानि देवानभिलक्ष्य इव उपयन्तु॥ १ ॥

स्वेन	स्वकीयेन	अपने से
मन्युना	तेजसा	तेज से
युवोः	युवयोः	तुम दोनों के
इत्था	एवम् (आ० को०)	इस तरह
अधि	अधि+	–
सद्मऽसु	अधि+सद्मसु	स्थानों में
अपश्याम	अपश्याम	हमने देखा है
हिरण्ययम्	स्वर्णमयम्	सुनहरी को
धीभिः	ध्यानैः	ध्यानों से
चन	अपि	भी
मनसा	मनसा	मन से
स्वेभिः	स्वकीयैः	अपनियों से

अ॒क्षऽभिः	चक्षुर्भिः	आँखों से
सोम॑स्य	सोमस्य	सोम की
स्वेभिः	स्वकीयैः	अपनियों से
अ॒क्षऽभिः	चक्षुर्भिः	आँखों से

संस्कृतार्थः।

हे मित्रावरुणौ ! यत् (युवाम) स्वकीयेन तेजसा सत्यात् अनृतम् खलु आदधाथे, स्वकीयमनोवलस्य तेजसा (आदधाथे) एवम् (वयम्) युवयोः स्थानेषु स्वर्णमयम् (रूपम्) मनसा ध्यानैः (च) स्वकीयैः चक्षुर्भिरपि अपश्याम, स्वकीयैः सोमस्यचक्षुर्भिः अपश्याम ॥ २ ॥

भावार्थः।

हे मित्र (और) वरुण ! जो आप अपने तेज द्वारा सचमुच सत्यसे झूठ को धारण करते हो, अपने मनोवल के तेज द्वारा धारण करते हो, इस प्रकार हमने आपके स्थानों में सुनहरी (रूप) को मन (और) ध्यान से (और) अपने नेत्रों से भी देखा है, अपने सोम के नेत्रों से देखा है ॥ २ ॥

अश्विनौदेवते निचृदत्यष्टिश्छन्दः १२।११।८।८।८।१२।८

युवांस्तोमेभिर्देवयन्तोअश्विना

आवयन्तइवश्लोकमायवोयुवांहव्या

भ्यार्श्यवः। युवोर्विश्वाअधिश्रियः

पृत्तश्चविश्ववेदसा। प्रुषायन्तेवां

पवयोहिरण्यये रथेदस्राहिरण्यये

॥ २ ॥

युवाम्	युवाम्	तुम दोनों को
स्तोमेभिः	स्तोत्रैः	स्तोत्रों से
देवयन्तः	देवभक्ताः	देवभक्त

अश्विना	हे अश्विनौ !	हे अश्विनो !
आश्रवयन्तःऽइव	सर्वतःश्रावयन्त इव	मानो सब ओर से सुनाते हुए
श्लोकम्	स्तुतिमन्त्रम्	स्तुति के मन्त्र को
आयवः	मनुष्याः	मनुष्य
युवाम्	युवाम्	तुम दोनों को
हव्या	हव्यानि	हवियों को
अभि	प्रति	की ओर
आयवः	मनुष्याः	मनुष्य
युवोः	युवयोः	तुम दोनों में
विश्वाः	सर्वाः	सब

अधि	अधि·(श्रिताः)	आश्रित हैं
श्रियः	लक्ष्म्यः	लक्ष्मियां
पृक्षः	अन्नम्	अन्न
च	च	और
विश्ववऽ-वेदसा	हे सर्वधनौ !	हे सब धनों के स्वामी
प्रुषायन्ते	स्रावयन्ति	टपकाता है
वाम्	युवयोः	तुम दोनों के
पवयः	नेमयः (निघ०५।५)	पहिये की धाराएं (हाल)
हिरण्यये	हिरण्मये	सुनहरी में
रथे	रथे	रथ में

दस्रा	हे उग्रो !	हे भयानको
हिरण्यये	हिरण्मये	सुनहरी में

संस्कृतार्थः ।

हे अश्विनौ ! देवभक्ताः मनुष्याः युवां स्तोत्रैः (प्रेरयन्ति) मनुष्याः स्तुतिमन्त्रं सर्वतः श्रावयन्त इव युवाम्(प्रेरयन्ति)मनुष्याः हवींषिप्रति युवां (प्रेरयन्ति) हे सर्वधनौ ! सर्वाः लक्ष्म्यः अन्नंच युवयोरधि-(श्रिताः सन्ति) युवयोः हिरण्मये (लग्नाः) नेमयः (घृतम्) स्रावयन्ति, हे उग्रौ ! हिरण्मये रथे लग्नाः नेमयः (घृतं स्रावयन्ति) ॥ ३ ॥

भावार्थः ।

हे अश्विनो ! देवभक्त मनुष्य आप को स्तोत्रों से (प्रेरण करते हैं) स्तुति के मन्त्र को मानो सब ओर से सुनाते हुए आप को (प्रेरण करते हैं), मनुष्य हवियों के प्रति (आप को प्रेरण करते हैं), हे सब धनों के स्वामी ! सब लक्ष्मियां और अन्न आप के आश्रित हैं, आप के सुनहरी में (लगी हुई) पहिये की धाराएं(घी) टपकाती हैं,हे भयानक देवो ! सुनहरी रथ में लगी हुई पहिये की धाराएं (घी टपकाती हैं) ॥ ३ ॥

अश्विनौदेवते, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

अचेतिदस्राव्यू१नाकमृण्वथो युञ्जतेवांरथयुजोदिविष्टिष्वध्व- स्मानोदिविष्टिषु । अधिवांस्थाम वन्धुरे रथेदस्राहिरण्यये । पथेवय- न्तावनुशासतारजो ऽञ्जसाशासता रजः ॥ ४ ॥

अचेति	ज्ञातमभूत्	जाना गया है
दस्रा	हे उग्रौ !	हे तेजवालो !
वि	वि+	–
ऊम्०	एव	ही

नाकम्	द्युलोकम्	द्युलोक को
ऋण्वथः	वि+ऋणवथः, उद्घाटयथः	खोलते हो
युञ्जते	योजयन्ति	जोड़ते हैं
वाम्	युवयोरर्थम्	तुम्हारे लिये
रथऽयुजः	रथस्ययोजयितारः	सारथि
दिविष्टिषु	यज्ञेषु	यज्ञों में
अध्वस्मानः	अच्यवमानाः	न चूकने वाले
दिविष्टिषु	यज्ञेषु	यज्ञों में
अधि	उपरि	ऊपर
वाम्	युवाम्	तुम दोनों को
स्थाम	अस्थापयाम (उत्तर भाग)	हमने स्थापित किया है

वन्धुरे	पीठे	पीढ़ी पर
रथे	रथे	रथ में
दस्रा	हे उग्रौ !	हे तेज वालो
हिरण्यये	हिरण्मये	सुनहरी में
पथाऽइव	मार्गेणेव	मानो रस्ते से
यन्तौ	गन्तारौ	जाने वाले
अनुऽशासता	आज्ञापयन्तौ	आज्ञा करते हुए
रजः	अन्तरिक्षम्	अन्तरिक्ष को
अञ्जसा	ऋजुना	सीधे से
शासता	शासतौ	राज्य करते हुए
रजः	अन्तरिक्षम्	अन्तरिक्ष को

संस्कृतार्थः।

हे उग्रौ! (अश्विनौ!) (इदमस्माभिः) ज्ञातम् (यत्) युवामेव द्युलोक मुद्घाटयथः, सारथयो युवयोरर्थं यज्ञेषु (अश्वान्) योजयन्ति, अच्यवमानाः (सारथयः यज्ञेषु अश्वान् योजयन्ति), हे भीषणौ! (वयम्)युवां स्वर्णमये रथपीठे अस्थापयाम,(युवाम्) अन्तरिक्षम् आज्ञापयन्तौ मार्गेणेवगन्तारौ (स्थः), अन्तरिक्षं शासतौ (सन्तौ) ऋजुनामार्गेण आगच्छथः॥ ४॥

भापार्थ।

हे तेज वाले (अश्विनो!) (यह हमको) मालूम है, (कि) आपही द्युलोक को खोलते हो,सारथि आप के लिये यज्ञों में (घोड़ों को)जोड़ते हैं, न चूकने वाले सारथि यज्ञों में (घोड़ों को जोड़ते हैं), हे भयानक (देवो!) हमने आपको सुनहरी रथ की पीढ़ी पर बिठाया है, आप अन्तरिक्ष को आज्ञा करते हुए मानो रस्ते से चलते हो, अन्तरिक्ष पर राज्य करते हुए सीधे (रस्ते) से आते हो॥ ४॥

अश्विनौदेवते वृहतीछन्दः ८।८।१२।८

शचीभिर्नःशचीवसू दिवानक्तं

दशस्यतम् । मावांरातिरुपदसत्

कदाचना स्मद्रातिःकदाचन ॥ ५ ॥

शचीभिः	बलैः	बलों से
नः	अस्मान्	हम को
शचीऽवसू०	हे बलधनौ !	हे बल रूप धन वालो !
दिवा	दिवा	दिन में
नक्तम्	रात्रौ	रात्रि में
दशस्यतम्	ददेथाम् (दशस्यतिर्दानार्थः)	दो
मा	न	नहीं
वाम्	युवयोः	तुम दोनों का
रातिः	दानम्	दान

उप	उप+	
दसत्	उप+दसत्, उपक्षीणंभवतु (लोडर्थेलुङ्)	कम हो
कदा	कदा	कभी
चन	अपि	भी
अस्मत्	अस्माकम्	हमारा
रातिः	दानम्	दान
कदा	कदा	कभी
चन	अपि	भी

संस्कृतार्थः।

हे बलधनौ! (युवाम्) अस्मान् (निज-) बलैः दिवसे रात्रौ (च)ददेथाम्,युवयोर्दानं कदापि उपक्षीणं न भवतु अस्माकं दानंकदापिउपक्षीणं नभवतु॥ ५॥

भाषार्थः ।

हे बलरूपी धनवालो ! (आप दोनों) हमको (अपने) बलों से दिन रात दान करो, आपका दान कभी भी कम न हो, हमारा दान कभी भी कम न हो॥५॥

इन्द्रोदेवता, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८८।१२।८।

वृषन्निन्द्रवृषपाणासइन्दव इमे सुताअद्रि षुतासउद्भिदस्तुभ्यंसुता-सउद्भिदः । तेत्वामन्दन्तुदावने महेचित्रायराधसे । गीर्भिर्गिर्वाहः स्तवमानआगहि सुमृळीकोनआ-गहि ॥ ६ ॥

वृषन्	हे वीर्यवन् !	हे वीर्यवान

इन्द्र	हे इन्द्र !	हे इन्द्र
वृषऽपानासः	वीरैर्पातव्याः	वीरों के पीने योग्य
इन्दवः	सोमबिन्दवः	सोम की बूंदें
इमे	इमे	ये
सुताः	निष्पीडिताः	निचोड़ी गईं
अद्रिऽसुतासः	पाषाणैर्निष्पीडिताः	पत्थरों से निचोड़ी गईं
उत्ऽभिदः	प्रकटिताः (सन्ति)	प्रकट हुईं (हैं)
तुभ्यम्	तुभ्यम्	तेरे लिये
सुतासः	निष्पीडिताः	निचोड़ी हुईं
उत्ऽभिदः	प्रकटिताः (सन्ति)	प्रकट हुईं (हैं)

ते	ते	वे
त्वा	त्वाम्	तुझ को
मन्दन्तु	हर्षयन्तु	हर्षित करें
दावने	दानार्थम्	दान के लिये
महे	महते	महान के लिये
चित्राय	नाना विधाय	अनेक प्रकारके लिये
राधसे	धनाय	धन के लिये
गीःऽभिः	स्तुतिभिः	स्तुतियों से
गिर्वाहः	हे स्तुतीनांवोढः	हे स्तुतियों के ढोने वाले
स्तवमानः	स्तवमानः	स्तुति किया जाता हुआ
आ	आ +	–

गहि	आ+गहि,आगच्छ	आओ
सुऽमृळीकः	सुकृपालुः	अत्यन्त कृपालु
नः	अस्मान्	हम को
आ	आ+	—
गहि	आ+गहि,आगच्छ	आओ

संस्कृतार्थः ।

हे वीर्यवन् ! इन्द्र ! वीरैर्पातव्याः इमे निष्पीडिताः पाषाणैर्निष्पीडिताः सोमबिन्दवः प्रकटिताः(सन्ति), तुभ्यम् निष्पीडिताःप्रकटिताः सन्ति, तेत्वां महतो नानाविधस्य(च) धनस्य दानाय हर्षयन्तु, हे स्तुतीनां वोढः ! स्तुतिभिः स्तवमानः, (त्वम्) आगच्छ, सुकृपालुः त्वमस्मान्(प्रति) आगच्छ ॥ ६ ॥

भावार्थः ।

हे वीर्यवान इन्द्र ! वीरों के पीने योग्य ये निचोड़ी हुईं पत्थरों से निचोड़ी हुई सोम की बूंदें प्रकट हुईं (हैं) आपके लिये निचुड़ कर प्रकट हुईं (हैं) वे आप

को महान (और) नाना प्रकार के धन के देने लिये हर्षित करें, हे स्तुतियों के होने वाले ! स्तुतियों से स्तुति किये गए (आप)आवें,अत्यन्त कृपालु आप हमारी (ओर) आवें ॥ ६ ॥

मरुतोदेवता,अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

ओषूणोअग्नेशृणुहित्वमीळितो

देवेभ्योब्रवसियज्ञियेभ्यो राजभ्यो

यज्ञियेभ्यः । यद्धत्यामङ्गिरोभ्यो

धेनुंदेवाअदत्तन । वितांदुह्रेअर्यमा

कर्तरीसचाँएषतांवेदमेसचा ॥ ७ ॥

ओ०	हे	हे
सु	सुष्ठु	अच्छी प्रकार

नः	अस्मान्	हम को
अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि
शृणुहि	शृणु	सुन
त्वम्	त्वम्	तू
ईळितः	स्तुतः	स्तुति किया गया
देवेभ्यः	देवेभ्यः	देवताओं के ताईं
ब्रवसि	ब्रूहि (लेटमडागमः)	बोल
यज्ञियेभ्यः	यज्ञार्हेभ्यः	पूजा के योग्यों के ताईं
राजऽभ्यः	राजभ्यः	राजाओं के ताईं
यज्ञियेभ्यः	यज्ञार्हेभ्यः	पूजा के योग्यों के ताईं
यत्	यदा	जब

ह	खलु	सचमुच
त्याम्	ताम्	उस को
अङ्गिरःऽभ्यः	अङ्गिरोभ्यः	अंगिराओं के लिये
धेनुम्	धेनुम्	गौ को
देवाः	हे देवाः !	हे देवताओ
अदत्तन	यूयं दत्तवन्तः	आपने दी
वि	विविधम्	नाना प्रकार से
ताम्	ताम्	उस को
दुह्रे	दुग्धवान्	दोहा
अर्यमा	अर्यमा	अर्यमा ने
कर्तरि	कूपे (निघं० ३ । २३)	कूप में
सचा	सह	साथ

एषः	एषः	यह
ताम्	ताम्	उस को
वेद	जानाति	जानता है
मे	मया (तृतीयार्थे षष्ठी)	मेरे से
सचा	सह	साथ

संस्कृतार्थः।

हे अग्ने ! स्तुतः त्वमस्मान् सुष्ठुशृणु, यज्ञार्हेभ्योदेवेभ्यश्चब्रूहि, यज्ञार्हेभ्योराजभ्यः (ब्रूहि) हे देवाः!यदा(यूयम्) तांधेनुमङ्गिरोभ्यः खलुदत्तवन्तः (तदा) अर्यमा (तैः) सह तां विविधं कूपे दुग्धवान्, एषः (अर्यमा)तां मया सह जानाति ॥ ७ ॥

भावार्थः ।

हे अग्नि ! स्तुति किये गए आप हम को अच्छी प्रकार सुनो,(और) पूजनीय देवताओं के ताईं बोलो, पूजनीय राजाओं के ताईं (बोलो),हे देवताओ! सच-मुच जब (आप ने) उस गौ को अंगिराओं के ताईं

दिया (तब) अर्यमा ने (उनके) साथ उसको नाना प्रकार से कूप में दोहन किया, वह (अर्यमा) मेरे साथ उसको जानते हैं ॥ ७ ॥

मरुतोदेवताः, अत्यष्टिश्छन्दः १२।१२।८।८।८।१२।८

मोषुवो अस्मदभितानिपौंस्या सनाभूवन्द्युम्नानिमोतजारिषु रस्मत्पुरोतजारिषुः । यद्वश्चित्रं युगे युगे नव्यंघोषादमर्त्यम् । अस्मासुतन्मरुतो यच्चदुष्टरं दिधृताय-च्चदुष्टरम् ॥ ८ ॥

मो०	मा	नहीं
सु	(पूरणः)	–

वः	युष्माकम्	तुम्हारे
अस्मत्	अस्मत्+अभि, अस्मान्प्रति	हमारी ओर
अभि	+अभि	–
तानि	तानि	वे
पौंस्या	वीरकर्माणि	वीरकर्म
सना	जीर्णानि	पुराने
भूवन्	भवन्तु	हों
द्युम्नानि	यशांसि	यश
मा	मा	नहीं
उत	च	और
जारिषुः	क्षीणानि भवन्तु	क्षीण हों

अस्मत्	अस्मत्	हमारे
पुरा	पुरा	पहले
उत	च	और
जारिषुः	क्षीणानि भवन्तु	क्षीण हों
यत्	यत्	जो
वः	युष्माकम्	तुम्हारा
चित्रम्	विचित्रम्	विचित्र
युगेऽयुगे	युगे युगे	प्रत्येक युग में
नव्यम्	नूतनम्	नया
घोषात्	घोषति (लेट्याडागमः)	गूँजता है
अमर्त्यम्	अमरणधर्मकम्	न मरने वाला

अस्मासु	अस्मासु	हम में
तत्	तत्	वह
मरुतः	हे मरुतः !	हे मरुतो
यत्	यत्	जो
च	च	और
दुस्तरम्	दुःखेन सम्पादनीयम्	कठिनाईसेमिलने योग्य को
दिधृत	धारयत	धारण करो
यत्	यत्	जो
च	च	और
दुस्तरम्	दुःखेनतरणीयम्	दुःख से तिरने योग्य को

संस्कृतार्थः।

हे मरुतः! अस्मान् प्रति तानि युष्मदीयानि वीरकर्म

णि जीर्णानि माभवन्तु यशांसि च क्षीणानि मा भवन्तु अस्मत्-(कालात्) पूर्वं क्षीणानि मा भवन्तु, यद्युष्माकं विचित्रं नूतनम् अमर्त्यम् (च कर्म) युगे युगे घोषति, तदस्मासु धारयत, यच्च दुःखेन सम्पादनीयम्(अस्ति) (तदपिधारयत), यच्च दुःखेन तरणीयम् (अस्ति तद्-धारयत) ॥ ८ ॥

भाषार्थः ।

(हे मरुतो !) वे आपके वीरकर्म हमारे लिये पुराने न हों, और यश क्षीण न हों, हमारे (काल से) पहिले क्षीण न हों, जो आपका विचित्र नया (और) न मरने वाला (कर्म) युग युग में गूँजता है, वह हम में धारण करो, जो दुःख से मिलने योग्य है (वह हम को दो) जो दुःख से तिरने योग्य है (वह हमारे लिये सहल हो) ॥ ८ ॥

इन्द्राग्नीदेवते, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

दध्यङ्ह मे जनुषं पूर्वो अङ्गिराः प्रियमेधः कण्वो अत्रिर्मनुर्विदु स्ते-मे पूर्वे मनुर्विदुः । तेषां देवेष्वायति-

रस्माकंतेषुनाभयः । तेषांपदेनम-
ह्यानमेगिरेन्द्राग्नीआनमेगिरा।६।

दध्यङ्	दध्यङ्	दध्यङ्
ह	खलु	सचमुच
मे	मम	मेरे
जनुषम्	जन्म	जन्म को
पूर्वः	पुरातनः	प्राचीन
अङ्गिराः	अङ्गिराः	अङ्गिरा
प्रियऽमेधः	प्रियमेधः	प्रियमेध
कण्वः	कण्वः	कण्व
अत्रिः	अत्रिः	अत्रि

मनुः	मनुः	मनु
विदुः	जानन्ति	जानते हैं
ते	ते	वे
मे	मम	मेरे
पूर्वे	पूर्वजाः	पूर्वज
मनुः	मनुः	मनु
विदुः	जानन्ति	जानते हैं
तेषाम्	तेषाम्	उन का
देवेषु	देवेषु	देवताओं में
आऽयतिः	सम्बन्धः (आ० को०)	संबंध
अस्माकम्	अस्माकम्	हमारा

तेषु	तेषु	उन में
नाभयः	सनाभिताः	पैतृक संबंध
तेषाम्	तान् (द्वितीयार्थे षष्ठी)	उन को
पदेन	गौरवेण	गौरव के कारण
महि	महता	बड़े के कारण
आ	आ+	–
नमे	आ+नमे,प्रणमामि	प्रणाम करता हूं
गिरा	स्तुत्या	स्तुति से
इन्द्राग्नी०	इन्द्राग्नी	इन्द्र (और) अग्नि को
आ	आ+	–
नमे	आ+नमे,प्रणमामि	प्रणाम करता हू
गिरा	स्तुत्या	स्तुति से

संस्कृतार्थः ।

पुरातनोदध्यङ्, अङ्गिराः, प्रियमेधः, कण्वः, अत्रिः, मनुः(च) मम जन्म खलु जानन्ति, ते ममपूर्वजाः मनुः (च) जानन्ति, तेषां देवेषुसम्बन्धः (अस्ति) अस्माकं तेषु सनाभिनाः (वर्तन्ते) तेषां महता गौरवेण स्तुत्या तान्प्रणमामि, इन्द्राग्नी स्तुत्या प्रणमामि ॥९॥

भावार्थः ।

प्राचीन दध्यङ्, अङ्गिरा, प्रियमेध, कण्व, अत्रि, (और) मनु मेरे जन्म को सचमुच जानते हैं, वे मेरे पूर्वज(और) मनु जानते हैं, उनका देवताओं में सम्बन्ध (है,) हमारा उनके साथ पैतृक संबंध (है,) उनके महान गौरव के कारण मैं स्तुति के साथ उनको प्रणाम करता हूं, मैं इन्द्र (और)अग्नि को स्तुति के साथ प्रणाम करता हूं ॥ ९ ॥

बृहस्पतिर्देवता, अत्यष्टिश्छन्दः ।१२।१२।८।८।८।१२।८

होतायक्षद्वनिनोवन्तवार्यं बृह-
स्पतिर्यजतिवेनउक्षभिः पुरुवा-
रेभिरुक्षभिः । जगृभ्माद्गुरआदिशं

ष्लोकमद्रेरधत्मना । अधारयदररिन्दानिसुक्रतुः पुरुसद्मानिसुक्रतुः ॥ १० ॥

होता	होता	होता
यक्षत्	याज्यांपठति (लड्र्थेलेट्)	याज्या को पढ़ता है
वनिनः	(हविषः) समर्पकाः (भा०को०)	(हवि) देने वाले
वन्त	समर्पयन्ति (भा०को० लडर्थेलङ्)	देते हैं
वार्यम्	वरणीयम् (हविः)	उत्तम (हवि) को
बृहस्पतिः	बृहस्पतिः	बृहस्पति
यजति	यागंकरोति	यज्ञ करता है
वेनः	कान्तः	प्यारा

उ॒क्षऽभि॑:	सेचकैः (सोमैः)	सींचने वाले (सोमों) से
पु॒रु॒ऽवारे॑भि:	बहुभिर्वरणीयैः	बहुतों से कामना करने योग्यों से
उ॒क्षऽभि॑:	सेचकैः (सोमैः)	सींचने वाले (सोमों)से
ज॒गृ॒भ्म	गृह्णीमः	हम ग्रहण करते हैं
{दू॒रेऽआ॑-दिशम्	दूरे आज्ञापयन्तम्	दूर में बोलने वाले को
श्लोक॑म्	शब्दम्	शब्द को
अद्रे॑:	पाषाणस्य	पत्थर के
अध॑	इदानीम्	अब
त्मना॑	स्वेन (आकारलोपः)	अपने से
अधा॑रयत्	धारितवान्	धारण किया है
अ॒र॒रि॑न्दानि	उदकानि (निघं० १।१२)	जलों को

सुऽक्रतुः	सुकर्मा	सुन्दर कर्म वाले ने
पुरु	बहूनि	बहुतों को
सद्मानि	जलानि (निघं० १।१२)	जलों को
सुऽक्रतुः	सुकर्मा	सुन्दर कर्मवाले ने

संस्कृतार्थः ।

होता(अग्निः)याज्यांपठति,हविषः समर्पकाः(देवाः) वरणीयम् (हविः)समर्पयन्ति, कान्तोबृहस्पतिःसेचकैः (सोमैः)यागंकरोति, बहुभिर्वरणीयैःसोमैःयागंकरोति, इदानीम्(वयम्) दूरे आज्ञापयन्तंपाषाणस्यशब्दंनिज कर्णैःगृह्णीमः,सुकर्मा(बृहस्पतिः)उदकानि धारितवान्, सुकर्मा बृहस्पतिः बहूनि जलानि धारितवान् ॥१०॥

भाषार्थः ।

होता (अग्नि) याज्या पढ़ते हैं, हवि.के डालने वाले (देवता)उत्तम हवि को डालते हैं, प्यारे बृहस्पति सींचने वाले सोमों द्वारा याग को करते हैं, बहुतों से कामना करने योग्य सोमों द्वारा याग को करते हैं, अब हम दूर बोलने वाले पत्थर के शब्द को अपने

(कानों) से सुनते हैं, सुकर्मा (बृहस्पति) ने जलों को धारण किया है, सुकर्मा (बृहस्पति) ने बहुत जलों को धारण किया है ॥ १० ॥

विश्वेदेवादेवताः, त्रिष्टप्छन्दः ११।११।११।११

येदेवासोदिव्येकादशस्थ पृथिव्यामध्येकादशस्थ । अप्सुक्षितोमहिनैकादशस्थ तेदेवासोयज्ञमिमंजुषध्वम् ॥ ११ ॥

ये	ये	जो
देवासः	हे देवाः !	हे देवताओ
दिवि	द्युलोके	द्युलोक में
एकादश	एकादश संख्याकाः	ग्यारह

स्थ	स्थ	तुम हो
पृथि॒व्याम्	पृथिव्याम्	पृथिवी में
अधि॑	उपरि	ऊपर
एका॑दश	एकादश संख्या काः	ग्यारह
स्थ	स्थ	तुम हो
अ॒प्सु॒ऽक्षितः॑	अन्तरिक्षवासिनः	अन्तरिक्ष में रहने वाले
म॒हि॒ना	महत्त्वेन	महत्त्व से
एका॑दश	एकादशसंख्याकाः	ग्यारह
स्थ	स्थ	तुम हो
ते	ते	वे
दे॒वा॒सः॒	हे देवाः !	हे देवताओ
य॒ज्ञम्	यज्ञम्	यज्ञ को

इमम्	इमम्	इस को
जुषध्वम्	संभजध्वम्	सेवन करो

संस्कृतार्थः ।

हे देवाः! ये (यूयम्) द्युलोके एकादशसंख्याकाः स्थ, पृथिव्यामुपरि एकादश संख्याकाः स्थ, अन्तरिक्षवासिनः (च) महत्त्वेन एकादश संख्याकाः स्थ, हेदेवाः ! (ते यूयम्) इमंयज्ञं संभजध्वम् ॥ ११ ॥

भाषार्थः ।

(हे देवताओ!) जो (आप)द्युलोक में ग्यारह हो, पृथिवी के ऊपर ग्यारह हो, (और) महत्त्व के कारण अन्तरिक्ष में रहने वाले ग्यारह हो, हे देवताओ! वे आप इस यज्ञ को सेवन करो॥ ११ ॥

इत्येकोनचत्वारिंशदुत्तरशततमं सूक्तम्।

ऋ० मं० १ सू० १४० ।

अग्निर्देवता, उचथ्यपुत्रोदीर्घतमाऋषिः ।

विनयोगः—

१—१३ । इदंसूक्तं प्रातरनुवाकस्याग्नेये क्रतौ जागते छन्दसि आश्विनशस्त्रच विनियुक्तम् (आ० ४।१३।७)

सूक्त का भावार्थ ।

जैसे मनुष्य के लिये अन्न तैय्यार करते हैं वैसे वेदी में बैठने के स्वभाव वाले स्थानप्रिय अग्निदेव के लिये स्थान को तैय्यार करो, और जैसे मनुष्य को वस्त्र पहनाते हैं वैसे अन्धकार के नाश करने वाले पवित्र अग्नि को स्तोत्र से आच्छादन करो ॥ १ ॥ द्विजन्मा अग्नि तीन *प्रकार के अन्न को सेवन करते हैं और खाए हुए को साल में फिर बढ़ा देते हैं, वह बैल के मुख से घास आदि को और हस्ती के मुख से वन के वृक्षों को खाते हैं ॥ २ ॥ उसकी दोनों †माताएँ जो इकट्ठी रहती हैं और काली पड़गई हैं काँप कर बालक को शीघ्र गर्भ से छोड़ती हैं, वह बालक आगे को जीभ निकालता हुआ और नाश करता हुआ शीघ्रता से छूटता है, वह पास रहकर सेवा करने योग्य और रक्षा करने योग्य है, वह यजमान-रूप अपने पिता की वृद्धि करनेवाला है ॥३॥ अब मनुष्य के हितके

---

* "तीन प्रकार अन्न को" अर्थात् आहवनीय रूप से हवि को, जठराग्नि रूप से अन्नादि को और दावाग्नि रूप से वनों को, ये तीनों प्रकार के अन्न प्रतिवर्ष फिर उत्पन्न होते हैं "द्विजन्मा" इसलिये कि अरणी से एक जन्म और आधान संस्कार से दूसरा जन्म, जैसे मनुष्य का माता से एक जन्म और उपनयन से दूसरा जन्म होता है ॥

† "दोनों माताएँ" अर्थात् अधरारणि और उत्तरारणि ॥

लिये वनों को जलाने के निमित्त अग्निदेव चलते हैं,*तो उनके लिये वेगवान,शीघ्रगामी, नानारंग वाले,हलके दौड़ने वाले,वायुसे प्रेरित होकर सरक से निकल जाने वाले,स्वच्छन्द चलने की इच्छा वाले और रस्ते को काला करने वाले घोड़े जोड़े जाते हैं ।४। जब अग्निदेव भूमिको छूते हुए श्वास लेते हुए और गरजते हुए चलते हैं तो उनकी ज्वालाएँ बड़े रूपको धारण करती हुईं और बड़े शरीर वाले अंधकार को सहज से नाश करती हुईं चलती हैं ॥५॥ अग्निदेव पीले रंग-वाली बूटियोंको मानो आच्छादन करते हुए झुकते हैं और अत्यन्त धाड़ते हुए ऐसे चलते हैं जैसे बैल पत्नियों की ओर जाता है, वह बलको दिखाते हुए अपने शरीरोंको प्रकाशित करते हैं और भयंकर बैल की न्याईं किसी से न पकड़े जाते हुए सींगों को हिलाते हैं।६। अग्निदेव छिप कर और प्रकट होकर ओषधियों को आलिंगन करते हैं और जानते हुए उन जानने वालियों में नित्य शयन करते हैं, वे ओषधियाँ फिर बढ़ती हैं और दिव्यरूप को धारण करती हैं,सूर्य-रूप अग्नि और ओषधियाँ मिलकर बसत में द्यो और पृथिवी रूप माता पिता के रूप को बदल देती हैं ॥ ७ ॥ लंबे बालों वाली ज्वालारूपी कुमारियाँ अग्निदेव को पकड़ लेती हैं और मर कर उस जीवित दावाग्नि के लिये फिर उठ खड़ी होती हैं, अग्नि उन-की जरावस्था को छुड़ाते हुए और प्राण बल तथा जीवन की शक्ति को धारण करते हुए खूब गरजते हुए चलते हैं ॥ ८ ॥ अग्निदेव पृथिवी रूपी माता को ओढ़नी को चाटते हुए जयको प्राप्त करते हुए और जीवों को भगाते हुए चलते हैं, वह दो पैरों वाले और चार पैरों वाले जीवों को बल देते हुए सब ओर सफाई करते हुए चलते हैं और उनके पीछे २ मार्ग काला होता जाता है ॥ ९ ॥ घर को प्यार करने वाला छिद्र करता

---

* ४ से ९वें मंत्र तक दावाग्नि का वर्णन है, जो वनों को जलाकर मनुष्यों के लिये रहने के योग्य स्थान को बनाती है ॥

हुआ अग्नि रूपी बैल हमारे धनवानों के घर में पूजा के लिये सदा प्रदीप्त हो, और जैसे युवा वीर बालक के वस्त्रों को त्यागकर युद्ध में कवच पहन कर चारों ओर से शत्रु के धन को जीतता है वैसे अग्निदेव हमारे धनवानों के लिये धन को जीतें ॥ १० ॥ हे अग्नि! भक्ति पूर्वक निवेदन किया हुआ यह स्तोत्र उस स्तोत्र से जो प्रिय है परन्तु बुरी तरह से निवेदन किया गया है आप को अधिक प्रिय हो,जो आपका चमकता हुआ शरीर है उस से हमारे लिये रमणीय धन की कामना करो ॥११॥ हे अग्नि ! आप हमारे घर के मनुष्यों के लिये और शूरवीर योधाओं के लिये ऐसी नाव को दें जिस के चप्पे सदा चलते रहें और जो आश्रय देनेमें समर्थ हो,जो हमारे वीर और धनवानों को पार लंघावे और शरण रूप हो ॥१२॥ हे अग्नि ! स्तोत्र रचने में हमारा उत्साह बढ़ाओ,द्यौ और पृथिवी तथा स्वयं चलने वाली नदियाँ हम को गौ आदि पशु जौ आदि अन्न और लंबी आयु को देवें, उषाएँ हमारे लिये बल को और कामना के योग्य पदार्थों को वरें ॥ १३ ॥

अग्निर्देवता जगतीछन्दः १२।१२।१२।१२

वेदिषदेप्रियधामायसुद्युते धासिमिवप्रभरायोनिमग्नये। वस्त्रेणेववासयामन्मनाशुचिंज्योतीरथं शुक्रवर्णंतमोहनम् ॥ १ ॥

वे॒दि॒ऽसदे॑	वेद्यांसदनशीलाय	वेदी में बैठने वाले के लिये
प्रि॒यऽधा॑माय	प्रियस्थानाय	जिसको स्थान प्याराहैऐसेकेलिये
सु॒ऽद्यु॑ते	अतीवद्योतमानाय	अत्यन्त प्रकाश-मान के लिये
धा॒सिम्ऽइ॑व	अन्नमिव (निघं०२।७)	अन्न की न्याईं
प्र	प्र +	–
भ॒र॒	प्र+भर, सम्पादय	सम्पादन कर
योनि॑म्	स्थानम्	स्थान को
अ॒ग्नये॑	अग्नये	अग्नि के लिये
व॒स्त्रे॑णऽइव	वस्त्रेणेव	वस्त्र से जैसे
वा॒स॒य॒	आच्छादय	ढक
मन्म॑ना	स्तोत्रेण	स्तोत्र से

शुचिम्	पवित्रम्	पवित्र को
ज्योतिः ऽरथम्	ज्योतीरथम्	ज्योति रूप रथ वाले को
शुक्रऽवर्णम्	शुक्रवर्णम्	उज्ज्वल रंग वाले को
तमःऽहनम्	तमसोहन्तारम्	अंधेरे के नाश करने वाले को

संस्कृतार्थः ।

(हे मनुष्य)!वेद्यां सदनशीलाय,प्रियस्थाना,यअतीव द्योतमानाय (च) अग्नये अन्नमिव स्थानं सम्पादय, (तम्) पवित्रं ज्योतीरथं शुक्रवर्णं तमसोहन्तारम् (चाऽग्निम्) वस्त्रेणेव स्तोत्रेणाऽऽच्छादय ॥ १ ॥

भावार्थः ।

(हे मनुष्य!) वेदी में बैठने वाले, स्थान को प्यार करने वाले (और) अत्यन्त प्रकाश वाले अग्नि के लिये अन्न की न्याईं स्थान को सम्पादन कर, उस पवित्र, ज्योति रूप रथ वाले, उज्ज्वल रंग वाले (और) अंधेरे के नाश करने वाले (अग्नि) को वस्त्र की न्याईं स्तोत्र से ढक ॥ १ ॥

अग्निर्देवता जगतीछन्दः। १२।१२।१२।१२।

अभिद्विजन्मा त्रिवृदन्नमृज्यते सं-
वत्सरे वावृधे जग्धमी पुनः। अन्यस्या-
सा जिह्वया जेन्यो वृषा न्य१न्येन वनि-
नो मृष्ट वारणः ॥ २ ॥

अभि	अभि +	—
द्विऽजन्मा	द्विजन्मा	दो वार जन्मने वाला
त्रिऽवृत्	त्रिप्रकारम्	तीन प्रकार वाले को
अन्नम्	अन्नम्	अन्न को
ऋज्यते	अभि+ऋज्यते, प्राप्नोति	पाता है
संवत्सरे	सम्वत्सरे	साल में

ववृधे	वर्धयति (अन्तर्भावितण्यर्थः)	बढ़ाता है
जग्धम्	भक्षितम्	खाए हुए को
ईम्०	(पूरणः)	–
पुनः०	पुनः	फिर
अन्यस्य	अन्यस्य	एक के
आसा	मुखेन	मुख से
जिह्वया	जिह्वया	जिह्वा से
जेन्यः	जयशीलः (मा० को०)	जयशील
वृषा	वृषः	बैल
नि	नि+	–
अन्येन	अन्येन	दूसरे से

वनिनः	वनसम्बन्धिनो वृक्षान्	वनके वृक्षों को
मृष्ट	नि+मृष्ट,निमार्ष्टि, निःशेषीकरोति	निःशेष करता है
वारणः	गजः	हस्ती

संस्कृतार्थः ।

द्विजन्मा (अग्निः) त्रिप्रकारम् अन्नं प्राप्नोति, भक्षितम् (च) संवत्सरे पुनर्वर्धयति, (सः) जयशीलो वृषः अन्यस्य मुखेन*जिह्वया (च भक्षयति सः) गजः अन्येन (मुखेन)*वनवृक्षान् निःशेषीकरोति ॥२॥

भाषार्थः।

दोवार जन्मने वाले (अग्नि) तीन प्रकार के अन्न को पाते हैं (और)खाए हुए को साल भर में फिर बढ़ा देते हैं, वह जयशील बैल एक के मुख (और) जिह्वा से (खाता है और वह) हस्ती दूसरे (मुख) से वन के वृक्षों को निःशेष करता है॥ २॥

* प्रयोजन यह है कि बैल की खाने की शक्ति और हाथी की वृक्षों के उखाड़ने की शक्ति रूपान्तर में अग्नि की ही शक्ति है॥

अग्निर्देवता जगतीछन्दः ।१२।१२।१२।१२

कृष्णप्रुतौ वेविजे अस्य सक्षिता उभा तरेते अभि मातरा शिशुम् । प्राचाजिह्वं ध्वसयन्तं तृषुच्युत मासाच्यं कुपयं वर्धनं पितुः ॥ ३ ॥

कृष्णऽप्रुतौ	कृष्णवर्णतां प्राप्नुवत्यौ	काली हुई हुई
वेविजे०	कम्पेते (लड्यंलिट्)	काँपती हैं
अस्य	अस्य	इस की
सऽक्षितौ	समाननिवासे	इकट्ठी रहने वालीं
उभा	उभे	दोनों

तरेते०	अभि+तरेते, मोचयतः (आ० को०)	छोड़ती हैं
अभि	अभि+	–
मातरा	मातरौ	माताएँ
शिशुम्	बालकम्	बालक को
प्राचाऽजिह्वम्	अग्रजिह्वम्	आगे जीभ निकाले हुए को
ध्वसयन्तम्	नाशयन्तम्	नाश करते हुए को
तृषुऽच्युतम्	क्षिप्रंप्रादुर्भवितारम्	शीघ्र प्रकट होने वाले को
आ	आ+	–
साच्यम्	आ+साच्यम्, उपसेवितव्यम्	पास रहकर सेवा करनेयोग्य को

कृपयम्	गोपनीयम्	रक्षा करने योग्य को
वर्धनम्	वर्धयितारम्	बढ़ाने वाले को
पितुः	पितुः	पिता के

संस्कृतार्थः ।

कृष्णावर्णतांप्राप्तवत्यौ समाननिवासे अस्य उभे मातरौ कम्पेते, अग्रजिह्वम् (तमः) नाशयन्तं क्षिप्रप्रादुर्भवितारम् उपसेवितव्यं गोपनीयं पितुः वर्धयितारम् (च) बालकम् (गर्भात्) मोचयतः ॥३॥

भाषार्थः ।

काली हुई हुई इकट्ठी रहने वालीं इसकी दोनों माताएँ काँपती हैं (और) आगे जीभ निकाले हुए, (अंधेरे को) नाश करते हुए, शीघ्र प्रकट होने वाले, पास रह कर सेवा करने योग्य, रक्षा करने योग्य (और) पिता के बढ़ाने वाले बालक को (गर्भ से) छोड़ती हैं ॥ ३ ॥

अग्निर्देवता जगतीछन्दः । १२।१२।१२।१२ ।

सुमद्वो३श्मनविमानवस्यते रघु-

द्रुवःकृष्णसीतासऊजुवः । असमना अजिरासोरघुष्यदो वातजूताउप-युज्यन्तआशवः ॥ ४ ॥

मुमुद्रवः	स्वाच्छन्द्य-मिच्छन्तः	स्वच्छन्दता की इच्छा वाले
मनवे	मनवे	मनु के लिये
मानवस्यते	मानवानिच्छते	मनुष्यों को चाहने वाले के लिये
रघुऽद्रुवः	लघुधावनयुक्ताः	हलके दौड़ने वाले
कृष्णाऽसीतासः	कृष्णमार्गाः	काले रस्ते वाले
ऊम्०	(पूरणः)	–
जुवः	वेगवन्त.	वेगवान

असमनाः	भिन्नवर्णाः (आ० को०)	भिन्न रंगों वाले
अजिरासः	शीघ्रगामिनः	तेज चलने वाले
रघुऽस्यदः	लघुसर्पन्तः	सहज से सटकने वाले
वातऽजूताः	वातेन प्रेरिताः	वायु से प्रेरण किये हुए
उप	उप+	–
युज्यन्ते	उप+युज्यन्ते	जोड़े जाते हैं
आशवः	अश्वाः (आ०को०)	घोड़े

संस्कृतार्थः।

मानवानिच्छते मनवे स्वाच्छन्द्यमिच्छन्तो लघुधावन्तः कृष्णमार्गाः वेगवन्तो भिन्नवर्णाः शीघ्रगामिनो लघुसर्पन्तो वातप्रेरिताः (च) अश्वाः उपयुज्यन्ते ॥ ४ ॥

भावार्थः।

मनुष्यों को चाहने वाले मनु* के लिये स्वच्छ-

---

* यहां अग्नि को मनु कहा है ॥

न्दता की इच्छा करने वाले, हलके दौड़ने वाले, काले रस्ते वाले, वेगवान, भिन्न रंगों वाले, तेज चलने वाले, सहज से सटकने वाले, (और) वायु से प्रेरण किए हुए घोड़े जोड़े जाते हैं ॥ ४ ॥

अग्निर्देवता जगतीछन्दः । १२।१२।१२।१२ ।

आदस्यतेध्वसयन्तोवृथेरते कृष्णमभ्वंमहिवर्पःकरिक्रतः।यत्सीं महीमवनिंप्राभिमर्मृश दभिश्वसन्त्स्तनयन्नेतिनानदत् ॥ ५ ॥

आत्	तदा (मा० को०)	तब
अस्य	अस्य	इस के
ते	ते	वे

ध्वसयन्तः	नाशयन्तः	नाश करते हुए
वृथा	अनायासेन	सहज से
ईरते	गच्छन्ति	जाते हैं
कृष्णाम्	अन्धकारम्	अन्धकार को
अभ्वम्	बृहत्कायम्	बड़े शरीर वाले को
महि	महत्	बड़ा
वपुः	रूपम्	रूप
करिक्रतः	अत्यर्थं कुर्वन्तः	अत्यन्त करते हुए
यत्	यदा	जब
सीम्	(पूरणः)	–
महीम्	महतीम्	बड़ी को

अवनिम्	पृथिवीम्	पृथिवी को
प्र	प्रकर्षेण	अत्यन्त
अभि	अभि+	—
मर्मृशत्	अभि+मर्मृशत्, अभितः स्पृशति (लडर्थे लङयडभावः)	चारों ओर से स्पर्श करता है
अभिऽश्वसन्	सर्वतःश्वसन्	सब ओर से श्वास लेता हुआ
स्तनयन्	गर्जन्	गरजता हुआ
एति	गच्छति	जाता है
नानदत्	अतिशब्दंकुर्वन्	अत्यन्त शब्द करता हुआ

संस्कृतार्थः।

यदा (अग्निः) महतीं पृथिवीम् अभितः स्पृशति,

सर्वतःश्वसन् गर्जन्अतिशब्दंकुर्वन् (च)गच्छति तदा अस्य ते(स्फुलिङ्गाः)अत्यर्थंमहारूपं कुर्वन्तः बृहत्कायम् अन्धकारम्(च)अनायासेन नाशयन्तो गच्छन्ति ।५।

भाषार्थः ।

जब (अग्निदेव) बड़ी पृथिवी को चारों ओर से छूते हैं (और) सब ओर श्वास लेते हुए गरजते हुए तथा अत्यन्त शब्द करते हुए चलते हैं तब उसके वे (चिंगारे)अत्यन्त बड़े रूपको करते हुए और बड़े शरीर वाले अन्धकार को सहजसे नाश करते हुए चलते हैं५

अग्निर्देवता जगतीछन्दः। १२।१२।१२।१२।

भूषन्नयोऽधिबभ्रूषुनम्नते वृषेव पत्नीरभ्येतिरोरुवत् । ओजायमानस्तन्वश्चशुम्भते भीमोनशृङ्गादविधावदुर्गृभिः ॥ ६ ॥

भूषन्	आच्छादयन् (भा॰ को॰)	ढकता हुआ
न	इव	जैसे
यः	यः	जो
अधि	अधि +	–
वभ्रूषु	अधि + वभ्रूषु, वभ्रुवर्णासु	पीले रंग वालियों में
नम्नते	नमति	झुकता है
वृषाऽइव	वृषभ इव	वैल की न्याई
पत्नीः	पत्नीः	पत्नियों को
अभि	प्रति	की ओर
एति	गच्छति	जाता है
रोरुवत्	अत्यर्थंगर्जन्	अत्यन्त गरजता हुआ

ओजायमानः	बलंप्रकटयन्	बल को प्रकट करता हुआ
तन्वः	शरीराङ्गानि (द्वितीयार्थे प्रथमा)	शरीर के अंगों को
च	च	और
शुम्भते	भूषयति (अन्तर्भावितण्यर्थः)	सिंगारता है
भीमः	भयङ्करः	भयानक
न	इव	की न्याई
शृङ्गा	शृङ्गाणि (शेर्लोपः)	सींगों को
दविधाव	अत्यर्थंधूनयति (लडर्थेलिट्)	अत्यन्त हिलाता है
दुःऽगृभिः	ग्रहीतुमशक्यः	न पकड़ा जाने वाला

संस्कृतार्थः।

यः(अग्निः) आच्छादयन्निव बभ्रुवर्णास्(ओष धाः) नमति, वृषभइव अत्यर्थं गर्जन् पर्नाः प्र

गच्छति,बलंप्रकटयन् (च) शरीराङ्गानि भूषयति (सः) ग्रहीतुमशक्यः (सन्) भयङ्करः (वृषभः) इवशृङ्गाणि अत्यर्थं धूनयति ॥ ६ ॥

भापार्थः ।

जो (अग्नि) ढकते हुए की न्याईं पीले रंग वाली (बूटियों) में झुकते हैं,बैल की न्याईं अत्यन्त गरजते हुए पत्नियों की ओर जाते हैं (और) बल को प्रकट करते हुए शरीर के अंगों को चमकाते हैं (वह) न पकड़े जाने वाले भयंकर (बैल) की न्याईं सींगों को हिलाते हैं ॥ ६ ॥

अग्निर्देवता जगतीछन्दः । १२।१२।१२।१२ ।

ससंस्तिरोविष्टिरःसंगृभायति जानन्नेवजानतोनित्यआशये । पुनर्वर्धन्तेअपियन्तिदेव्य मन्यद्वर्पः पित्रोःकृरावतेसचा ॥ ७ ॥

सः	सः	वह
सम्ऽस्तिरः	आच्छन्नः	छिपा हुआ
विऽस्तिरः	प्रकटः	प्रकट
सम्	सम् +	–
गृभायति	सम्+गृभायति, संगृह्णाति, आलिङ्गतीत्यर्थः	आलिङ्गन करता है
जानन्	जानन्	जानता हुआ
एव	एव	ही
जानतीः	जानतीः	जाननेवालियोंको
नित्यः	नित्यः	नित्य
आ	आ +	–

शये	आ+शये, आशेते (लोपस्तमात्मने-पदेष्विति तलोपः)	सोता है
पुनः	पुनः	फिर
वर्धन्ते	वर्धन्ते	बढ़ते हैं
अपि	अपि +	—
यन्ति	अपि+यन्ति, प्राप्नुवन्ति	प्राप्त होते हैं
देव्यम्	देवभावम्	देवभाव को
अन्यत्	अन्यत्	दूसरे को
वर्पः	रूपम्	रूप को
पित्रोः	पित्रोः	माता पिता के
कृण्वते	कुर्वन्ति	करते हैं
सचा	सम्भूय	मिल कर

संस्कृतार्थः।

सः नित्यः (अग्निः) आच्छन्नः प्रकटः (च) सन् (ओषधीः) आलिङ्गत, जानन्नेव (च तासु) जानतीषु शेते, (ताओषधयः) पुनर्वर्धन्ते देवभावम् (च) प्राप्नुवन्ति, (अग्निरोषधयश्च) सम्भूय पित्रोरूपम् अन्यत् कुर्वन्ति ॥ ७ ॥

भावार्थः।

वह नित्य (अग्नि) छिपे हुए (और) प्रकट हुए २ (ओषधियों को) आलिंगन करते हैं, (और) जानते हुए (उन) जानने वालियों में शयन करते हैं, (वे ओषधियाँ) फिर बढ़ती हैं, (और) देवभाव को प्राप्त होती हैं (अग्नि और ओषधियाँ) मिल कर माता पिता के रूप को दूसरा कर देते हैं ॥ ७ ॥

अग्निर्देवता जगतीछन्दः १२।१२।१२।१२

तमग्रुवःकेशिनीःसंहिरेभिर ऊ-
र्ध्वास्तस्थुर्मम्रुषीःप्रायवेपुनः। ता-
सांजरांप्रमुञ्चन्नेतिनानदद्वसुंपरं

जनयञ्जीवमस्तृतम् ॥ ८ ॥

तम्	तम्	उस को
अग्रुवः	कुमार्यः (आ० को०)	कुमारियाँ
केशिनीः	लम्बकेशयुक्ताः	लम्बे बालों वाली
सम्	सम्	–
हि	खलु	सचमुच
रेभिरे	सम्+रेभिरे, गृह्णन्ति (छन्दसि लिट्)	पकड़ती हैं
ऊर्ध्वाः	उन्नताः	ऊंची
तस्थुः	प्र+तस्थुः, प्रतिष्ठन्ति (छन्दसि लिट्)	चलती हैं
मम्रुषीः	मृताः (पूर्वसवर्णदीर्घः)	मरी हुईं

प्र	प्र+	—
आयवे	जीवते	जीते हुए के लिये
पनः०	पुनः	फिर
तासाम्	तासाम्	उन की
जराम्	जरावस्थाम्	जरावस्था को
प्रऽमुञ्चन्	मोचयन्	छुड़ाता हुआ
एति	गच्छति	चलता है
नानदत्	अत्यर्थगर्जन्	अत्यन्त गरजता हुआ
असुम्	प्राणम्	प्राण को
परम्	परम्	उत्तम को
जनयन्	उत्पादयन्	उत्पन्न करता हुआ

जीवम्	जीवम्	जीव को
अस्तृतम्	अनाच्छादितम्	न दबने वाले को

संस्कृतार्थः ।

तं लम्बकेशयुक्ताः कुमार्यः खलु संगृह्णन्ति (ताः) मृताः जीविते (अग्नये) पुनः उन्नताः (सत्यः)प्रतिष्ठन्ति(सः) तासां जरावस्थां मोचयन् प्राणं अनाच्छादितं जीव--(धारणसामर्थ्यं च) उत्पादयन् अत्यर्थं गर्जन् च) गच्छति।८।

भाषार्थः ।

सचमुच उसको लम्बे बालों वाली कुमारियाँ पकड़ती हैं (वे) मरी हुई जीते हुए (अग्नि)के लिये फिर उठ खड़ी (होकर, चलती हैं (वह) उनकी जरावस्था को छुड़ाते हुए उत्तम प्राण (और) न दबने वाली जीव(धारण की शक्ति को) उत्पन्न करते हुए और अत्यन्त गरजते हुए चलते हैं ॥ ८ ॥

अग्निर्देवता जगतीछन्दः १२।१२।१२।१२

अधीवासंपरिमातूरिहन्नह

तुविग्रेभिः सत्वभिर्याति विजयः । वयोदधत्पद्वतेरिह्वत्सदा नद्र्येनी सचतेवर्तनोरह ॥ ९ ॥

अधीवासम्	उपरिधार्यमाणं वस्त्रम्	ओढनी को
परि	परितः	चारों ओर से
मातुः	मातुः	माता की
रिहन्	लिहन्	चाटता हुआ
अह	इतिप्रसिद्धम्	यह प्रसिद्ध है
तुविऽग्रेभिः	प्रभूतगमनैः	बहुत चलने वालों से
सत्वऽभिः	जीवैः	जीवों से
याति	वि+याति, दूर गच्छति	दूर जाता है

वि	वि +	–
ज्रयः	जयंप्राप्नुवन् (आ० को०)	जयको प्राप्त करता हुआ
वयः	बलम्	बल को
दधत्	प्रयच्छन्	देता हुआ
पत्ऽवते	पादवते	पैरोंवाले के लिये
रेरिहत्	अत्यर्थलिहन्	अत्यन्त चाटता हुआ
सदा	सदा	सदा
अनु	पश्चात्	पीछे
श्येनी	श्यामवर्णः	काले रंग वार
सचते	सेवते	सेवन करता है
वर्तनिः	मार्गः	मार्ग

अह	इतिप्रसिद्धम्	यह प्रसिद्ध है

संस्कृतार्थः।

(अग्निः) मातुरुत्तरीयं परितोलिहन् जयंप्राप्नुवन् (च) प्रभूतगमनैःजीवैःसह दूरं गच्छतिइतिप्रसिद्धम् (सः) पादवते बलंप्रयच्छन् सदा अत्यर्थं लिहन् (गच्छति) श्यामवर्णो मार्गः (च) तमनुसेवते (एतदपि) प्रसिद्धम् ॥ ९ ॥

भाषार्थः।

(अग्नि) माता की ओढनी को सब ओर से चाटते हुए (और)जय को प्राप्त करते हुए बहुत चलने वाले जीवों के साथ दूर तक जाते हैं यह प्रसिद्ध है,दुपाये और चौपाये के लिये बल को देते हुए सदा अत्यन्त चाटते हुए (चलते हैं और) काले रंग का मार्ग उनके पीछे २ चलता है यह भी प्रसिद्ध है ॥ ९ ॥

अग्निर्देवता जगतीछन्दः।१२।१२।१२।१२

अस्माकमग्ने मघवत्सुदीदि-

ह्यधश्वसीवान्वृषभोदमूनाः। अवा-

स्याशिशुमतीरदीदेर्वर्मेवयुत्सुपरि-

जर्भुराणः ॥ १० ॥

अस्माकम्	अस्माकम्	हमारे
अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि
मघवत्ऽसु	धनवत्सु	धनवानों में
दीदिहि	दीप्यस्व	चमको
अध	इदानीम्	अब
श्वसीवान्	श्वसनवान्	श्वास लेता हुआ
वृषभः	वृषभः	बैल
दमूनाः	दममनाः (दमतिग्रहणाग निरु० ३।४)	घर को प्यार करने वाला

अव॒ऽअस्य	परित्यज्य	त्याग कर
शिशु॒ऽमतीः	शिशुसम्बन्धिनीः (लीलाः)	बचपन की (लीलाओं)को
अदीदेः	भृशंदीप्यस्व	खूब चमको
वर्मऽइव	कवचमिव	कवच को मानो
युत्ऽसु	युद्धेषु	युद्धों में
परि॒ऽजर्भुराणः	परिगृह्णन् (आ० को०)	पहनता हुआ

संस्कृतार्थः ।

हे अग्ने ! गृहमनाःश्वसन् वृषभः (त्वम्) इदानीम् अस्माकं धनवत्सु दीप्यस्व, (त्वम्) शिशुसम्बन्धिनीः (लीलाः) त्यक्त्वा युद्धेषु कवचमिव परितो गृह्णन् भृशं दीप्यस्व ॥ १० ॥

भाषार्थः ।

हे अग्नि ! घर को प्यार करने वाले श्वास लेते हुए बैल (आप) अब हमारे धनवानों में चमकें आप

बचपन की (लीलाओं) को त्याग कर युद्ध में कवच को मानो पहनते हुए खूब चमकें ॥१०॥

अग्निर्देवता जगतीछन्दः १२।१२।१२।१२

इदमग्ने सुधितं दुर्धितादधि प्रियादु चिन्मन्मनः प्रेयो अस्तु ते। यत्ते शुक्रं तन्वो३ रोचते शुचि तेनास्मभ्यं वनसि रत्नमा त्वम् ॥ ११ ॥

इदम्	इदम्	यह
अग्ने	हे अग्ने!	हे अग्नि
सुऽधितम्	सुष्ठुनिवेदितम्	भली प्रकार निवेदन किया हुआ
दुःऽधितात्	दुष्ठुनिवेदितात्	बुरी प्रकार निवेदन किये हुए से

अधि	+अधि	–
प्रियात्	प्रियात्	प्रिय से
ऊम्॰	खलु	सचमुच
चित्	अपि	भी
मन्मनः	स्तोत्रात्	स्तोत्र से
प्रेयः	प्रियतरम्	अधिकप्रिय
अस्तु	अस्तु	हो
ते	तुभ्यम्	तेरे लिये
यत्	यत्	जो
ते	तव	तेरा
शुक्रम्	दीप्तम्	प्रकाशमान

त॒न्व॑:	शरीरम् (प्रथमार्थे षष्ठी)	शरीर
रोच॑ते	रोचते	चमकता है
शु॒चि॑	निर्मल	निर्मल
ते॑न	तेन	उससे
अ॒स्मभ्य॑म्	अस्मभ्यम्	हमारे लिये
व॒न॒से॒	आ+वनसे,सर्वतः कामयस्व	सब ओर से कामना कर
रत्न॑म्	रमणीयं धनम्	रमणीय धन को
आ	आ +	–
त्वम्	त्वम्	तू

संस्कृतार्थः।

हे अग्ने! इदं सुनिवेदितम् (स्तोत्रम्) खलु प्रियादपि दुर्निवेदितात् स्तोत्रात् तुभ्यम् प्रियतरम् अस्तु, यत् तव दीप्तं शरीरं निर्मलं रोचते तेन त्वम् अस्मभ्यं रमणीयं धनं सर्वतः कामयस्व ॥ ११ ॥

भाषार्थः।

हे अग्नि ! यह भली प्रकार निवेदन किया हुआ (स्तोत्र) बुरी तरह निवेदन किये हुए प्रिय स्तोत्र से भी आप के लिये अधिक प्रिय हो, जो आप का प्रकाशमान शरीर निर्मल चमकता है उससे आप हमारे लिये रमणीय धन को सब ओर से कामना करें ॥ ११ ॥

अग्निर्देवता त्रिष्टुप्छन्दः ११।११।११।११

रथायनावमुतनोगृहाय नित्या-

रित्रांपद्वतींरास्यग्ने। अस्माकंवीराँ-

उतनोमघोनो जनाँश्चयापारया-

च्छर्मयाच ॥ १२ ॥

रथाय	रथिने (आ०को०)	रथ वाले के लिये
नावम्	नावम्	नाव को

उत	च	और
नः	अस्माकम्	हमारे
गृहाय	गृहजनाय	घर के मनुष्यों के लिये
नित्यऽअरित्राम्	नित्यमुदकाकर्षण काष्ठोपेताम्	सदा चप्पे वाली को
पत्ऽवतीम्	पादोपेताम्	पैरों वाली को
रासि	देहि	दे
अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि
अस्माकम्	अस्माकम्	हमारे
वीरान्	वीरान्	वीरों को
उत	अपि	भी

नः	अस्माकम्	हमारे
मघोनः	धनवतः	धनवानों को
जनान्	मनुष्यान्	मनुष्यों को
च	च	और
या	या	जो
पारयात्	पारयेत्	पार करे
शर्म	शरणम्	शरण-को
या	या	जो
च	च	और

संस्कृतार्थः ।

हे अग्ने ! (त्वम्) अस्माकं गृहजनाय रथिनेच निरयारित्रां पादोपेताम् (च) नावंदेहि या अस्माकं वीरान् अस्माकं धनवतो मनुष्यांश्चापि पारयेत्, या च शरणरूपा (स्यात्) ॥ १२ ॥

भावार्थः ।

हे अग्नि ! (आप) हमारे घरके मनुष्यों के लिये और रथीयोधा के लिये ऐसी नाव को दें जिस के चप्पे सदा चलते रहें और जो पैरों वाली हो, हमारे वीरों को और हमारे धनी मनुष्यों कोभी पार लंघावे और जो शरण रूप (हो) ॥ १२ ॥

अग्निर्देवता त्रिष्टुप् छन्दः ११।११।११।११

अभीनो अग्नउक्थमिज्जुगुर्या
द्यावाक्षामासिन्धवश्चस्वगूर्ताः ।
गव्यंयव्यंयन्तोदीर्घाहेषंवरमरुण्यो
वरन्त ॥१३॥

अभि	अभि+	–
नः	अस्माकम्	हमारे
अग्ने	हे अग्ने !	हे अग्नि

उक्थम्	स्तोत्रम्	स्तोत्र को
इत्	(पूरणः)	–
जुगुर्याः	अभि+जुगुर्याः, प्रोत्साहय	खूबउत्साहितकरो
द्यावाक्षामा	द्यावापृथिव्यौ	द्यौ और पृथिवी
सिन्धवः	नद्यः	नदियाँ
च	च	और
स्वऽगूर्ताः	स्वयमेवगामिन्यः	स्वयं चलने वाली
गव्यम्	गवादिपशुम्	गौ आदि पशु को
यव्यम्	यवादिधान्यम्	जौ आदि धान्यक
यन्तः	प्रापयन्त्यः	प्राप्त कराती हुई
दीर्घा	दीर्घाणि	लंबे

अह्ना	अहानि	दिनों को
इषम्	बलम्	बल को
वरम्	वरणीयम्	उत्तम को
अरुणय:	उषसः	उषाएँ
वरन्त	वृण्वन्तु	वरें

संस्कृतार्थः।

हे अग्ने! अस्माकं स्तोत्रं प्रोत्साहय, द्यावापृथिव्यौ स्वयंगामिन्योनद्यश्च (अस्मान्) गवादिपशुं यवादिधान्यं दीर्घायुः (च) प्रापयन्तु, उषसः (अस्मदर्थम्) बलं वरणीयम् (पदार्थंच) वृण्वन्तु ॥ १३ ॥

भापार्थः।

हे अग्नि! हमारे स्तोत्र को उत्साहित करो, द्यावापृथिवी और स्वयं चलने वाली नदियाँ (हम को) गौ आदि पशु, यव आदि अनाज और लम्बा आयु प्राप्त करावें, उषाएँ (हमारे लिये) बल को (और) वरने योग्य (पदार्थ) को वरें ॥ १३ ॥

इति चत्वारिंशदुत्तरशततमं सूक्तम्।